महामात्य चाणक्य



पांडुलिपि प्रकाशन
ई-11/5, कृष्णनगर दिल्ली-110051

श्रीशरण



महामात्य चाणक्य

मूल्य साठ रुपये
प्रथम संस्करण 1988
प्रकाशक हरीराम द्विवेदी
पांडुलिपि प्रकाशन
ई 11/5 कृष्णनगर, दिल्ली 110051
मुद्रक मानस प्रिंटिंग प्रेस 9/4753, गांधीनगर दिल्ली 31

MAHAMATYA CHANAKYA
SHRI SHARAN
Rs 60 00

1111
2514192

एक

केसरी द्रुतगति से चलता हुआ सहसा रुक गया। दिवस का अवसान समीप था। सूर्यदेव अपनी किरणो को समेट कर वृक्षो की चोटियो पर से होकर पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान कर रहे थे। महामात्य शकटार ने केसरी को गन्तव्य पथ की ओर बढने का सकेत किया, पर वह मूक पशु केवल हिनहिना कर रह गया। महामात्य शकटार ने इधर उधर दृष्टि घुमायी। फिर केसरी की पीठ से उतर कर, लगाम थामे उस ओर को बढ गए जिधर एक काला विशालकाय मानव कुशाओ के झुण्ड को उखाड-उखाड कर उनकी जडो को मटठे से भर रहा था। उसका ऐसा करन का अभिप्राय उन कुशाओ की जडो को चीटियो को खिलाकर समूल नष्ट करना था। उस विशालकाय मानव की आकृति अधकार के आवरण मे और भी भयावह हो उठी थी। उसका काला और भद्दा चेहरा मोटे मोटे अधर, बडी बडी अगारे उगलती आँखें, अधरो से बाहर निकले हुए न्यूनाधिक दत, गजशुण्ड के समान काली बलिष्ठ भुजाए। महामात्य शकटार खडे खडे उसे देखते रहे और वह विशालकाय मानव अपना काम करता रहा।

इस अवस्था मे महामात्य शकटार के कुछ क्षण बीते। केसरी हिनहिनाया। उस विशालकाय मानव ने उस ओर मुड कर देखा।

'भद्रपुरुष !' महामात्य शकटार के मुख से निकला—'इस कामल कुशा ने आपका क्या अहित किया है, जो आप कोपमुद्रा मे इसे समूल नष्ट कर रहे हैं?'

उस विशालकाय मानव ने आक्षेप करने वाले को कठोर दृष्टि से देखा, किंतु उस महाशय की राजसी वेशभूषा और शालीनता ने उस

दृष्टि को स्थिर नहीं रहने दिया। कठोरता का स्थान मधुर मुसकान ने ले लिया। उसने प्रत्युत्तर में कहा— आर्य ! पैर में इस कुशा से मुझे जान मात्र से मेरा अनिष्ट हुआ है। अत मैं इसे समूल नष्ट करके ही चैन की साँस लूँगा।'

महामात्य शकटार उस विशालकाय मानव के उत्तर को सुनकर कुछ सोच में पड गए और वह स्वयं भी अपने कार्य में जुट गया।

महामात्य शकटार सोच रहे थे कि ऐसा ही मानव राजनीति उथल-पुथल में बहुत लाभदायक सिद्ध हो सकता है। वे स्वयं पाटलिपुत्र राज्य के महामात्य होते हुए भी नवनंद वंश नरेश धननन्द की क्रोधी और अविचल प्रकृति से आशंकित रहा करते थे। अत उन्होंने उस विशालकाय मानव से घनिष्ठता बढ़ाने के अभिप्राय से कहा—'आपका परिचय।

इन शब्दों को सुनकर उस विशालकाय मानव ने अपना मुख मोड़ा और गम्भीर मुद्रा में कहा—'क्रोधी ब्राह्मण !'

'इतना परिचय पर्याप्त नहीं भद्रपुरुष !' महामात्य शकटार ने कहा— आप सरीखे शिष्ट व्यक्ति से सम्बन्ध बनाना चाहता हूँ।'

सम्बन्ध !' उस विशालकाय मानव के मुख से निकला। खुरपा चलाते चलाते उसके हाथ रुक गए। विचार द्वन्द्वमय हो उठे। मैं एक साधारण ब्राह्मण और यह राजसी पुरुष। दोनों में आकाश पाताल का अन्तर। फिर घनिष्ठता बढाने का कारण क्या हो सकता है क्या इसके पीछे कोई राजनीति ? इस विचार के कौंधते ही अधरों पर मुसकान फैल गई। विचारों का द्वन्द्व शिथिल पड गया। अधरों ने अपनी क्रिया की और स्वर दंतों की पंक्ति को चीरता हुआ निकला— आर्य ! पहले आप अपना परिचय दें।

मैं पाटलिपुत्र राज्य का महामात्य शकटार हूँ। इधर राज्य की गतिविधि का निरीक्षण करता हुआ निकल आया था। महामात्य शकटार ने अपना परिचय दिया।

वह विशालकाय मानव अपने सामने खडे महामात्य शकटार को कुछ क्षण तक शान्त मुद्रा से देखता रहा। फिर बोला मेरा नाम विष्णुगुप्त चाणक्य है। हरिपुर की पहाडियों में मेरी छोटी सी कुटिया थी। पठन-

पाठन के द्वारा अपना और बेटी का पेट पालता था। मेरे शिष्य गुरुदेव कौटिल्य के नाम से मुझे पुकारते थे।'

गुरुदेव कौटिल्य का नाम महामात्य शकटार ने सुन रखा था। वास्तविकता को छिपाते हुए बोले—'क्या हरिपुर से ?'

महामात्य शकटार केवल इतना ही कह सके थे। तभी विष्णुगुप्त चाणक्य ने कहा— जिस राज्य मे ब्राह्मण की बेटी को भी डाकू उठाकर ले जाएँ, उसको छोड देने मे ही हित है।'

'क्या महाराज पवतक न आपकी बेटी के लिए कुछ नही किया ?' महामात्य शकटार ने प्रश्न किया।

'उस पाखण्डी को सुरा और सुन्दरी ' कहते कहते विष्णुगुप्त चाणक्य की भकुटी तन गई। वाक्य अधूरा ही रह गया।

ओह !' महामात्य शकटार के मुख से निकला—'आप चिन्ता त्याग दीजिए। मैं आपकी पुत्री को अवश्य ढूढ निकालूगा। क्या नाम था उसका ?'

'माया !' विष्णुगुप्त चाणक्य ने सक्षिप्त सा उत्तर दिया।

'अब भविष्य की रूपरेखा तो आपने स्थिर की होगी।' महामात्य शकटार ने प्रश्न किया।

'भविष्य की रूपरेखा !' विष्णुगुप्त चाणक्य का भयकर अट्टहास पाटलिपुत्र के उस निजन कानन मे गूज उठा।

भविष्य बनाया नही जाता स्वय बन जाता है आय !' विष्णुगुप्त चाणक्य ने कहा।

'क्या आप मेरा प्रस्ताव स्वीकार करेंगे ?' महामात्य शकटार ने पूछा।

'उचित हुआ तो।' विष्णुगुप्त चाणक्य ने कहा।

'आप हमारे महाविद्यालय मे अध्यापन काय करें।' महामात्य शकटार ने कहा—'इस महाविद्यालय मे देश विदेश से आए बहुत से शिक्षार्थी शिक्षण पा रहे हैं। उन्हे शास्त्रो के ज्ञान के साथ साथ धनुष, खड्ग, भाला और पटा आदि की शिक्षा भी दी जाती है।'

विष्णुगुप्त चाणक्य महामात्य शकटार के इस प्रस्ताव को अस्वीकृत

न कर सके। वे उनके साथ ही लौट आए।

महामात्य शक्टार ने महाविद्यालय म विष्णुगुप्त चाणक्य को उनका पद सौंप दिया। अय शिक्षको से उनका परिचय कराने के बाद वे अपने आवास पर लौट आए।

दो

रात्रि का प्रथम पहर बीत रहा था। महामात्य शटकार शय्या पर लेटे करवटें बदल रहे थे। निद्रा उनकी आंखो से कोसो दूर थी। पत्नी और बच्चे दूसरे कक्ष म विश्राम कर रहे थ। आज अधिक लम्बी यात्रा करने से उनकी देह थक गई थी फिर भी निद्रा । उफ!' उनके मुख से निकला। फिर सोने का प्रयास किया। कुछ क्षणो के लिए आंख लगी। तभी द्वारपाल ने आकर निद्रा को भग कर दिया।

'श्रीमन ! आपको महाराज ने निजी कक्ष मे स्मरण किया है।' द्वारपाल ने अभिवादन के बाद कहा।

'अच्छा। महामात्य शक्टार ने उठते हुए कहा— अभी उपस्थित होता हूँ।'

महामात्य शकटार का उत्तर पाकर द्वारपाल चला गया। उसके जाने के बाद महामात्य शक्टार सोच म पड गए। महाराज का असमय बुलाने का कारण क्या हो सकता है? कही कोई सक्ट ? सहसा विचार कौंधा। पर सध्या समय तक तो सब कुछ ठीक था। सोचते सोचते उन्होने राजसी पोशाक पहनी और कुछ देर बाद वे महाराज धननद के निजी कक्ष म पहुच गए। वहां पर पहुचकर उन्होने देखा कि महाराज मौय सनापति विशालगुप्त और महर्षि कात्यायन के साथ मत्रणा कर रहे हैं। उन्होने राजसी अभिवादन के बाद आज्ञा मांगी।

महाराज धननद ने क्रोध भरी दृष्टि से उन्हें घूरा।

महामात्य शकटार सच्चे देश भक्त थे। वे अपनी सूझ-बूझ से ही इस विशाल साम्राज्य को सम्भाले आ रहे थे। उन्होंने कभी भी महाराज को ऐसा अवसर प्रदान नही किया था जिससे उन्हे कोप का भाजन बनना पड़े। पर आज इस रात्रि की निस्तब्धता मे उन्हे अपने भविष्य का तारा डूबता हुआ दिखलायी पडने लगा।

महाराज घनन्द का कर्कश स्वर उनके कानो मे पडा—'महामात्य शकटार! निजी कक्ष मे इस समय स्मरण करने का कारण जानते हो।'

'नही, महाराज!' महामात्य शकटार ने विनम्र स्वर मे कहा।

'तो जान लो, महामात्य!' महाराज घनन्द ने कहा। और इसके साथ ही एक बण्डल पकडा दिया।

महामात्य शकटार न उस बण्डल को खोल कर देखा। उसम यूनान सम्राट सिकन्दर का पत्र था। उन्होने पढा।

प्यारे दोस्त! आपका दावतनामा हमे मजूर है। हम इसके लिए जल्द ही पहुचेंगे।

—सिकन्दर

इतना बडा लाछन उनकी देशभक्ति पर। व सहन न कर सके। उनकी नासिका क्रोध से फुकार उठी। अधर फडफडाने लग। हाथो मे कम्पन हुआ और पत्र निजी कक्ष के फश को चूमने लग गया।

महामात्य शकटार को कुछ क्षण सम्भलने मे लगे। फिर सयत स्वर मे बोले—'महाराज! यह किसी शत्रु का षडयन्त्र है। मुझ जैसे देशभक्त का यह घिनौना कृत्य नही हो सकता।'

'इसका प्रमाण!' महाराज घनन्द ने उसी क्रोप मुद्रा मे कहा।

षड्यन्त्र...!' कहते कहते रुक गए महामात्य शकटार।

हम जानना चाहते हैं उसके विषय म।' महाराज घनन्द न कहा।

'षडयन्त्र के विषय मे इस समय तो कुछ नही कहा जा सकता, महाराज!' महामात्य शकटार ने विनम्र स्वर म कहा।

तो फिर!' महाराज घनन्द के मुख से निकला।

'थोडा अवसर दीजिए, महाराज!' महामात्य शकटार ने कहा।

'असम्भव!' महाराज घनन्द ने कहा—'इसकी छान-बीन तो अब

महर्षि कात्यायन करेंगे और राज्य के इस महामात्य पद को भी वे ही सम्भालेंगे।'

महाराज के इस कथन को सुन कर महामात्य शकटार के पैरों के नीचे से धरती निकल गई। उनके मुख से निकला—'महाराज!'

इसके आगे महामात्य शकटार कुछ न कह सके। उनके हृदय की बात अधरों में ही अटक कर रह गई।

मौर्य सेनापति विशालगुप्त! महाराज घननन्द का स्वर उभरा।

'आज्ञा कीजिए महाराज!' मौर्य सेनापति विशालगुप्त ने कहा।

इस देशद्रोही को बन्दी बना कर बन्दीगृह में डाल दो। आदेश देकर महाराज घननन्द शयनकक्ष की ओर बढ़ गए।

मौर्य सेनापति विशालगुप्त ने तत्काल महाराज की आज्ञा का पालन किया।

देशभक्त शकटार के करों में लौह शृंखलाएं चमक उठीं।

तभी प्रभात का तारा डूब गया।

तीन

आचार्य चाणक्य ने अपने आसन पर विराजते हुए कहा—'शिष्यो! आपके इस महाविद्यालय में मेरा पहला दिन है। आज मैं आप लोगों को नई बात बतलाने जा रहा हूँ। देश में एक आंधी चल रही है।'

'आंधी!' एक शिष्य ने दुहराया।

कैसी आंधी गुरुवर?' दूसरा शिष्य बोल पड़ा।

'वत्स! कहने वाले तो इस आंधी को धर्म की आंधी कहते हैं।

और आप! तीसरे शिष्य ने प्रश्न किया।

'मैं इसे अधर्म की आंधी कहता हूँ, वत्स!' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'नव धर्म के पुजारी कहते हैं कि काम, क्रोध, लोभ मोह और अहंकार

मानव के प्रबल शत्रु हैं। इन्हें त्यागने मे ही उसका कल्याण है। पर मैं इस कथन को निराधार मानता हूँ। मेरी दृष्टि म काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहकार मानव के शत्रु नही हैं। इनके त्यागन मे मानव का कल्याण नही है।'

'क्यो गुरुदेव ?' किसी शिष्य ने प्रश्न किया।

'इसलिए, वत्स !' आचाय चाणक्य वोले—'इनका त्यागना मानव के लिए असम्भव है। जो लोग इन्ह त्यागने का उपदेश देते हैं, वे पाखण्ड करत हैं।'

'वह कैसे गुरुवर ?' चन्द्रगुप्त ने पूछा।

आचाय चाणक्य ने उस युवक को बडे ध्यान से देखा। फिर पूछा—'तुम्हारा परिचय, वत्स !'

आपका परमशिष्य गुरुवर !' चन्द्रगुप्त ने कहा।

आचाय चाणक्य विमुग्ध दृष्टि से दखत हुए सोचत रहे उस सबल, सुगठित, गौरवण युवत और प्रतापी युवक के विषय मे।

गुरुवर !' एक शिष्य न उठते हुए कहा—मैं देता हू अपने इस मित्र का परिचय। ये हैं मौय सनापति विशालगुप्त के पुत्र चन्द्रगुप्त ! ये इस छोटी सी अवस्था मे ही शस्त्र और शास्त्र दोनो मे दक्ष हैं। इनकी विद्वत्ता और लगन स सभी आचाय प्रसन्न हैं।'

'बस बस रहने दे जीवसिद्धि !' चन्द्रगुप्त न हाथ जोडकर कहा—'गुरुवर ! इस वाचाल की बातो पर ध्यान मत दीजिए।

'पर मैं तो गुरवर इनका भविष्य भी जानता हूँ।' एक शिष्य ने अपनी अगुलियो पर गणित लगाते हुए कहा।

चन्द्रगुप्त को सुन कर हसी आ गई, बोले—'ज्योतिषी पालक महाराज ! मेरे भविष्य की चिन्ता छोड कर गुरुवर की बात सुनिए। इसी मे हम सब का कल्याण है।'

'कल्याण बाप रे बाप !' पालक के मुख से निकला।

इतना सुनते ही सबका हास्य फूट पडा।

उन्हे शान्त करते हुए आचाय चाणक्य ने कहा, काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहकार को त्यागने से मानव, मानव नही रह जाएगा।'

'तो फिर, गुरुवर !' चन्द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

'वह पत्थर बन जाएगा।' आचार्य चाणक्य ने गम्भीर मुद्रा में कहा, 'आवश्यकता केवल इस बात की है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार को देश और जाति के कल्याण के लिए, इस जगत के हित के लिए प्रयोग में लिया जाए।'

'वह कैसे गुरुवर ?' चन्द्रगुप्त ने फिर पूछा।

'वत्स ! यदि क्रोध उत्पन्न हुआ है तो देश, धर्म और मानवता के शत्रुओं के विरुद्ध उसे प्रयुक्त करके उन्हें विनिष्ट कर दिया जाए ! यदि ।'

इसी तरह आचार्य चाणक्य कहते चले गए। सभी शिष्य मन्त्र मुग्ध होकर सुनते रहे। तभी दूर पूर्व में एक घनघोर घटा उठी और देखते ही देखते सारे आकाश में छा गई। दिवस का प्रकाश अन्धकार में परिवर्तित हो गया। मेघ गरजे। तेज हवा हू हू करती रही। तीव्र वर्षा होने लगी।

आचार्य चाणक्य ने बिजली भरे आकाश की ओर देखा। वे देखते रहे। उन्हें लगा आकाश, कजरारे मेघ, बिजली सब को निगल जाएँगे। इसके साथ ही उनके मुख से निकला 'बस आज इतना ही।'

चार

समय का चक्र घूमता रहा।

आचार्य चाणक्य अपने इस महाविद्यालय में अपने शिष्यों को आचार और व्यवहार की नीति समझाते रहे। अर्थशास्त्र और राजनीतिशास्त्र में उन्हें पारंगत करते रहे। उनके नीति के उपदेशों से शिष्य वर्ग प्रभावित होता चला गया। इस तरह वे अपने लक्ष्य में सफल होते जा रहे थे।

आचार्य चाणक्य के शिष्यों में राजपुत्री सुनन्दा भी थी। वह उनके परम शिष्य चन्द्रगुप्त पर मोहित थी। इन दोनों का प्रणय गुरुदेव से

छिपा नही था, फिर भी वे दोनो के बीच आडे नही आए। उनके लिए तो चन्द्रगुप्त कुछ और ही था। उसे लक्ष्य का प्रतीक मान कर ही वे चल रहे थे। इसी कारण वह आचार्य चाणक्य की विशेष कृपा का पात्र था।

एक दिन आचार्य चाणक्य विचार मग्न बैठे थे। तभी चन्द्रगुप्त ने आकर पुकारा 'गुरुदेव !'

तभी आचार्य चाणक्य की तन्द्रा टूटी। वे चन्द्रगुप्त की ओर देख कर बोले 'वत्स !'

चन्द्रगुप्त ने गुरुदेव के चरण स्पर्श कर कहा, 'गुरुदेव ! मैं आप से परामर्श लेने आया था।'

'परामर्श !' आचार्य चाणक्य के मुख से निकला।

'हाँ, गुरुदेव ! चन्द्रगुप्त ने कहा, 'देवी सुनन्दा ।'

'क्या हुआ देवी सुनन्दा को ?' आचार्य चाणक्य ने आश्चर्य मिश्रित स्वर मे पूछा।

'कुछ नही, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'वह राजप्रासाद मे अध्यापन के लिए विवश कर रही है।'

'हूँ', आचार्य चाणक्य बोले, 'तो तुम्हे मेरी अनुमति चाहिए। वह मिल जाएगी, वत्स !'

'पर, गुरुदेव !' कहता कहता रुक गया चन्द्रगुप्त।

'स्पष्ट कहो।' आचार्य चाणक्य बोले।

'इससे मेरे अध्ययन मे विघ्न पड सकता है। और कही कुछ गडबड ।' चन्द्रगुप्त ने कहा।

'वत्स ! विद्यादान सब से बडा दान है।' आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त की पीठ पर हाथ रखते हुए कहा, 'गडबड की आशंका का भय निर्मूल है वत्स ! इसके लिए साम्राज्ञी की अनुमति ली जा सकती है।'

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त चलने के लिए उद्यत हो गये।

'कल्याण हो !'

आचार्य चाणक्य का आशीर्वाद पाकर जैसे ही चन्द्रगुप्त बाहर निकले वैसे ही सुनन्दा ने पास आकर पूछा, 'क्या गुरुदेव से आज्ञा मिल गई ?'

'तुम्हे कैसे पता !' चन्द्रगुप्त ने आश्चर्यचकित होकर पूछा।

आप हर काय को जो गुरुदेव से पूछ कर करत हैं।' सुनन्दने मुस्करा कर उत्तर दिया।

'ओह !' चन्द्रगुप्त के मुख से निकला, 'वैसे तो मुझे तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार है पर ।'

इस स्वीकृति मे भी शत।' सुनन्दा ने खिन्न स्वर मे कहा।

'हाँ ! वह तो तुम्हे पूरी करनी ही होगी।' चन्द्रगुप्त ने कहा।

'वह क्या ?'

'अध्यापन के लिए साम्राज्ञी की अनुमति।'

'वह भी मिल जाएगी।' सुनन्दा ने कुछ सोच कर कहा, 'और कुछ ?'

'अध्यापन के समय तुम्हारी प्रिय सखियो का होना भी आवश्यक है।' चन्द्रगुप्त ने दूसरी शत रख दी।

राजकुमारी सुनन्दा इस शत को सुन कर थोडी भडकी, बोली, यह असम्भव है। इससे अध्यापन काय म विघ्न पड सकता है।'

'असम्भव को सम्भव करना तुम्हारा काम है, सुनन्दा !' चन्द्रगुप्त ने कहा।

विवश होकर सुनन्दा को दूसरी बात भी माननी पड गई।

चन्द्रगुप्त ने साम्राज्ञी की अनुमति से राजकुमारी सुनन्दा के शिक्षण का भार अपने कधो पर ले लिया।

उनका कायक्रम नित्य सुचारू रूप से चलने लगा। इससे राजकुमारी सुनन्दा को अध्ययन का तो विशेष लाभ नही हुआ, परन्तु प्रणय गाथा के सूत्र को बढाने का अवसर अवश्य हाथ लग गया। इस बीच राजकुमारी सुनन्दा ने अपने अनुराग को चरम सीमा तक पहुँचाने का प्रयास किया, किन्तु चन्द्रगुप्त स्वामी सेवक सम्बध होने के कारण उसस कटते ही रहे। इतना ही नही उन्होने अपने आदर्शों के द्वारा राजकुमारी सुनन्दा को सुधारने का प्रयास किया पर सफल न हो सके। चन्द्रगुप्त जितना उसस दूर भागने का प्रयास करते, उतना ही राजकुमारी सुनन्दा का अनुराग उनके प्रति बढता जाता।

और एक दिन

राजकुमारी सुनन्दा ने उचित अवसर देख कर चन्द्रगुप्त के सामने अपनी प्रणय गाथा स्पष्ट शब्दो मे कह डाली, 'मैं आपके साथ प्रणय सूत्र में बंधना चाहती हूँ। मेरा प्रेम सात्विक है, चन्द्र !'

'प्रणय सूत्र !' चन्द्रगुप्त के मुख से निकला।

'हाँ, चन्द्र !' राजकुमारी सुनन्दा ने लजाते हुए कहा।

'पर मेरे लिए यह असम्भव है, राजकुमारी !'

'ऐसा न कहो, चन्द्र !'

'राजकुमारी सुनन्दा !' चन्द्रगुप्त ने गम्भीर मुद्रा में कहा, 'विवाह सम्बन्ध बराबर वालो से जोड़े जाते हैं।'

'पर प्रेम ऊँच नीच पर विचार नही करता, चन्द्र !' राजकुमारी ने निडरतापूर्वक उत्तर दिया।

'तनिक सोचो, राजकुमारी ! तुम एक साधारण सेनापति के पुत्र के साथ प्रणय-बंधन ।' कहते कहते रुक गया चन्द्रगुप्त।

'आप जो कुछ भी हो, मेरे हो चन्द्र !' राजकुमारी सुनन्दा ने आलिंगनबद्ध होते हुए कहा।

'महाराज इस संबंध को कभी स्वीकार नही करेंगे, राजकुमारी !' चन्द्रगुप्त ने स्वयं को छुड़ाते हुए कहा।

'उनकी स्वीकृति लेना मेरा काम है।' राजकुमारी सुनन्दा ने दृढता के साथ कहा, 'इससे पूर्व आपकी स्वीकृति चाहिए।'

'मुझे भय है, राजकुमारी सुनन्दा !'

'भय किस बात का ?'

'हम दोनो के बीच आकाश-पाताल का अंतर है। तुम इस विशाल साम्राज्य की राजकुमारी हो। तुम्हारा यौवन पुष्प राज प्रासादो के उद्यानो में खिला है। अब उसे साधारण सेनापति का आवास रास नही आएगा।'

'ठीक कहते हो चन्द्र !' राजकुमारी सुनन्दा ने निर्निमेष नेत्रो से चन्द्रगुप्त की ओर देख कर कहा, 'पर मैं शुद्ध लौकिक प्रेम मे समस्त इस विशाल साम्राज्य को तुच्छ समझती हूँ।'

'राजकुमारी सुनन्दा ! इतना भावावेश मे आना उचित नहीं। यह

लौकिक प्रेम की ग्रन्थियाँ बस दो बस ही अच्छी लगती हैं। इसके बाद दीर्घ जीवन रह जाता है पश्चात्ताप के लिए।' चन्द्रगुप्त ने समझाने का प्रयास करते हुए कहा 'मैं नहीं चाहता कि मेरे कारण तुम्हारा आह्लाद-पूर्ण जीवन कण्टकमय बने। वैसे ।'

'वैसे क्या ?' राजकुमारी सुनन्दा ने उद्विग्न स्वर में पूछा।

'तुम्हारी यह उदार प्रीति ही मेरे लिए पर्याप्त है।' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया।

'आपका कथन सत्य हो सकता है।' राजकुमारी सुनन्दा ने उदासीनता भरे स्वर में कहा, 'पर आपकी पीछे कही गई बातों से तो मानसिक प्रहार हो रहा है।'

'पर मेरा ऐसा करने का अभिप्राय कदापि नहीं था।'

'तो इसके पीछे वास्तविकता क्या है ?'

'वास्तविकता !'

'हाँ, स्पष्ट कहिए।'

'क्षमा कीजिएगा, मेरे लिए यह छोटा मुह बड़ी बात होगी।'

'फिर भी निःसकोच कहिए।'

'तो सुनिए !' चन्द्रगुप्त ने गम्भीर स्वर में कहा, 'तुम्हारे प्रपितामह जी नापित थे। इसलिए तुम्हारे साथ विवाह सम्बन्ध हो जाने से सामाजिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। और इस रूप में भी साम्राज्य का अधिकारी न बनकर केवल सेनापति मात्र ही बना रहूँगा तथा मेरे परिजन मुझसे सम्बन्ध न रख सकेंगे।'

'यह सत्य होते हुए भी आपका आक्षेप निर्मूल ही है, क्योंकि राजा, शूर कुलीन और सेनापति इन सबकी गणना श्रेष्ठ क्षत्रियों में की जा सकती है।' राजकुमारी सुनन्दा ने कहा 'इसके लिए शुद्ध स्नेह को नहीं ठुकराना चाहिए।'

'मैं अपने शब्दों को वापस लेता हूँ।'

'और कुछ ।' इन शब्दों के साथ ही राजकुमारी सुनन्दा के अधरों पर मुस्कान छा गई।

'तुम्हारे में जो अभिमान की पुट है, वह कभी भी ।' कहते-कहते

रुक गया, चन्द्रगुप्त !

'अभिमान !' राजकुमारी सुनन्दा ने दुहराया, 'यह दोष मुझमे नहीं है। यदि न्यूनाधिक होगा भी तो भविष्य मे तुरन्त त्याग दूंगी।'

'यह तो ठीक है, पर ।'

'फिर पर का रोग लग गया।'

'विवश हूँ, राजकुमारी।' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'हमारी आर्थिक स्थितियो मे भी आकाश पाताल का अन्तर है। मेरे साथ तुम्हारा जीवन विषमय बन जायेगा।'

'इसकी चिन्ता आप को नही, मुझे करनी चाहिए।' राजकुमारी सुनन्दा ने कहा, 'मैं आपके साथ कटीली राह को भी प्रसन्नता से पार कर सकती हूँ। इसके अतिरिक्त और कोई शका हो तो बताओ।'

'और शका क्या हो सकती है ?

'मैं आपकी सभी शकाओ का समाधान करने का प्रयास करूँगी।' राजकुमारी सुनन्दा के स्वर मे दृढता थी, 'अब आप मेरे प्रस्ताव को ठुकरायेंगे नही।'

राजकुमारी सुनन्दा ने ये शब्द कहे ही थे कि सेविका ने अभिवादन के बाद निवेदन किया, 'राजकुमारी जी ! महाराज, भोजन-कक्ष मे आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

'आती हूँ।' राजकुमारी सुनन्दा ने उत्तर दिया।

सेविका उत्तर पाकर चली गई।

तभी चन्द्रगुप्त ने भी प्रस्थान के लिए अनुमति माँगी।

राजकुमारी सुनन्दा चन्द्रगुप्त को विदा करके भोजन-कक्ष मे पहुँची।

पांच

राजमाता ! सेवक उपस्थित है।' चन्द्रगुप्त ने साम्राज्ञी के विशाल कक्ष मे प्रवेश करके राजसी अभिवादन के बाद कहा।

साम्राज्ञी की तन्द्रा भग हुई। उन्होने अपने सामने मौर्यवशी सुन्दर युवक को खडे हुए देखा। उनका मन सोच म डूब गया, क्या सुनन्दा की प्रिय सखी का लगाया हुआ दोष सत्य हो सकता है ? तभी हृदय ने उत्तर दिया कि यह सम्भव हो सकता है कदाचित् मौर्यकुमार ने इसी प्रकार से इस विशाल साम्राज्य को पाने की सोची हो ? क्या मौर्यकुमार की आसक्ति इस राज्य के ही बल पर तभी वे चीखीं 'नहीं, नही, ऐसा कदापि नही हो सकता।'

'राजमाता ! आपकी मन स्थिति ।' कहते कहते रुक गया चन्द्रगुप्त।

'हाँ, मौर्यकुमार ! आज कुछ शकाओ के कारण मेरा मन अस्वस्थ सा है। उन्ही के समाधान हेतु तुम्हें यहा बुलाया है।' साम्राज्ञी ने गहरी दृष्टि से चन्द्रगुप्त की ओर देखा।

'आज्ञा कीजिए राजमाता !' चन्द्रगुप्त ने कहा।

'राजकुमारी सुनन्दा और तुम !' साम्राज्ञी इतना ही कह सकी।

चन्द्रगुप्त को इस प्रकार के प्रश्न की स्वप्न म भी आशा नही थी। साम्राज्ञी के मुख से ऐसा प्रश्न सुन कर वे कुछ देर के लिए स्तब्ध रह गये।

तभी साम्राज्ञी ने पुन कहा 'मौर्यकुमार ! क्या यह सच है कि तुम्हारा स्नेह कलुषित ?'

साम्राज्ञी अपना कथन पूरा भी नही कर पायी थी कि चन्दगुप्त का चेहरा तमतमा उठा।

'राजमाता ! इतना भयकर आरोप राजकुमारी पर न लगाइए।' चन्द्रगुप्त उत्तेजना के स्वर मे बोले, 'वह मानवी नही अपितु देवी हैं।'

'यदि यह सच है तो तुम फिर अपना सम्बन्ध बताते हुए क्यो झिझक रहे हो ?' साम्राज्ञी ने प्रश्न किया।

यदि आप हमारा सम्बन्ध जानना ही चाहती हैं, तो सुनिए।' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'मेरा और उनका सम्बन्ध स्वामी और सेवक का रहा है। इसके अतिरिक्त और किसी तरह के विचार मेरे मस्तिष्क में ही नहीं उठे।'

'विश्वास किया जाए इन शब्दों पर?'

'अवश्यमेव राजमाता!'

'क्या तुम उन सम्भाषणों को दुहरा सकते हो?' साम्राज्ञी ने कहा, 'राजकुमारी सुनन्दा के साथ जो एकान्त में हुए थे।'

'आप इस सम्बन्ध में राजकुमारी से ही पूछें, तो ठीक रहेगा।' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'मुझ में उन सम्भाषणों को दुहराने की क्षमता नहीं है, राजमाता!'

'स्पष्ट है कि तुम बतलाना नहीं चाहते।'

'किसी दूसरे का भेद खोलना मेरे सामर्थ्य के बाहर है, राजमाता!'

'ठीक है, तुम जा सकते हो।'

'जो आज्ञा!' कह कर चन्द्रगुप्त राजसी अभिवादन कर अपने गन्तव्य स्थान की ओर प्रस्थान कर गये।

साम्राज्ञी कुपित मुद्रा में मौर्यकुमार को तब तक देखती रहीं जब तक कि वे उनकी आँखों से ओझल नहीं हो गये। इस विचित्र घटना ने उनके मस्तिष्क को मथ डाला। राजकुमारी सुनन्दा की प्रिय सखी के कुछ शब्द ही उनकी सुख शांति में चिंगारी छोड़ गए। वे स्वर्णासन छोड़ शय्या पर आ गईं। वे लेटे हुए कक्ष की कड़ियों को गिनने लगीं।

तभी वे किसी के कोमल स्पर्श से चौंक उठीं। देखा उनकी लाडली बेटी सुनन्दा खड़ी मुस्करा रही है।

'आओ बेटी!' साम्राज्ञी ने चिन्ताओं को समेटते हुए कहा।

राजकुमारी सुनन्दा अपनी माता के पास बैठ गईं।

'बेटी!' साम्राज्ञी ने राजकुमारी सुनन्दा के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा 'मौर्यकुमार का अध्यापन कार्य कैसा चल रहा है?'

'मौर्यकुमार की ओर से तो ठीक ही चल रहा है, माताजी!' राजकुमारी सुनन्दा ने कहा, 'लेकिन...।'

सुनन्दा वाक्य को पूरा करती हुई कुछ झिझकी।

'लेकिन क्या बेटी स्पष्ट कहो ?' साम्राज्ञी ने सुनन्दा के चेहरे का अध्ययन करते हुए कहा, 'मैं तुम्हारी माता हूँ। यदि तुम मुझसे ही छिपाओगी तो कहोगी किससे ?'

साम्राज्ञी के ये शब्द सुनन्दा का सम्बल बन गए। झिझक का आवरण पानी पर जमी काई की तरह फटता चला गया। वह बोली, 'चन्द्रगुप्त, मेरे आराध्य है। मैं उनसे विवाह ।'

सुनन्दा !' चीख उठी साम्राज्ञी, 'यह क्या कह रही है तू ? एक सेनापति के पुत्र से नवनन्द वंश की राजकुमारी का विवाह ! इस इच्छा को त्याग दे। यह कभी भी पूर्ण होने वाली नही है।'

'माता ! आपकी ओर से ऐसे उत्तर की आशा स्वप्न में भी नहीं थी।' सुनन्दा ने कहा 'मुझे विश्वास था कि आप ।

यही कि मैं भारतीय सभ्यता के प्रतिकूल चलकर तेरा साथ दूंगी। साम्राज्ञी ने भावावेश मे कहा।

'आप साथ दें या न दें किन्तु मैं अपने निर्णय से पीछे नहीं हट सकती।' सुनन्दा ने दृढ स्वर मे कहा।

साम्राज्ञी सुनन्दा के स्वभाव से परिचित थी। समझाने का प्रयास करती हुई बोली बेटी ! चन्द्रगुप्त किसी बात मे भी तुम्हारे योग्य नहीं ! विवाह ही करना चाहती हो, तो किसी राजकुमार को चुन लो। उस चयन पर मेरी स्वीकृति होगी। इसका मैं विश्वास दिलाती हूँ।'

विवाह गुड्डे गुड़ियो का खेल नहीं बल्कि सारे जीवन का प्रश्न है।' सुनन्दा ने भावावेश मे कहा, 'फिर मैं राज्य साधन के कारण अपने विचार परिवर्तित नही कर सकती हूँ।'

यदि चन्द्रगुप्त इस विवाह के लिए उद्यत न हो, तब ?' साम्राज्ञी ने दूसरा पासा फेंका।

'उनकी ओर से आप निश्चिन्त रहे।' सुनन्दा ने उत्तर दिया, 'उनकी स्वीकृति मुझ पर छोड़िए।'

सुन कर साम्राज्ञी कुछ सोच मे पड गई।

'क्या सोच रही हैं आप ? सुनन्दा ने साम्राज्ञी को चिन्तित मुद्रा मे देख पूछा।

'महाराज !' साम्राज्ञी के मुख से निकला, 'वे इस सम्बन्ध के लिए कदापि तैयार नहीं होंगे।'

'यदि आप अपनी बेटी का जीवन चाहती हैं, तो इस सम्बन्ध की स्वीकृति दिलानी होगी।' सुनन्दा ने कहा।

'तो तेरा यह अन्तिम निर्णय है ?' साम्राज्ञी ने कहा।

'हाँ !' सुनन्दा के स्वर में दृढ़ता थी।

'अच्छा, बेटी !' साम्राज्ञी ने कहा, 'यदि तेरी ऐसी ही इच्छा है, तो महाराज से इसकी स्वीकृति दिलाने का प्रयास करूँगी।'

'सच !' कहकर सुनन्दा साम्राज्ञी से लिपट गई।

'साम्राज्ञी ने अपने हृदय की कसक को निकालकर सुनन्दा को वक्षस्थल से लगा लिया।

छह

पाटलिपुत्र के बन्दीगृह का द्वार खुला। तभी रात्रि के दूसरे पहर का घण्टा बजा। शिला पर बैठे हुए शकटार ने देखा—सेवक मशाल हाथ में लिए उनकी ओर आ रहा था। उसके प्रकाश में उन्होंने देखा—महाराज घननन्द उनके सम्मुख खड़े हुए हैं।

'आप !' शकटार का आश्चर्यमिश्रित स्वर निकला। वे शिला से उठकर खड़े हो गए, बोले, 'अब क्या आज्ञा है ?'

'आज्ञा !' महाराज के मुख से निकला और इसके साथ ही उनका अट्टहास बन्दीगृह की निस्तब्धता को तोड़ गया।

किसी भावी आशंका से शकटार सहम उठे।

'शकटार !' महाराज का स्वर उनके कानों में पड़ा, 'आज हम तुम्हें स्वयं स्वतन्त्र करने आए हैं। महामात्य के लिए यह स्थान उचित नहीं।'

महाराज के इन शब्दों से शकटार के हृदय में शंका की जोंकें चिपटतीं

चली गईं। वे त्रस्त हो उठे।

'महामात्य !' महाराज का स्वर निकला, 'तुम्हारे तीन पुत्र ।'

'महाराज ! मेरे पुत्र ठीक तो हैं ?' बीच म ही बोल उठे शकटार।

'रोग के कारण काल के ग्रास बन गए।' महाराज ने कहा, 'उपचार कराने पर भी हम यमदूत के फद स उन्ह न बचा सके। तुम्हारी अनुपस्थिति म जो कुछ हम कर सकते थे किया पर हम उनके विधाता न बन सके। इसका हमे बहुत दु ख है। इसीलिए हम तुम्हे स्वतत्र करने आए हैं।'

'महाराज ! इस बूढे का शेष जीवन भी यही बीत जाता, तो ठीक था। शकटार का हृदय विदीण हो उठा। पुत्रो के दु खद समाचार ने उनके हृदय को छलनी कर दिया, बोले, अब इस दीपक मे इतना तल शेष नही है जोकि अधिक देर तक जल सके।'

शकटार ! महाराज न कहा 'हम अपने कृत्य पर लज्जित हैं, तुम्हें ब दीगह म डाल कर सबसे बडी गलती की थी। अब उसका प्रायश्चित करने के लिए ही रात्रि के अ धकार म तुम्हारे पास आए हैं।'

प्रायश्चित ! यह क्या कह रह हैं महाराज ?' शकटार ने खून का घूट पीते हुए कहा यह ता, हम जैस तुच्छ मानवा का आभूषण है।'

'नही, शकटार ! अब हम और लज्जित न करो।' महाराज बोले, देश को तुम्हारी आवश्यकता है। महामात्य कात्यायन के सहयोगी बन कर उनका हाथ बँटाओ।

सुनकर शकटार सकत म आ गए।

'सूर्योन्य के साथ ही तुम्ह महर्षि क साथ काम करना होगा। यह हमारी आज्ञा है।' महाराज ने कहा।

'आज्ञा !' शकटार के मुख स निकला।

इनकी बेडियाँ खाल दा !' महाराज ने शकटार के कथन को अनसुना कर कहा, 'य हमारे साथ जायेंगे।'

शकटार का हृदय क्षोभ से भर उठा। उनक अधर कुछ कहन के लिए उद्यत हुए। तभी हृदय न कहा कि पगले, यह समय कुछ कहन सुनने का नहीं है। अवसर को समझ । अन्त मे शकटार को हृदय की बात माननी पडी।

रात्रि के प्रगाढ अंधकार मे सेवक मशाल लेकर आगे बढा। उसके प्रकाश मे महाराज शकटार को लेकर चले गए।

बूढे शकटार ने विधाता की विडम्बना समझ कर महर्षि कात्यायन के अधीन रह कर एक साधारण अमात्य के रूप में कार्य करना आरम्भ कर दिया।

उन दिनो उत्तरी भारत कितनी ही छोटी छोटी रियासतो तथा प्रजातन्त्र राज्यो मे विभाजित था। कुल्लू काँगडा और उसके समीपस्थ क्षेत्रो मे चित्रवर्मा का प्रभुत्व था। वहाँ से लेकर सतलुज और व्यास के किनारे तक मलय देश मे महाराज सिंहगढ का सिक्का चलता था। व्यास और जेहलम के मध्य महाराज पुरु अपनी राजसत्ता जमाए बैठे थे। जेहलम से लेकर तक्षशिला तक आम्भी की तूती बोलती थी। हरिपुर मानसहारा, बालाकोट और इससे ऊपर कोहिस्तान, अफगानिस्तान, खैबर और ताशकन्द के क्षेत्रो म महाराज पर्वतक राज्य करते थे। कश्मीर में पुष्पसेन और इनके अतिरिक्त कितने ही छोटे छोटे प्रजातान्त्रिक राज्य थे।

उधर यूनान नरेश सिकन्दर भारत पर अपना आधिपत्य जमाने का सपना देख रहा था। पारस्परिक द्वेष यूनान सम्राट् के सपने को पूरा करने के लिए पर्याप्त था। बस अब उसे मौके की तलाश थी।

इस तरह समय का चक्र चलता रहा।

इस बीच बूढा शकटार अपने तीन पुत्रो की मौत का कारण महाराज को समझ बैठे। यह वेदना हर क्षण बूढे शकटार को सालती रहती। साथ ही अपमान की ज्वाला भी दिन प्रति दिन उन्हें जर्जर किए जा रही थी। वह अब प्रतिशोध लेना चाहते थे, अपने अपमान का और अपने तीन बच्चो के खून का।

इसके लिए उन्होंने चाणक्य को ही उपयुक्त समझा। कुशा को उखाड़ने की घटना उनकी आँखो के सामने साकार हो उठी। अब वे अवसर की ताक म रहने लगे।

एक दिन वह अवसर भी आ गया।

महाराज ने कृत्या यज्ञ की इच्छा व्यक्त की। उसका आयोजन होने लगा। उसके लिए किसी महर्षि की आवश्यकता महसूस की गई। महाराज

ने इस सम्बन्ध में शकटार से कहा।

शकटार ने यज्ञ के लिए उपयुक्त महर्षि का प्रबन्ध करने का महाराज को आश्वासन दे दिया। वे सीधे चाणक्य के पास पहुंचे, बोले, 'विप्रवर!'

'कहो शकटार!'

'आपको महाराज के यज्ञ-स्थल पर प्रधान ऋत्विज के आसन को सुशोभित करना होगा।'

सुनकर चाणक्य कुछ सोच में पड़ गए।

'सोचिए मत विप्रवर!' बूढ़े शकटार ने कहा, 'इसी में हम दोनों का हित है।'

'हित!' चाणक्य ने दुहराया।

'हां! आप केवल स्वीकृति दे दीजिए।' बूढ़े शकटार के स्वर में अनुनय थी।

चाणक्य ने भी पाटलिपुत्र महाराज के विषय में बहुत कुछ सुन रखा था। अब पास से देखने समझने का अवसर मिल रहा था। सो उनके मुख से निकला 'अच्छा!'

चाणक्य की स्वीकृति पाकर बूढ़ा शकटार गद्‌गद् हो उठे। वे उन्हें यज्ञ-स्थल पर प्रधान ऋत्विज के आसन पर सुशोभित करके स्वयं पाटलिपुत्र से तक्षशिला को प्रस्थान कर गए।

पाटलिपुत्र महाराज यथासमय यज्ञ-स्थल पर पधारे। उन्होंने प्रधान ऋत्विज के स्थान पर कुरूप काला अनिमन्त्रित ब्राह्मण को बैठे हुए देखा। उनकी देह शुष्क पत्ते की तरह कांप उठी। उन्होंने पुकारा, 'शकटार!'

बूढ़ा शकटार वहां उपस्थित नहीं थे। इसलिए वातावरण में निस्तब्धता छाई रही।

'कहां है वो?' महाराज की आवाज फिर गूंजी।

इस बार उपस्थितजनों की आंखें वृद्ध शकटार की खोज में उठ गईं। सेवकों ने उनकी खोज में चप्पा-चप्पा छान डाला, पर वे नहीं मिले।

'धोखा! भयंकर धोखा!!' महाराज चिल्लाये, 'इस कुरूप ब्राह्मण की भारी शिखा पकड़कर यज्ञ-स्थल से बाहर धकेल दो।' कुपित मुद्रा में महाराज ने आदेश दिया।

सेवकों ने महाराज के आदेश का पालन किया।

उस कुरूप ब्राह्मण की बंधी हुई शिखा खुल गई। उसका काला चेहरा क्रोध से तमतमा उठा, तेज स्वर मे बोला, 'अब यह शिखा उसी समय बंधेगी जबकि मैं नवनंद वंश का नाश कर डालूंगा।'

इतना कहकर वह एक ओर को बढ गया।

महाराज ने भी उस कुरूप ब्राह्मण के अभिशाप को सुना और क्रोध पीकर रह गए।

सात

इस घटना को कई मास बीत गए। महाराज के गुप्तचर बूढ़े शकटार और उस कुरूप ब्राह्मण को खोजने मे असफल रहे। कोई न कोई षड्यन्त्र रचा जा रहा है, ऐसा उन्हें आभास होने लगा था। एक दिन महाराज और महामात्य महर्षि कात्यायन विचार मुद्रा मे बैठे हुए थे। सहसा महाराज के मुख से निकला, 'हमारे गुप्तचर एक बूढ़े को खोजने मे असफल रहे यह कैसी विडम्बना है!'

'महाराज! शकटार अपने राज्य मे होते, तो अवश्य मिल जाते। वे कहीं दूर निकल गए हैं, इस राज्य की सीमा से।' महर्षि कात्यायन ने कहा।

'हूँ।' महाराज के मुख से निकला।

'यह भी अच्छा नहीं हुआ महाराज!' महर्षि कात्यायन बोले।

'क्या, ऋषिवर?' महाराज ने उत्सुकता से पूछा।

'महाराज! शकटार इस राज्य के हितैषी थे। वे सदा इसके हित मे ही सोचते थे।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'उन्हे महामात्य के पद से हटा कर एक साधारण से मत्री का पद देना, क्या ठीक था?'

'आप ठीक कहते हैं, ऋषिवर!' महाराज ने खिन्न स्वर मे कहा,

'यह सब कुछ क्रोधावेश मे ही हो गया था । काश ! हम आपका कहना मान लेते ।'

'आपको कृत्या यज्ञ के लिए आए ब्राह्मण से भी द्वेष नही बाधना चाहिए था महाराज !' महर्षि कात्यायन भावावेश मे कह गए।

'ऋषिवर !' वह निधन कुरूप ब्राह्मण इतने बडे राजवश का क्या बिगाड सकता है ? महाराज ने छोटी सी मुस्कान अधरो पर लाते हुए कहा ।

'ऐसा न सोचिए, महाराज !' वह निधन ब्राह्मण एक छोटा सा अध्यापक ही नही अपितु चतुर, श्रमी, विवेकी, उत्साही और कत्तव्यनिष्ठ मानव है । और फिर ।' कहते कहते रुक गए ऋषिवर कात्यायन ।

'और फिर क्या ऋषिवर ?' महाराज ने उद्विग्न होकर पूछा ।

उसके साथ शकटार की विलक्षण शक्ति है महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा 'सम्भव ह वे दोनो तक्षशिला की ओर निकल गए हो ।'

और ऋषिवर वहा जाकर हमे विनिष्ट करने की योजना बना रहे हो ।' महाराज क स्वर मे व्यग्य था ।

'हा महाराज ! ऋषिवर कात्यायन ने उत्तर दिया ।

'यह आप कैस कह सकते हैं, ऋषिवर कि वे दोनो तक्षशिला मे ही रह कर यह सब कुछ कर रहे होगे 'महाराज ने आशकित होकर पूछा ।

'मुझे पूण विश्वास है महाराज !' ऋषिवर कात्यायन ने कहा, 'वास्तविकता को जानने के लिए हमारे गुप्तचर भी उस ओर गए हुए हैं । इनके अलावा भी हमे विशेष सावधान रहना होगा ।'

'हम समझे नही ऋषिवर !' महाराज चिन्तित मुद्रा मे बोले ।

महाराज, मेरा सकेत यूनान सम्राट की ओर है । ऋषिवर कात्यायन ने कहा, वह भी आक्रमण का अवसर देख रहा है ।'

'तो क्या हम इस विषय मे चिन्तित रहना पडेगा, ऋषिवर ?' कातर मन से महाराज ने पूछा ।

'चिन्तित तो नही, महाराज ! किन्तु सजग अवश्य रहना पडेगा ।' महर्षि कात्यायन ने उत्तर दिया ।

'ऋषिवर !' महाराज उद्विग्न हो उठे। उन्हें अपना भविष्य अंधकारमय दिखाई देने लग गया।

'हाँ, महाराज !' ऋषिवर कात्यायन ने शांति से पूछा।

'हम आप से निजी परामर्श भी करना चाहते हैं।' महाराज ने कहा।

'आज्ञा कीजिए, महाराज !' ऋषिवर कात्यायन ने जिज्ञासावश कहा।

'राजकुमारी सुनन्दा...!' कहते कहते रुक गए महाराज।

'हाँ, हाँ, कहिए महाराज ! क्या हुआ राजकुमारी को ?' महर्षि कात्यायन ने पूछा।

'राजकुमारी सुनन्दा प्रेम जाल में फँस गई है।' महाराज ने दुःखी मन से कहा, 'और मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त से विवाह करना चाहती है।'

'वैसे तो मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त सर्वगुण सम्पन्न है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कुछ सोच कर कहा, 'किन्तु...।'

'किन्तु क्या, ऋषिवर ?' महाराज ने जिज्ञासावश पूछा।

'मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त की आर्थिक स्थिति विशेष अच्छी नहीं है महाराज !' महर्षि कात्यायन ने उत्तर दिया।

'यह बात हमसे छिपी नहीं, ऋषिवर !' महाराज बोले, 'देवी ने राजकुमारी सुनन्दा को हर तरह से समझाने का प्रयास किया, पर वह अपने निश्चय पर अटल है। वह मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त से ही विवाह करेगी, अन्यथा...।'

'अन्यथा क्या महाराज ?' महर्षि कात्यायन ने कातर हो कर पूछा।

'राजकुमारी सुनन्दा संन्यासिनी हो जाएगी ऋषिवर !' महाराज ने दुःखी मन से कहा।

सुनकर महर्षि कात्यायन कुछ सोच में पड़ गए। उस मुद्रा में उनके कुछ क्षण बीते, बोले, 'क्या मौर्यपुत्र चन्द्रगुप्त को राजकुमारी सुनन्दा का यह प्रस्ताव स्वीकार है महाराज ?'

'सम्भवतः नहीं, ऋषिवर !' महाराज ने कुछ सोचते हुए कहा।

'इसका कारण, महाराज ?' महर्षि कात्यायन ने पूछा।

'इसका कारण तो मौर्यपुत्र पद की अयोग्यता बतलाता है, ऋषिवर !' महाराज ने कहा, 'पर हमारे विचार से यह बात दिखाई नहीं देती। हम

समझते हैं कि उसे अभिजात होने का गव है।'

'यदि ऐसा है, तो मौयपुत्र की बडी भूल है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने उत्तर दिया।

'जो कुछ भी समझो, ऋषिवर !' महाराज चिन्ता की मुद्रा मे बोले, 'राजकुमारी की चिन्ता हमारी व्यथा का कारण है। हम अपनी प्यारी पुत्री को हर दशा मे प्रसन्न देखना चाहते हैं।'

'इस सम्ब ध म आपने राजकुमारी सुनन्दा से बात की, महाराज ?' महर्षि कात्यायन ने प्रश्न किया।

'चेष्टा की थी ऋषिवर !' महाराज बोले, 'पर सुनन्दा लज्जावश हमसे कुछ नही कह सकी और देवी ने उसी दिन से शय्या पकड ली है।'

'महाराज ! आपकी आज्ञा हो, तो मौय सेनापति से इस सम्बन्ध मे बातचीत करूँ ?' महर्षि कात्यायन कुछ सोच कर बोले।

'ऋषिवर !' जैसा आप ठीक समझें। महाराज ने उत्तर दिया, 'पर इसम ।'

'इसमे क्या महाराज ?' महर्षि कात्यायन ने पूछा।

'कही राजकुमारी सुनन्दा ।' महाराज कहत कहते फिर रुक गए।

महर्षि कात्यायन महाराज का आशय समझत हुए बोले, 'अब आप निश्चिन्त हो जाइए महाराज ! इस समस्या का समाधान शीघ्र ही हो जाएगा। अब आज्ञा दें तो मैं मौय सेनापति से मिलने जाऊ ?'

अवश्य ऋषिवर !' महाराज न कहा।

महामात्य कात्यायन महाराज को अभिवादन करके मौय सेनापति से मिलने के लिए प्रस्थित हो गए।

आठ

प्रातःकाल महाराज अपनी वाटिका मे भ्रमण कर रहे थे। उनकी विचार भंगिमा को देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि वे किसी की प्रतीक्षा मे हैं और प्रतीक्षा का एक एक पल उनके लिए भारी पड रहा है।

तभी द्वारपाल ने राजसी अभिवादन के बाद कहा, 'अन्नदाता ! महामात्य आपसे भेंट करना चाहते हैं।'

'उन्हे शीघ्र बुला लाओ। हम उन्ही की प्रतीक्षा कर रहे हैं।' महाराज ने हर्षित स्वर मे कहा।

द्वारपाल आज्ञा पाकर चला गया।

महर्षि कात्यायन ने वाटिका मे पहुँच कर राजसी अभिवादन किया।

'क्या समाचार है, ऋषिवर ?' महाराज ने उद्विग्न होकर पूछा, 'क्या मौर्य सेनापति को यह सम्बन्ध स्वीकार है ? क्यो न होगा ? हमारे साथ सम्बन्ध जोडकर उनके यश को चार चाद लग जाऐंगे।'

'सो तो ठीक है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने खिन्न स्वर मे कहा, पर उनकी भी इस सम्बन्ध मे ।'

'क्या उन्हें सम्बन्ध स्वीकार नही ?' महाराज ने बात बीच मे ही काट दी, 'यदि ऐसा है तो उनकी कोरी मूर्खता होगी, ऋषिवर !'

'ऐसा कुछ नही है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'मौर्य सेनापति पच्चीस वर्ष की अवस्था से पूर्व चन्द्रगुप्त का विवाह करने मे शास्त्रीय मर्यादा का उल्लंघन समझते हैं।'

'ऋषिवर ! इससे तो स्पष्ट है कि वे इस सम्बन्ध को करना नही चाहते।' महाराज ने क्रोध मे भरकर कहा, 'और आप कहते हैं कि ऐसा कुछ नही है।'

'महाराज ! धैर्य से काम लीजिए।' महर्षि कात्यायन ने शात स्वर मे कहा, 'मौर्य सेनापति को पिप्पली कानन मे जाने की आज्ञा प्रदान करें।'

'ओह ! अब समझे, ऋषिवर।' महाराज ने भावावेश में कहा,

'मौर्य सेनापति हमारा मान भग करके यहाँ रहना नही चाहते।'

'यह बात नही है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने समझाने का प्रयास किया, मौर्य सेनापति स्वय अपनी आर्थिक स्थिति से चिन्तित हैं।'

'चिन्तित !' महाराज ने दुहराया।

'हाँ महाराज ! महर्षि कात्यायन बोले।

'पर मैं ऐसा नही समझता ऋषिवर !' महाराज ने भावावेश की मुद्रा मे कहा।

महाराज ! मान मर्यादा का अपमान समझना ही आपकी भूल होगी।' न चाहते हुए भी महर्षि कात्यायन के मुख से निकल गया।

ये शब्द आप कह रहे हैं, ऋषिवर !' महाराज ने कहा।

हाँ महाराज ! महर्षि कात्यायन ने दृढता के साथ कहा।

'ऋषिवर ! उस क्षुद्र युवक के लिए राजकुमारी सुनन्दा का दुखित होना हमारे लिए असह्य है।' महाराज ने आवेश मे भरकर कहा, 'अब हम उन दोनो पिता पुत्र का इस राज्य मे एक क्षण के लिए भी रहना उचित नही समझते।'

'महाराज ! मैं आपके हृदय की पीडा को अच्छी तरह समझता हूँ।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'किन्तु ।'

'किन्तु क्या, ऋषिवर ?' महाराज ने पूछा।

'महाराज ! आपके इस निर्णय से राजकुमारी सुनन्दा को कष्ट सम्भव हो सकता है।'

'वह कैसे ऋषिवर ?' महाराज ने प्रश्न किया।

'महाराज ! यदि मौर्य पुत्र ने पूर्ण रूप से राजकुमारी के स्नेह को ठुकरा दिया, तो यही उसकी कोमल देह को ।' कहते कहते रुक गये महर्षि कात्यायन।

'ऋषिवर ! राजकुमारी योग्य वर मिल जाने पर उस नराधम को भुला भी सकती है।' महाराज ने कहा।

'यह असम्भव है महाराज ! महर्षि कात्यायन ने कहा प्रथम स्नेह की जडें पाताल मे होती हैं उनका उखाड फेंकना इतना सरल नही है।'

'हम यह भी जानते हैं ऋषिवर कि हमारी सुनन्दा इतनी अविवेकी

नही कि माता पिता के सम्मान को ठेस पहुँचाने वाले के पीछे भागती रहे।' महाराज ने गर्व से कहा।

प्रेम अन्धा होता है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने उत्तर दिया, 'वह माता-पिता के सम्मान की चिन्ता नही करता।

'हम आपके इन विचारो से सहमत नही, ऋषिवर !' महाराज ने कहा।' 'पर अब ।'

कह डालिए, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'इससे मन का भार हल्का ही होता है।'

'इतना समझिए, ऋषिवर !' महाराज ने कहा, 'उस मौर्य पुत्र का तुच्छ गर्व अब हमसे देखा नही जाएगा।'

महाराज ! आप धीरज से काम लेते, तो यह कार्य सध सकता था।' महर्षि कात्यायन ने समझाने का प्रयास किया।

ऋषिवर ! आप इस विषय मे हमे और विवश न करें।' महाराज ने कहा, हमारा इस सम्बन्ध के लिए तैयार होना केवल कोरी भावुकता थी।'

'मैं विवश नही कर रहा हूँ, महाराज !' महर्षि कात्यायन बोले, 'मैं तो अपनी समझ के अनुसार मंत्रणा दे रहा हूँ। उसका मानना न मानना आपका अधिकार है।'

'अब हम उसी अधिकार से कह रहे हैं, ऋषिवर !' महाराज कुपित स्वर मे बोले, मौर्य सेनापति और उसके पुत्र को तत्काल पिप्पली कानन जाने का आदेश दे दिया जाए।'

आपकी इच्छा।' कह कर अभिवादन के बाद महर्षि कात्यायन चले गए।

महाराज प्रासाद मे लौट गए।

महामात्य के कहने पर मौर्य सेनापति ने सपरिवार पिप्पली कानन की ओर प्रस्थान कर दिया।

राजकुमारी सुनन्दा ने राजाज्ञा के पीछे अपनी खुशियो का प्रासाद खण्डहर होते हुए देखा।

नौ

नमस्कार गुरुदेव !'

कौन, चन्द्रगुप्त ?' चाणक्य के मुख से कौतूहलवश निकला, 'कब आए, वत्स ?

'आज ही आ रहा हूँ ।' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया, 'अब आप ही के चरणों में रहने की इच्छा है ।'

तुम्हें देखकर मेरा हृदय गदगद हो उठा है वत्स !' चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को कंठ से लगाते हुए कहा ।

यह तो आपकी महती कृपा है गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया ।

क्या तुम इन्हें पहचानते हो वत्स ?' चाणक्य ने बूढ़े व्यक्ति की ओर संकेत करते हुए पूछा ।

इन्हें कौन नहीं जानता, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त ने बूढ़े व्यक्ति की ओर देखकर कहा, ये हैं पाटलिपुत्र के महामात्य शकटार और मेरे कृपापात्र ।'

'मौर्यपुत्र ! हम तुमसे पाटलिपुत्र के विषय में कुछ जानना चाहते हैं ?' बूढ़े शकटार ने कहा, 'आशा है नि संकोच उत्तर दोगे ।'

मैं तो आपको पितृव्य के समान समझता आया हूँ ।' चन्द्रगुप्त ने कहा 'फिर संकोच किस बात का आर्य ?'

तुम्हारे पाटलिपुत्र नरेश के विषय में क्या विचार हैं ?' बूढ़े शकटार ने प्रश्न किया ।

वैसे तो आप विद्वानों के समक्ष मेरे विचारों का कोई अर्थ नहीं आर्य !' चन्द्रगुप्त ने गम्भीर मुद्रा में कहा, फिर भी मैं स्पष्ट करूँगा । पाटलिपुत्र नरेश धन लोलुप और अभिमानी हैं। उन्होंने मेरे विवाह के लिए अस्वीकार कर देने मात्र से पिताजी को पदच्युत कर दिया है । अब सम्भवत पिप्पली कानन राज्य के सम्बन्ध में भी कुछ बखेड़ा उठायेंगे ।'

'ये विचार तो राजनीति से प्रेरित हैं मौर्यपुत्र !' बूढ़े शकटार ने कहा, हम तो साधारण व्यवहार के विषय में कुछ जानना चाहते थे ।'

आर्य ! आपका आशय मैं समझा नहीं ।' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'फिर

भी इतना ही कहूँगा कि मैं न तो पाटलिपुत्र नरेश के व्यवहार से सन्तुष्ट हूँ और न असन्तुष्ट।'

'अच्छा तो सप्तसिंधु के विषय में तुम्हारे क्या विचार हैं?' बूढ़े शकटार ने फिर प्रश्न किया।

'सप्तसिंधु के विषय में तो मैं कुछ भी नहीं जानता, आर्य!' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'आप ही इसके सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डालिए।'

'अच्छा, तो सुनो मौर्यपुत्र!' बूढ़े शकटार ने कहा, 'हम अपने दृष्टिकोण के आधार पर बता रहे हैं। यूनान सम्राट सिकन्दर मकदूनियाँ से विश्व में अपनी पताका फहराने के लिए निकला है। वह मिस्र को पराजित करके ईरान नरेश दारा पर आक्रमण करने का प्रयास कर रहा है। यदि वह इस आक्रमण में सफल हो गया, तो भारत उसके पाश से स्वयं को न बचा सकेगा।'

सप्तसिंधु के प्रधान नरेशों में किन किन की गणना की जाती है, आर्य?' चन्द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

'मौर्यपुत्र! मेरे अनुभव से इनमें तक्षशिला नरेश, जेहलम नरेश, मसागा नरेश, पचनद का मालवीय प्रजातन्त्र राज्य, सिंधु नरेश, चाकल, कैकय और हस्ती आदि नरेश पारस्परिक वैमनस्य को भुलाकर और एकजुट होकर शत्रु का सामना करें, तो भारत बच सकता है और पाटलिपुत्र का विशाल साम्राज्य भी हस्तगत किया जा सकता है।' बूढ़े शकटार ने गम्भीर होकर कहा।

'क्या इनका पारस्परिक सहयोग मिल सकेगा, आर्य?' चन्द्रगुप्त ने पूछा।

वैसे तो असम्भव सा प्रतीत होता है, मौर्यपुत्र!' बूढ़े शकटार ने कहा, 'पर प्रयास तो करना ही चाहिए। शायद ऊँट सीधी करवट बैठ जाए। इसी में हम सब का हित है।'

'आप और गुरुदेव की शक्ति ही पाटलिपुत्र के विशाल साम्राज्य को विजित करने के लिए पर्याप्त है आर्य!' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'इसके लिए किसी की सहायता लेने की भी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।'

'तुम्हारा उत्साह देखकर हम प्रसन्न हुए, वत्स!' चाणक्य बोल उठे,

पर तुम्हें एक कार्य करना होगा। वैसे यह काय कुछ जटिल सा है।'

'आज्ञा कीजिए गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'आपकी आज्ञा के सामने सब जटिलताएँ दूर हो जाती हैं।'

तो सुनो वत्स! जहलम की राजकुमारी अद्वितीय सुन्दरी और विदुषी है उससे ववाहिक सम्बन्ध स्थापित करने होंगे।' चाणक्य ने इतना कहकर चन्द्रगुप्त की ओर देखा।

'आपकी आज्ञा शिरोधाय है गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त ने कुछ सोचकर उत्तर दिया।

'यह काय शिष्टाचारानुसार होना चाहिए।' चाणक्य बोले।

'तथास्तु!' चन्द्रगुप्त ने आश्वस्त किया।

वत्स! इसी का नाम राजनीति है।' चाणक्य ने कहा 'हम तुम्हारी वधू के रूप में इस विशाल साम्राज्य की राजकुमारी को देखना चाहते हैं।'

गुरुदेव! क्या ऐसे विवाह प्रेम से दूर होते हैं?' चन्द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

वत्स! प्रेम होता तो अवश्य है किन्तु तुम्हारा प्रथम प्रेम जेहलम साम्राज्य से होगा।' चाणक्य ने उत्तर दिया।

'ऐसा ही होगा, गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त ने कहा।

'तुमसे ऐसा ही उत्तर पाने की आशा थी।' चाणक्य प्रसन्न होकर बोले, हमारा आशीर्वाद है कि तुम वीरों में वृषभ के समान ही शक्तिशाली होगे। आज से हम तुम्हें वृषल कहकर पुकारेंगे।'

'आप विश्वास कीजिए, गुरुदेव! आपका हर वचन पूर्ण होगा।' चन्द्रगुप्त भावावेश में बह गया।

हम चाहते हैं वृषल कि तुम हमारे हृदय में प्रज्वलित अग्नि को पराक्रम और कुशाग्र बुद्धि से शांत करो। हम जबसे पाटलिपुत्र से लौटे हैं तीव्र वेदना से पीड़ित हैं वत्स।' कहते-कहते चाणक्य की भृकुटि तन गई, 'इसी घननन्द के पिता ने अपनी खड्ग से पिताश्री चणक का सिर धड़ से पृथक् करके चौराहे पर बाँस के ऊपर लटका दिया था। उस समय सारी प्रजा त्राहि त्राहि कर उठी थी। पर उस नराधम के हृदय में तनिक

भी दया नहीं आई थी। ये भूतपूर्व महामात्य शकटार अपने परिवार सहित बन्दी रहे और वह नराधम राक्षस के हाथों की कठपुतली बना रहा आज हमने इस भेद को खोला है।'

'क्या आप चणक के पुत्र हैं?' बूढ़े शकटार ने आश्चर्य से पूछा।

'हाँ, शकटार!' चाणक्य ने उत्तर दिया।

'आपका वह कोमल और पुष्प समान सुन्दर रूप कहाँ गया?' बूढ़े शकटार ने प्रश्न किया।

'वह रूप अग्निदेव की भेंट चढ़ा दिया गया महामात्य शटकार!' चाणक्य बोले, 'यह सब कुछ उस नराधम से बचने के लिए किया था। पिताश्री के प्रतिशोध की चिंगारी तो समय की राख के नीचे दबकर रह रह गई थी, किन्तु यज्ञ स्थल पर किए गए अपमान को नहीं भुला पाए नृपल! इस वंश का विध्वंस करके ही हमारा हृदय शांत होगा।'

आपकी आकांक्षा अवश्य पूर्ण होगी।' बूढ़े शकटार के मुख से निकल गया, हम दानों का प्रयोजन एक ही है। यह नवनंद वंश हमारी कोपाग्नि से स्वयं को नहीं बचा सकेगा।'

चाणक्य ने बूढ़े शकटार के शब्दों को सुना और उन्मीलित नेत्रों से शून्य आकाश की ओर निहारने लग गए।

दस

तक्षशिला नगरी में एक सुन्दर दीर्घाकार जलाशय था जिसमें संध्या और प्रातः रेशमी वस्त्रों से सज्जित नर नारी पण्य वीथी पर पग धरती हुई जलाशय पर भ्रमण और स्नानादि के लिए आया करती थीं। वहाँ पर नौका विहार का भी समुचित प्रबंध था। आस-पास रंग बिरंगे पुष्प और नील कमल जलाशय की शोभा को द्विगुणित कर रहे थे। वहाँ की सुखद जलवायु

अनेक रोगो का शमन करने मे सक्षम थी। वह स्थान मृगयार्थ के लिए भी प्रसिद्ध था। इसके समीप ही एक दूसरा सुन्दर ताल था। वह चारो ओर से जाली की प्राचीरो से घिरा था। उसमे विभिन्न जातियो के 500 600 पक्षी वास करते थे।

ऐसी ही एक सुहावनी सध्या थी।

हृदय लुभावनी शीतल बयार बह रही थी। चन्द्रगुप्त भी अपने प्रिय सखा जीवसिद्धि के साथ भ्रमणार्थ उस सुन्दर जलाशय पर पहुचे। सहसा उन्होंने देखा कि एक सुन्दर रथ उनके पास ही आकर रुका है। उसमे से पुष्प भूषणो से सज्जित दो सुन्दरियाँ उतर रही थी। उनके पीछे दो अगरक्षक भी थे।

सहसा चन्द्रगुप्त के मुख से निकला 'राजकुमारी दुधरा !'

उनका स्वर अधरो के बीच ही दब कर रह गया। उनके बडे बडे नेत्र राजकुमारी के अछूत लावण्य का रसास्वादन करने लगे।

राजकुमारी दुधरा का सौदर्य क्या था ?

मानो विधाता के कौशल का प्रमाण था। उसका अग प्रत्यग सौंदर्य की प्रतिमूर्ति था। उसका उन्नत ललाट, गोल चेहरा और खजन सी आखें उसकी गौर वर्ण देह की शोभा को द्विगुणित कर रही थी। उसकी इठलाती हुई चाल गज गामिनी को लजा रही थी। उसके उन्नत उरोज और मणि मुक्ताओ से गुथी हुई वेणी नेत्रो की ज्योति को अपनी ओर खीच रही थी।

चन्द्रगुप्त ने यह सब कुछ देखा।

लेकिन राजकुमारी दुधरा मौर्यकुमार को न देख सकी।

वह राजसी नौका मे सखी के साथ बैठकर जलाशय की शोभा को निहारने के लिए बढ गई।

चन्द्रगुप्त ने गुरुदेव की आज्ञा को अत्यन्त सुखप्रद समझा। वह अपने सखा के साथ वृक्षा के झुरमुट मे खडे तब तक निहारते रहे जब तक कि राजकुमारी की नौका उनकी आँखो से ओझल न हो गई।

उनके मुख से एक ठण्डी साँस निकली बोले 'जीवसिद्धि !

'हाँ, मित्रवर ! जीवसिद्धि ने कहा।

'कुछ देखा ?' चन्द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

'हाँ, एक अछूते सौन्दय मे मित्र को खोते हुए।' जीवसिद्धि ने परिहास किया।

'धत्!' चन्द्रगुप्त के मुह से निकला, 'नौका विहार करें।'

'हा!' जीवसिद्धि ने स्वीकृति दे दी।

तभी दोनो पास मे खडी एक नौका मे बैठ गए। नाविक उनकी नौका को लेकर बढ गया।

सूय की अंतिम किरणें जलाशय की तरगो से विदा ले रही थी। उनकी नौका तीव्रगति से राजकुमारी की नौका की ओर बढ रही थी। जलाशय के मध्य म जल कुछ गहरा था। उससे कुछ दूरी पर बनज वन था। बडे बडे नीलकमल उसकी शोभा को बढा रहे थे।

राजकुमारी दुधरा ने अपनी सखी से कहा, 'दख तो, कितना सुदर नीलकमल है ?'

'हाँ!' सखी ने कहा, 'आओ तोडें इसे।'

इतना कहते ही सखी और राजकुमारी उस नीलकमल को तोडने के लिए झुक गइ।

राजसी नौका छोटी थी। वह दोनो के एक ओर पडने वाले भार से डगमगा गई और छपाक के साथ वे दोनो जलाशय के अथाह जल मे डुबकियाँ लगान लगी।

'बचाओ! बचाओ!' यह तीव्रध्वनि चन्द्रगुप्त के कानो मे पडी। वे चिंतित हो उठे। नाविक ने नौका की गति और तीव्र कर दी। उस स्थान पर पहुच कर दोनो युवको ने दुकूलो को निकालकर जल की अथाह धारा मे छलाग लगा दी।

चन्द्रगुप्त ने राजकुमारी दुधरा की ओर ध्यान दिया और जीवसिद्धि सखी को बचाने के लिए बढ गया।

चन्द्रगुप्त ने पास पहुच कर राजकुमारी दुधरा का हाथ पकडा। उसकी पतली कटि मौयकुमार से चिपट गई वे अपना सतुलन खो बैठे पैर डगमगाने लगे।

जलाशय की अथाह धाराओ ने दोनो को अपनी गोदी मे बैठाने का

प्रयास किया, पर मौर्य ने साहस न छोड़ा व कुशल तैराक थे। उन्होंने एक हाथ से राजकुमारी के मुख को बंद किया और दूसरे से उसकी कटि को पकड़े हुए परों से जल के वेग को चीरते हुए नौका की ओर बढ़े।

जीवसिद्धि ने राजकुमारी की सखी को नौका पर पहले ही पहुंचा दिया था। राजकुमारी का भी नाविक की सहायता से नौका पर पहुंचाया गया। फिर उल्टी क्रिया से राजकुमारी के उदर से जल निकाला और महाविद्यालय के औषधालय में उपचार हेतु ले गए। वैद्यजी के उपचार और मौर्यकुमार की सेवा से राजकुमारी शीघ्र ही स्वस्थ हो गई। राजकुमार दुधर्ष भी बहन की अस्वस्थता का समाचार पाकर वहाँ पहुंच गए थे।

'मौर्यकुमार! आपने हमें जीवन दान दिया है।' राजकुमार दुधर्ष ने कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा, 'दुधरा हमारी बहन ही नहीं, प्राण है।'

राजकुमार! चन्द्रगुप्त ने कहा मानव में इतनी शक्ति कहाँ है, जो वह किसी को जीवनदान दे सके। वह तो केवल जन सेवा कर सकता है सो वही मैंने किया।

आपके इस उपकार का ऋण इस जीवन में चुका भी सकूंगी अथवा नहीं। राजकुमारी दुधरा ने मौर्यकुमार को निहारते हुए कहा।

'राजकुमारी! मैंने आपको बचाकर तो अपना कर्तव्य पूर्ण किया है।' चन्द्रगुप्त ने कहा 'इसमें ऋण चुकाने का प्रश्न कहाँ से आ गया है।'

तो मैं आज से समझूं कि मेरे दो भाई हैं।' राजकुमारी दुधरा ने कहा।

'पर मैं आपको भगिनी समझने का दुस्साहस नहीं कर सकता।' चन्द्रगुप्त ने कहा।

क्यों? राजकुमारी दुधरा ने आश्चर्यचकित स्वर में पूछा।'

हम दोनों के बीच आकाश पाताल का अन्तर है राजकुमारी। चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया मैं राज्य सेवक ठहरा और आप राज्य स्वामिनी।

बहुत खूब! यह स्वामित्व का पुछल्ला खूब निकाला।' राजकुमार दुधर्ष ने हँसते हुए कहा अच्छा तो मौर्य कुमार! आप हमारे राज्य में

अपने अमूल्य कुछ क्षण दे सकें, तो अत्यन्त कृपा होगी।'

'किन्तु यह प्रस्ताव समयाभाव के कारण सम्भव नहीं, राजकुमार !' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया।

'इस प्रस्ताव को ठुकराइए मत मौर्य कुमार !' राजकुमारी दुर्धरा बीच में बोल उठी, 'मैं चाहती हूँ कि दोनों राज्यों के मध्य सदैव मैत्री बनी रहे।'

'हाँ, मौर्यकुमार ! दुर्धरा का कथन सत्य है।' राजकुमार दुर्धर्ष ने बहन का समर्थन किया।

'आप दोनों का कथन शिरोधार्य है किन्तु ।' चन्द्रगुप्त कहते-कहते रुक गए।

'किन्तु क्या मौर्य कुमार ?' राजकुमार दुर्धर्ष ने पूछा।

'गुरुदेव का आदेश है।' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'यहाँ का पठन पाठन समाप्त करके मुझे यवन प्रदेश जाना होगा।'

'यवन प्रदेश !' राजकुमार दुर्धर्ष ने दुहराया।

'हाँ राजकुमार ! गुरुदेव की ऐसी ही इच्छा है।' चन्द्रगुप्त बोले, 'वे चाहते हैं कि यवन प्रदेश में जाकर उनकी रण चातुर्य, कवच परिचालन और सैनिक प्रबन्ध का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करूं। और फिर सप्त-सिंधु के राज्यों में संगठन का अंकुर उपजाना होगा।'

'यह कार्य तो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, मौर्य कुमार !' राजकुमार दुर्धर्ष के मुख से निकला।

'निस्सन्देह !' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'क्या मैं यह पूछने की धृष्टता कर सकता हूँ कि महाराज पुरु ने अपने तक्षशिला के प्रबन्धक को इतना बड़ा प्रान्त क्यों दे दिया कि वह उचित समय पाकर उनसे ही विमुख होने का प्रयास कर रहा है।'

'आपके इस प्रश्न का उत्तर अवश्य मिलेगा मौर्य कुमार !' राजकुमार दुर्धर्ष ने कहा, 'इस प्रबन्धक पर हमारे पितामह की कृपा दृष्टि थी। उन्होंने ऐसा स्नेहवश किया था।'

'क्या आप यवन प्रदेश में निर्भय होकर सैन्य अध्ययन कर सकेंगे ?' राजकुमारी दुर्धरा ने प्रश्न किया।

'क्या नहीं ?' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया, 'वहाँ मैं एक विद्यार्थी के रूप में जाऊँगा न कि राजनीतिज्ञ के रूप में।'

'क्या आप यवनों के बीच रहकर देश प्रेम को छिपा सकेंगे ?' राजकुमारी दुधरा ने पूछा।

'उद्देश्य की पूर्ति के लिए सब कुछ करना पड़ता है, राजकुमारी !' चन्द्रगुप्त ने हँसते हुए कहा।

'मौर्यकुमार ! यूनान सम्राट सिकन्दर के नेत्र अब इस ओर ही हैं।' राजकुमार दुर्धप ने कहा, 'क्या हम अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित रख सकेंगे ?'

'इस स्थिति में तो असम्भव सा लगता है !' चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया, 'हाँ यदि भारतीय नरेश एकत्रित हो गए, तो सिकन्दर को पराजय का मुख देखना होगा।'

'यह एकत्रित होना ही तो कठिन-सा लग रहा है।' राजकुमारी दुर्धरा बोल उठी।

'यह सोच कर घर बैठे नहीं रहना चाहिए।' चन्द्रगुप्त बोले, 'प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। शायद अपने स्वार्थ को भूल कर सब नरेश एक होकर शत्रु का सामना करने के लिए उद्यत हो जाएँ।'

'अब छोड़िए इस राजनीति को।' राजकुमारी दुधरा ने कहा, 'कितने दिनों से चौगान का मैदान हमारी राह देख रहा है।'

'हाँ, दुधरा !' राजकुमार दुर्धप ने कहा, 'आज हम अवश्य चलेंगे।'

इसके बाद तीनों चौगान के मैदान की ओर बढ़ गए।

ग्यारह

'कौन राजकुमारी सुनन्दा ! योगिनी के वेष में।' चाणक्य के मुख से निकला।

'हाँ गुरुदेव !' सुनन्दा ने कहा।

'सुनन्दा ! यह तुमने अल्पायु मे क्या कर डाला ?' आचार्य चाणक्य ने प्रश्न किया।

'इसी से मुझे कुछ शाति मिल सकी थी, गुरुदेव !' सुनन्दा ने उत्तर दिया।

'तुम्हारी यह शाति तो बडी महँगी पडी है, बेटी !' चाणक्य बोले, 'इसने तुम्हारे रूप, गुण और विद्या तीनो के ही रूप को बदल डाला है।'

सुनन्दा शान्त रही। उसके नेत्र छलछला आए थे।

'गत सप्ताह से ये बूढी आँखें तुम्हें तक्षशिला की पण्य वीथि पर किसी को खोजती हुई देखती रही।' बूढे शकटार ने कहा, 'किन्तु तुम्हारी स्वतन्त्रता मे किसी प्रकार की बाधा न पडे, इसी कारण तुम्हारे से मिलने का प्रयास नही किया गया, राजकुमारी !'

सुनन्दा ने सजल नेत्रो से बूढे शकटार की ओर देखा। उस ऐसा प्रतीत हुआ कि ये नेत्र तनिक सा अपनत्व पाकर ही बरस पडेंगे। इससे उसकी योग साधना और अधिक न सोच सकी वह। उसने अपने विचारो को स्थिर करते हुए कहा, 'आप मुझे आशीर्वाद दीजिए ताकि मैं अपने उद्देश्य मे सफल हो सकू।'

'बेटी ! हम तुम्हारे पिता के घोर शत्रु होते हुए भी तुम्हारे हितैषी ही हैं। हमारी इच्छा है कि तुम अपना हठ त्याग कर, सुखपूवक गृहस्थ का आनन्द पाओ। आचाय चाणक्य बोले, तुम सरस्वती के समान पूज्या हो। यदि तुम अब भी घर जाना चाहती हो, तो पहुँचाया जा सकता है। साथ ही तुम्हे आश्वस्त किया जाता है कि चपल का स्नेह तुम सद्भावना के साथ पा सकोगी।'

गुरुदेव ! अब मैं आपकी बेटी ही नही अपितु जगत् जननी बन चुकी हूँ।' सुनन्दा ने कहा, 'जो कुछ ग्रहण किया जा चुका है वह अब त्याज्य नही है। मैं अपने सासारिक सुखो के लिए अब जगत हित के साधनो को नही मिटा सकती। मैं जिस मोह ममता की शृखलाओ को तोड कर इस विस्तृत क्षेत्र मे उतरी हूँ, अब उसमे पुन स्वय को जकडना नही चाहती हूँ। इस क्षेत्र मे पदार्पण करने से पूव मेरा एक ही काय था, किन्तु अब अनेक गुरुवर काय मेरे समक्ष पडे हुए हैं क्षमा करें गुरुदेव ! यह योगिनी

आपके कथन को नहीं मान रही है।'

धन्य हो देवी ! तुम्हारे इन उज्ज्वल विचारों का हम स्वागत करते हैं।' आचार्य चाणक्य ने कहा 'अब हम तुम्हें आशीर्वाद देने के अधिकारी नहीं रहे क्योंकि जगत माता आशीर्वाद लेती नहीं अपितु दिया करती हैं।'

मौर्यपुत्र के प्रति अब तुम्हारे क्या विचार हैं? बूढ़े शकटार ने पूछा।

मौर्यपुत्र का मैं सदैव हित चाहती हूँ। सुनन्दा ने कहा, कुछ ही दिन पूर्व मैंने सुना था कि वे राजकुमारी दुधरा के रूप लावण्य पर मुग्ध होकर उससे विवाह करना चाहते हैं किन्तु संकोचवश अपने विचारों को बिना प्रगट किए ही अपने प्रदेश को प्रस्थान कर गए हैं।'

यह तो सत्य है।' चाणक्य ने कहा 'क्या तुम्हारी राजकुमारी दुधरा से भेंट हुई थी?'

'हाँ गुरुदेव ! सुनन्दा ने कहा 'मैं राजकुमारी दुधरा के विचारों से अवगत होने के लिए ही उनके पास गई थी।

क्या राजकुमारी दुधरा विवाह के लिए उद्यत हैं?' चाणक्य ने प्रश्न किया।

'पहले तो राजकुमारी दुधरा विवाह के लिए उद्यत नहीं थी। सुनन्दा ने कहा, मेरे यह कहने पर कि मौर्य पुत्र तुम्हें भगिनी बनाने के लिए इसलिए उद्यत नहीं हुए कि वे तुमसे वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहते थे।

तब उन्होंने क्या कहा?' बूढ़े शकटार ने पूछा।

राजकुमारी दुधरा ने मुझ से कहा कि उन्होंने इस इच्छा को व्यक्त क्यों नहीं किया? सुनन्दा ने बताया।

फिर तुमने क्या कहा? आचार्य चाणक्य पूछ उठे।

मौर्यपुत्र स्वाभिमानी हैं ! इस कारण वे ऐसा नहीं कर सके होंगे। सुनन्दा बोली फिर मैंने इतना कह कर राजकुमारी से पूछा कि इस विषय में राजकुमार दुधप से विचार विनिमय किया जाए?'

इस पर राजकुमारी दुधरा क्या बोली? बूढ़े शकटार ने प्रश्न किया।

उनका उत्तर था कि देवी, आप जैसा उचित समझें वैसा करें।

सुनन्दा ने कहा।

'अब तुम्हारा क्या विचार है ?' चाणक्य ने पूछा।

'मैं राजकुमार दुधप से शीघ्र ही भेंट करना चाहूँगी।' सुनन्दा का उत्तर था।

इसके लिए हमारी सेवा मिल सकती है।' वृद्ध शकटार बोले।

'धन्यवाद ! बस आपसे केवल इतना ही निवेदन है कि मेरा परिचय गोपनीय रहे।' सुनन्दा ने कहा।

'ऐसा ही होगा। तुम हमारी ओर से निश्चिन्त रहो।' आचार्य चाणक्य ने सुनन्दा को यह कह कर आश्वस्त किया।

योगिनी सुनन्दा आश्वस्त होकर अंतरंग सखी के साथ आचार्य चाणक्य के आश्रम से चली गई।

बारह

'द्वारपाल !' राजकुमार दुधप ने चिंतित स्वर में पुकारा।

आज्ञा कीजिए, श्रीमन् !' द्वारपाल ने प्रवेश कर यथोचित अभिवादन के बाद कहा।

'कोई नवीन समाचार तो नहीं आया ?' राजकुमार दुधप ने पूछा।

'नहीं, श्रीमन !' द्वारपाल ने नतमस्तक होकर उत्तर दिया।

'पूजनीय शकटार भी अभी नहीं लौटे ?' राजकुमार दुधप ने पुनः प्रश्न किया।

'नहीं श्रीमन !' द्वारपाल उसी स्थिति में बोला, 'पर दो योगिनियां आपके दर्शन करना चाहती हैं।'

'उन्हें सम्मान के साथ भेज दो।' राजकुमार दुधप ने आदेश दिया।

'जो आज्ञा, श्रीमन् !' कह कर द्वारपाल योगिनियों की ओर चला गया।

थाडी देर के बाद दोनो योगिनियाँ राजकुमार दुधप के सामने थी। उन्ह देख कर वे बोले, 'पधारिए।'

दोनो योगिनियाँ राजकुमार के सामने बैठ गइ। उनके बैठने पर उन्होने कहा आज्ञा कीजिए।'

'युवराज।' एक योगिनी बोली, 'आज हम विशेप काय से तुम्हारे पास आइ हैं।'

विशेष काय।' राजकुमार दुधप ने दुहराया।

हा राजकुमारी दुधरा के सम्बन्ध म।' उस योगिनी ने उत्तर दिया।

राजकुमारी दुधरा का इन योगिनियो से क्या सम्बन्ध हा सकता है? राजकुमार दुधप सोच मे पड गए।

ऐसी चिन्ता की कोई बात नही है युवराज।' उस योगिनी ने राजकुमार को चिन्तित देख कर कहा, केवल तुम्हारी स्वीकृति चाहिए।'

'स्पष्ट कहिए।' राजकुमार दुधप ने उद्विग्न होकर कहा।

राजकुमारी दुधरा मौयपुत्र के साथ विवाह करना चाहती हैं।' उस योगिनी ने स्पष्ट कह दिया।

'विवाह।' राजकुमार दुधप ने कुछ विचार कर कहा 'किन्तु राजकुमारी दुधरा ने हमसे तो एसी इच्छा प्रगट नही की, देवी।'

इसका कारण सकोच हो सकता है, युवराज।' उस देवी न उत्तर दिया 'इसीलिए हम यहाँ आना पडा।

देवी। वसे तो हमारी बहन का चयन अति उत्तम है। राजकुमार दुधप ने कहा 'किन्तु इस सम्बन्ध मे।'

स्पष्ट कीजिए युवराज। हम तुम्हारे विचार जानने के लिए ही यहाँ उपस्थित हुई हैं। उस देवी ने कहा।

'मौयपुत्र सवगुण सम्पन्न होते हुए भी एक लाघव राज्य का उत्तराधिकारी है। युवराज दुधप ने कहा।

बस युवराज।' देवी ने कहा इसके अतिरिक्त तो कुछ नही।'

नही देवी। युवराज दुधप ने कहा कन्या सदैव अपने से उच्च स्तर वाले घर मे देनी चाहिए।

'इस सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण तुम्हारे विचारों से भिन्न है युवराज !' उस योगिनी ने कहा, 'जहाँ स्नेह का बंधन जुड़ रहा हो वहाँ राज्य का लाघव होना बाधक नहीं होना चाहिए।'

'आपका कथन सत्य है देवी !' राजकुमार दुधप ने कहा, 'मौर्यपुत्र ! यवन प्रदेश जाने से पूर्व हम ■ मिलने आए थे, पर उन्होंने तब भी अपनी इच्छा से अवगत नहीं कराया।'

'मौर्यपुत्र बड़े स्वाभिमानी हैं, युवराज !' योगिनी ने कहा, इसीलिए इस सम्बन्ध में कुछ न कह सके होंगे।'

'क्या आप मौर्यपुत्र से परिचित हैं ?' शंकित स्वर में राजकुमार दुधप ने पूछा।

'हाँ, युवराज !' योगिनी बोली।

'कैसे ?' राजकुमार दुधप ने प्रश्न किया।

'मौर्यपुत्र पाटलिपुत्र की राजकुमारी सुनन्दा के प्रणय को ठुकरा चुके हैं।' योगिनी ने कुछ झिझकते हुए कहा।

'आप उनके प्रणय के सम्बन्ध में कैसे जान पाई ?' राजकुमार दुधप ने पूछा।

'हम पाटलिपुत्र की ही वासिनी हैं।' वास्तविकता को छिपाते हुए योगिनी ने कहा।

'क्या पाटलिपुत्र की राजकुमारी सुनन्दा में कोई दोष था ?' राजकुमार दुधप ने कहा।

नहीं, युवराज !' योगिनी ने कहा, 'राजकुमारी सर्वगुण सम्पन्ना थी।'

'फिर मौर्यपुत्र की अस्वीकृति का कारण ? राजकुमार दुधप ने प्रश्न किया।

'अनुचित गर्व के कारण !' योगिनी ने इतना कहकर मुँह फेर लिया।

देवी ! हमें कल ही कुछ भाटों द्वारा ज्ञात हुआ कि पाटलिपुत्र की राजकुमारी सुनन्दा ने मौर्यपुत्र के विरह में योगिनी बन कर प्रासाद का सुख वैभव सब कुछ त्याग दिया है।' राजकुमार दुधप ने कहा, 'पाटलिपुत्र

नरेश न राजकुमारी की खोज म अपने गुप्तचर छोडे हुए हैं।'

'आपके भाटो ने ठीक समाचार दिया है, युवराज ! योगिनी ने कहा।

क्या हमारे समक्ष योगिनी क भेष म पाटलिपुत्र की राजकुमारी सुनन्दा तो नही हैं।' राजकुमार दुधप न कहा।

युवराज ! हम योगिनी हैं, किसी सम्राट् की पुत्री नही।' योगिनी ने उत्तर दिया।

'हम अपने कथन पर अविश्वास नही कर सकत, देवी !' राजकुमार दुधप बोले फिर तक्षशिला म भी पूज्य शकटार और गुरुदेव चाणक्य द्वारा भी आपका विशेष सम्मान हुआ है। इसलिए हम निश्चितता क साथ कह सकते हैं कि आप ही राजकुमारी सुनन्दा हैं।'

'युवराज ! इस योगिनी के भेष म राजकुमारी का भ्रम मत करो।' योगिनी ने तनिक उग्र स्वर म कहा।

राजकुमार दुधप न वास्तविकता को छिपाते हुए बात बदलत हुए कहा 'देवी ! क्या मौर्यपुत्र के सम्बन्ध मे और कुछ कहना शेष है ?

नही, युवराज !' योगिनी न उठते हुए कहा

'देवी ! एक विनती है।' राजकुमार दुधप ने कहा।

क्या, युवराज ? योगिनी ने आश्चर्यचकित स्वर म पूछा।

आप अपनी अवस्था पर पुन विचार करें।' राजकुमार दुधप ने तनिक गम्भीर होकर कहा।

'अवस्था बिल्कुल ठीक है, युवराज !' योगिनी ने कहा, 'हम अब राजकुमारी सुनन्दा नही, अपितु एक योगिनी हैं जो अपना जीवन जनहित म लगा चुकी हैं।'

देवी ! हम क्षमा करें।' राजकुमार दुर्धप न कहा, 'आपके प्रस्ताव को महाराज के समक्ष रखेंगे।'

योगिनी सुनन्दा राजकुमार दुधप का उत्तर पाकर वहाँ से यवन प्रदेश की ओर प्रस्थित हो गई।

तेरह

'राजकुमारी दुधरा !'

'कौन ? नन्दिनी ! आओ सखी ! मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रही थी।' राजकुमारी दुधरा ने अपनी प्रिय सखी नन्दिनी को देखकर कहा।

'राह और मेरी क्यों परिहास कर रही हो, सखी ?' नन्दिनी ने पास आते हुए कहा, 'राह मेरी नहीं मौर्यकुमार की देखी जा रही है।'

तुम्हारा कथन मिथ्या है, नन्दिनी !' राजकुमारी दुधरा ने मुस्करा कर उत्तर दिया, मैं मौर्यकुमार की राह देखने वाली कौन ?'

यदि मेरी प्यारी सखी ही मौर्यकुमार के प्रति ऐसी भावना रखेंगी तो फिर वे किसके सहारे जीवित रहेंगे।' नन्दिनी ने चुटकी ली।

'पगली ! मानव को जीवित रखने की शक्ति मानव में नहीं विधाता में है। वह जिसे चाहे जब तक इस नश्वर जगत में सुख दुःख के लिए छोड़ सकता है।'

'यह ठीक है सखी !' नन्दिनी बोली 'मैं देख रही हूँ कि आप कुछ दिनों से खोई खोई सी रहती हैं। वह कौन सा दुख है, जिससे मेरी प्रिय सखी का कमल सा मुख क्लान्त लग रहा है। क्या उस पुरुष से मुझे अवगत नहीं कराओगी ?'

नन्दिनी ! मैंने एक अमूल्य वस्तु खो दी है'—राजकुमारी दुधरा ने कहा, 'मैं बारम्बार उसी का पश्चात्ताप किया करती हूँ।'

'अमूल्य वस्तु पश्चात्ताप !' नन्दिनी ने आश्चर्यचकित स्वर में कहा, यह गोरख धंधा मेरी समझ में नहीं आया, सखी !'

जिसे तुम गोरखधंधा कहती हो, वही मेरे अन्तरतम की धधकती हुई ज्वाला है, नन्दिनी !' राजकुमारी दुधरा ने दुःखी मन से कहा।

तब तो इन ज्वालाओं से दूर रहो, सखी !' नन्दिनी कह उठी, 'अन्यथा ये भस्मसात् कर डालेंगी।'

'यदि उनका काम भस्मसात करना है, तो मेरा काम मिटना रह गया है नन्दिनी ! राजकुमारी दुधरा का उत्तर था।

'ऐसी अशुभ बात मुख से मत निकालिए।' नन्दिनी ने घबरा कर कहा।

इस जीवन मे अब रह ही क्या गया है, नन्दिनी ?' राजकुमार दुधरा ने कहा ।

'अभी आपने देखा ही क्या है सखी ?' नन्दिनी न कहा ।

'नन्दिनी !' जब मैं आधार को ही पहचानने मे चूक गई ।' राजकुमारी दुधरा ठण्डी साँस भर कर बोली ।

'क्या आधार के रूप म मौर्यकुमार तो नही, सखी ?' नन्दिनी न प्रश्न किया ।

हाँ, नन्दिनी !' राजकुमारी दुधरा ने कहा, 'मैं इस भेद को अधिक दिन तक गोपनीय रखने मे असमर्थ हूँ ।'

'पर यह विषय तो चिन्ता का नही सखी !' नन्दिनी ने समझाते हुए कहा, 'मौर्यकुमार शीघ्र ही यवन प्रदेश से लौट आयेंगे ।'

नन्दिनी ! यह क्यो भूल जाती हो कि वह यवन प्रदेश शत्रु का क्षेत्र है ।' राजकुमारी दुधरा ने आशका व्यक्त करते हुए कहा, 'यदि किसी को इस बात का तनिक भी सदेह हो गया कि मौर्यकुमार का शिक्षाध्ययन करना राजनीति से प्रेरित है, तो वे कदापि जीवित नही लौट सकते !'

यह तो सत्य है, राजकुमारी ! नन्दिनी ने चिंतित स्वर मे कहा ।

'और भी कुछ सुना है नन्दिनी !' राजकुमारी दुधरा ने कहा ।

'क्या ?' नन्दिनी ने आश्चर्यचकित स्वर मे पूछा ।

कल भाई साहब बतला रहे थे कि मौर्यकुमार का कुशल समाचार मिला है । उनका विद्याध्ययन सुचारू रूप से चल रहा है ।' राजकुमारी दुधरा न कहा 'किन्तु ।'

'किन्तु क्या सखी ? नन्दिनी ने पूछा ।

'मौर्यकुमार ने हेलन के व्यवहार की भी बहुत प्रशसा की है ।' राजकुमारी दुधरा ने कहा यह सेनापति सेल्यूकस की पुत्री है । यदि कही वे उस पिशाचिनी के जाल मे फँस गए तो ।

'मौर्यकुमार ऐसे नहीं हैं सखी !' नन्दिनी न कहा ।

'तुम्हारा कथन सत्य हो सखी ! राजकुमारी दुधरा ने कहा, वे सकुशल लौट आएँ तो मैं अपनी तपस्या का सफल समझूँगी ।'

और भी कुछ सुना है सखी ? नन्दिनी ने कहा ।

'क्या ?' राजकुमारी दुधरा ने आश्चर्यचकित स्वर मे पूछा।

'पाटलिपुत्र नरेश पिप्पली कानन राज्य पर शीघ्र ही एक विशाल सेना के साथ आक्रमण कर रहे हैं।' नन्दिनी कह गई।

अकस्मात आक्रमण का कारण ? राजकुमारी दुधरा ने घबरा कर पूछा।

पाटलिपुत्र नरेश का सन्देह है कि योगिनी भेष मे राजकुमारी सुनन्दा पिप्पली कानन मे ही रह रही है।' नन्दिनी ने उत्तर दिया।

'संदेह की तो कोई सार्थकता नही होती है, नन्दिनी।' राजकुमारी दुधरा ने उत्तर दिया।

उस विधर्मी के लिए सार्थकता की आवश्यकता नही है, सखी !' नन्दिनी बोली, 'वह नराधम अपनी आकांक्षा की पूर्ति हेतु सब कुछ कर सकता है।

'तब तो मौर्य नरेश के लिए बड़ी विकट परिस्थिति है।' राजकुमारी दुधरा ने चिन्तित स्वर मे कहा, 'मौर्यकुमार भी उनके पास नही हैं।'

'इसी से मौर्य नरेश थोड़ा चिन्तित हैं।' नन्दिनी ने कहा।

'तुम्हें यह सूचना कहाँ से मिली ?' राजकुमारी दुधरा ने पूछा।

'पिताजी से।' नन्दिनी ने कहा।

'उन्होंने कहाँ सुना था यह समाचार ?' राजकुमारी दुधरा ने पूछा।

'आक्रमण की चर्चा तो पाटलिपुत्र के घर घर मे हो रही है, सखी !' नन्दिनी बोली 'किन्तु किसी मे भी पाटलिपुत्र नरेश के विरुद्ध बोलने का साहस नही है !

'क्या गुरुवर चाणक्य इस समाचार से अवगत हैं ?' राजकुमारी दुधरा ने पूछा।

अवश्य होंगे सखी !' नन्दिनी ने कहा, 'भूतपूर्व महामात्य शकटार का शुभचिंतक अवन्तक अब भी पाटलिपुत्र नरेश की विश्वसनीय सेवा मे है राजकुमारी !'

'क्या तुम मेरा एक काम कर सकोगी, नन्दिनी ?' राजकुमारी दुधरा ने पूछा।

'आज्ञा कीजिए राजकुमारी !' नन्दिनी ने कहा।

यह समाचार यथाशीघ्र ही राजकुमार दुधप तक पहुंचा दो।' राजकुमारी दुर्धरा ने कहा, शायद पिप्पली नरेश के लिए वे कुछ कर सकें।'

'इस समय युवराज दुधप कहाँ होंगे ?' नन्दिनी ने पूछा।

'राजधानी में !' राजकुमारी दुधरा ने कहा।

'नन्दिनी को कहाँ भेज रही हो, बेटी ?' आचार्य चाणक्य ने प्रवेश करते हुए पूछा।

राजकुमार दुधप के पास, गुरुदेव !' राजकुमारी दुधरा ने गुरुदेव को यथोचित सम्मान देते हुए कहा।

'किस कार्य हेतु ?' आचार्य चाणक्य ने पूछा।

'पाटलिपुत्र नरेश के आक्रमण की सूचना देने के लिए, गुरुदेव !' राजकुमारी दुधरा ने कहा, मौर्य नरेश ।'

'इसकी अब आवश्यकता नहीं है बेटी !' गुरुदेव चाणक्य बोले।

'ऐसा क्यों गुरुदेव ?' राजकुमारी दुधरा ने प्रश्न किया।

'समाचार पहुँच चुका है।' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'राजकुमार दुधप पहुंचने वाले ही होंगे।

'जैसी आज्ञा गुरुदेव !' राजकुमारी दुर्धरा ने कहा।

आचार्य चाणक्य ने पुलकित नेत्रों से राजकुमारी दुधरा की ओर देखा और मुस्कराते हुए अपने कक्ष की ओर बढ़ गए।

राजकुमारी दुधरा और नन्दिनी उस राजनीति के पुतले की ओर निहारती रह गईं।

चौदह

महर्षि कात्यायन !'

क्या आज्ञा है महाराज ?' महर्षि कात्यायन ने यथोचित सम्मान के बाद कहा।

'हम विशाल गुप्त का सिर कुचला हुआ देखना चाहते हैं, ऋषिवर !' पाटलिपुत्र नरेश ने कुपित मुद्रा मे कहा ।

'महाराज ! अपने लगाये हुए पौधे को स्वयं न उखाड़िए ।' महर्षि कात्यायन ने कुछ सोचकर कहा, 'इससे आपकी सर्वत्र निन्दा होगी ।'

'महाराज नन्द का आदर उनकी शक्ति है, ऋषिवर !' पाटलिपुत्र नरेश उद्विग्न हो उठे ।

अभी समय है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने फिर समझाने का प्रयास किया 'सोच कर कदम उठायें, तो हितकर होगा ।'

'महाराज नन्द ने कभी सोचना नही सीखा है, ऋषिवर !' पाटलिपुत्र नरेश ने उसी मुद्रा मे कहा 'हमने सदा इच्छा की पूर्ति को सराहा है ।'

'यह इच्छा आपके लिए घातक सिद्ध हो सकती है, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने फिर कहा, 'यूनान सम्राट सिकन्दर के आक्रमण से बचने के लिए विशालगुप्त से मत बिगाड़िए । वे एक कुशल सेनापति के साथ साथ अब भी राजभक्त हैं ।'

'राजभक्त !' अट्टहास गूंज उठा, 'साम्राज्य का अपमान करने वाला जब राजभक्त हो सकता है, महर्षि कात्यायन, तो देशद्रोही किसे कहेंगे ?'

'यह आपका भ्रम है महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा ।

'अब हम इस भ्रम से निकलना नही चाहते, ऋषिवर !' पाटलिपुत्र नरेश ने दृढ़ता के साथ कहा ।

'जैसी महाराज की इच्छा ।' कहकर महर्षि कात्यायन शान्त हो गए ।

'सेनापति !' पाटलिपुत्र नरेश ने पास मे बैठे सेनापति को सम्बोधित किया ।

'आज्ञा कीजिए महाराज !' सेनापति ने खड़े होकर कहा ।

'हमारी कितनी सेना तैयार है ?' पाटलिपुत्र नरेश ने पूछा ।

'एक लाख के आसपास महाराज !' सेनापति ने उत्तर दिया ।

'सेनापति ! पचास हजार सैनिकों को लेकर अभी पिप्पली कानन की ओर प्रस्थान करो ।' पाटलिपुत्र नरेश ने आदेश दिया ।

जो आज्ञा, महाराज !' सेनापति ने नतमस्तक होकर कहा ।

'और सुनो !' पाटलिपुत्र नरेश बोले, 'विशालगुप्त जीवित या मृत हमारे समक्ष आना चाहिए।'

'महाराज !' सेनापति ने कहा।

क्या कहना चाहते हो सेनापति !' पाटलिपुत्र नरेश ने पूछा।

'कूच करने से पूर्व मैं कुछ दिनों का अवकाश चाहता हूँ महाराज !' सेनापति ने विनम्र स्वर में कहा।

'अवकाश ! पाटलिपुत्र नरेश ने दुहराया, 'तुम्हारे अवकाश का आशय हम समझे नहीं ?

सेनापति नतमस्तक किए पाटलिपुत्र नरेश के सामने खड़े रहे।

'जानते हो, सेनापति ! पाटलिपुत्र नरेश ने कुपित स्वर में कहा, यह राजाज्ञा का उल्लंघन है। हमारे राज्य में इसका दण्ड !'

'महाराज ! मेरा यह अभिप्राय बिल्कुल भी नहीं है।' सेनापति ने दीनता के साथ कहा।

इसका आशय और क्या हो सकता है सेनापति ?' पाटलिपुत्र नरेश का स्वर और ऊंचा हो गया, 'कदाचित तुम विशालगुप्त पर इसलिए आक्रमण नहीं करना चाहते कि वह तुम्हारा शुभचिन्तक रहा है।'

सेनापति शान्त उसी मुद्रा में खड़ा रहा।

ऐसा सोचना तुम्हारी भूल है, सेनापति ! पाटलिपुत्र नरेश बोले, 'राजनीति के अखाड़े में पिता भी पुत्र का शत्रु बन सकता है। राजनीति की आँखें अपना पराया नहीं देखतीं।

'महाराज ! विशालगुप्त मेरा शुभचिन्तक नहीं अपितु प्रतिद्वन्द्वी रहा है।' सेनापति का स्वर निकला 'मैं यह भी भली भाँति जानता हूँ कि इससे अच्छा अवसर अन्तर की अग्नि को शान्त करने के लिए नहीं मिलेगा।'

फिर इस अच्छे अवसर को क्यों खोना चाहते हो ? पाटलिपुत्र नरेश ने पूछा।

'महाराज ! कौन जानता है इस युद्ध की शतरंज का पासा किस ओर पड़े ?' सेनापति ने कहा 'इससे पूर्व मैं कन्या का विवाह कर देना चाहता हूँ।'

कन्या का विवाह !' चिंघाड़ उठे पाटलिपुत्र नरेश, यह कदापि नहं

'हाँ, सेनापति !' विशालगुप्त ने उत्तर दिया।

'मौय नरेश ! आपने अपन शत्रु पर विश्वास कसे किया ?' पाटलिपुत्र के सेनापति ने पूछा।

इसलिए सेनापति कि तुम मौय नरेश के शत्रु तो हो सकते हो पर धम के शत्रु नही।' विशालगुप्त ने उत्तर दिया।

'युद्ध मे यह धम अधम कैसा मौय नरेश ?' पाटलिपुत्र के सेनापति ने प्रश्न किया।

सेनापति ! यदि यह युद्ध अधम न होता, तो हम शायद यहा अकेले न आते।' विशालगुप्त ने गम्भीर मुद्रा मे कहा।

स्पष्ट कीजिए मौय नरेश !' पाटलिपुत्र के सेनापति ने कहा, 'आप के यहाँ आने का कारण ।

'सेनापति !' विशालगुप्त बोले 'आज तुम और तुम्हारी सेना चादी के टुकडो को हलाल करने लिए इस अ यायपूण युद्ध के लिए तैयार है।'

'मौय नरेश ! आप साम्राज्य का अपमान करके भी इस युद्ध को अ यायपूण कह रहे हैं।' पाटलिपुत्र के सेनापति ने आश्चयचकित स्वर म कहा।

सेनापति ! यदि हमने साम्राज्य का अपमान किया था, तो आपके महाराज न द ने हम वही ब दी क्यो नही बना लिया ?' विशालगुप्त न कहा आज पुत्र का दण्ड पिता को देन चले हैं। यदि च द्रगुप्त न राजकुमारी सुन दा के प्रस्ताव को ठुकरा दिया था, तो इसमे उसके पिता का क्या दोष ?'

दोष जानना चाहते हैं, मौय नरेश !' पाटलिपुत्र के सेनापति बोले।

हाँ ! मौय नरश ने सक्षेप म कहा।

'आपको मौयकुमार को समझाना चाहिए था !' पाटलिपुत्र के सेनापति ने उत्तर दिया।

सेनापति ! ऐसा करना और मौयकुमार की इच्छा के विरुद्ध कदम उठाना शास्त्रो के विरुद्ध था।' विशालगुप्त न उत्तर दिया।

आपने राजकुमारी को वापस क्या नही भेजा, मौर्य नरेश ?' पाटलिपुत्र के सेनापति ने कहा, आज इसी के लिए महाराज के कोप का भाजन

बनना पड़ रहा है।'

'यह कोप नहीं प्रपच है, सेनापति !' मौर्य नरेश बोले, 'इसी के आधार पर तुम्हारे महाराज अपने हृदय का काटा निकालना चाहते हैं। यदि राजकुमारी सुनन्दा योगिनी वेश मे हमारे राज्य मे दो चार दिन रह गई, तो उनका पता हमे कैसे लग सकता था ? हमारे गुप्तचर विभाग को इस बात का तनिक भी सशय नही था। एक बात और ।'

'वह क्या मौर्य नरेश ?' पाटलिपुत्र सेनापति ने पूछा।

'पाटलिपुत्र नरेश ने राजकुमारी सुनन्दा को अपने ही साम्राज्य मे क्यो नही खोजा ?' मौर्य नरेश बोले अब तुम ही विचार करो कि यह काम धर्म का है अथवा अधर्म का।'

'यदि ऐसा है तो यह महाराज का अनौचित्य है, मौर्य नरेश !' पाटलिपुत्र के सेनापति ने उत्तर दिया।

'यदि अनौचित्य है, तो इस रोग को दूर करो, सेनापति !' मौर्य नरेश ने कहा।

'इस रोग का उपचार भी तो बताइए मौर्य नरेश !' पाटलिपुत्र के सेनापति ने पूछा।

'उपचार !' कुछ सोचकर बोले मौर्य नरेश, 'तुम अभी अचेतनावस्था मे ही रहो।'

'इससे क्या होगा ?' पाटलिपुत्र के सेनापति ने पूछा।

'हमारी सेना आक्रमण करेगी।' मौर्य नरेश ने आश्वस्त स्वर मे कहा, 'तुम्हारे कुछ सहस्र सैनिक बन्दी बना लिए जायेंगे। इस युद्ध मे रक्त की नदियाँ नही बहेंगी।'

'जैसी आपकी इच्छा।' पाटलिपुत्र के सेनापति के मुख से निकल गया।

इस तरह पाटलिपुत्र के सेनापति की सहमति प्राप्त कर मौर्य नरेश उसी छद्म वेश मे अपनी सेना की ओर निकल गए। एक घंटे के बाद ही उनकी सेना की ओर से भयकर आक्रमण हुआ। पाटलिपुत्र के सैनिकों ने पिप्पली कानन के सैनिको का सामना किया, पर इसमे विजयश्री मौर्य नरेश के हाथ लगी।

जब इसकी सूचना पाटलिपुत्र नरेश को मिली, तो वे खून का घूंट पीकर रह गए। इससे बड़ा अपमान और क्या हो सकता था? प्रतिशोध की भावना और प्रबल हो उठी। उन्होंने महाबलाधिकृत को महर्षि कात्यायन और विशाल सेना के साथ इस पराजय का प्रतिशोध लेने के लिए भेजा।

थका हुआ सिंह! पाटलिपुत्र की विशाल सेना के सामने ठहर न सका। वे पराजित होकर तराई वाले राज्य की ओर निकल गए। उन्हें बन्दी बना लेने का पाटलिपुत्र नरेश का सपना पूरा न हो सका। उनकी विशाल सेना पिप्पली कानन पर अपना अधिकार कर वापस पाटलिपुत्र को लौट गई।

इस पराजय ने मौर्य नरेश विशालगुप्त को पाटलिपुत्र नरेश का घोर शत्रु बना दिया।

उधर बूढ़े शकटार और चाणक्य को राजनीति का कार्य पूर्ण करने के लिए तक्षशिला को छोड़ कर मौर्य नरेश के तराई के क्षेत्र में जाना पड़ गया।

तक्षशिला नरेश के निधन के बाद युवराज आंभि सिंहासन पर बैठे। वे भी अपने पिता की ही नीति पर चले। उनकी नीति आचार्य चाणक्य और बूढ़े शकटार के लिए अप्रिय थी। वह शत्रु के लिए खुला निमंत्रण पत्र था।

चाणक्य ने अपना प्रतिशोध लेने के लिए अवष्ट शिव, मद्र त्रिगत, शूद्रक यौधेय, मलेच्छ, मालव चोर, आश्वकायन, कट किरात, काम्बोज, भूपाल और आटविका को संगठित करके उन्हें युद्ध कला में निपुण किया। ये सभी चाणक्य के उपदेशों को सुन सुन कर नवनंद वंश के घोर शत्रु बन गए। सैन्य शक्ति को बढ़ाने के लिए पैसा भी इकट्ठा किया गया। बूढ़े शकटार भी इस कार्य में उनका दायाँ हाथ बने।

सोलह

रात्रि का अंतिम पहर आखिरी सास ले रहा था।

यूनान सम्राट सिकन्दर के सैनिक अपना विजयोत्सव मना रहे थे।

मशालो की रोशनी मे सैनिको के उल्लसित चेहरे चमक उठते थे। यूनान सम्राट सिकन्दर अपने शिविर मे बैठा भावी कार्यक्रम को अंतिम रूप दे रहा था। परामश के लिए उसका महामात्य सेल्यूकस पास मे ही विराजमान था।

इन दोनो के अतिरिक्त पास के शिविर मे एक व्यक्ति और भी था जो कि किसी अछूते सौंदय का शिकार होकर, मदमाती आँखो मे लाल लाल डोरे बना कर मदहोशी को गले लगा रहा था। वह था सिकन्दर का विश्वासपात्र फिलिपोस।

फिलिपोस के हाथो मे झूम रहा था षोडशी कन्या का सुन्दर चित्र। उस कामिनी की मोहक मुस्कान उसके हृदय म टीस बन चुकी थी। उस टीस की चुभन को वह घोल देना चाहता था मदिरा की मादकता म।

बोतल खुली

उसकी मादकता की कडवी सुगन्ध शिविर मे फैल गई।

पैंग भरे और हलक से नीचे उतरत गए।

पैर लडखडा उठे।

कामिनी का चित्र हाथ से छूट शय्या पर जा गिरा। तब उसकी लडखडाती जुबान स निकला ऐस छूटने से क्या हुआ? दिल स छूटा तो जानू यह क्या तुम मुस्करा रही हो? और मैं। हिचकी आई तुम्हारे वियोग मे झुलसा जा रहा हूँ, हेलेन! प्यारी हेलेन! तुम्हे क्या पता है कि मैं तुम्हे कितना चाहता हूँ जी चाहता है कि मैं तुम्हारे से प्रेम की पीर को कह दू लेकिन तुम उस विदेशी के मोह म एसी फसी हो कि मुझ स बात तक नही करती तुम्हारी खातिर ही अपने मुल्क को छोडकर टक्करें मार रहा हूँ। मानोगी हेलेन।'

फ़िलिपोस थोडी देर तक मुग्ध नेत्रो से उस चित्र को देखता रहा।

फिर उसने दुहराया।

अब तुम्ही इसाफ स वह दो ।'

क्या इसाफ स वह दू सरकार ?' शहरयार ने शिविर म प्रवेश करते हुए कहा।

फ़ाखिल आँखो ने देखा ।

उनका सच्चा साथी शहरयार उनके सामने खडा कह रहा है।

'आओ शहरयार !'

शहरयार आगे बढा।

कुछ किया तुमने ? फिलिपोस ने पूछा।

'सरकार ! बडी तीखी छोकरी है। खुदा कसम ऐसी तो जिन्दगी म पहले कभी नही देखी हमेशा उस विदेशी के साथ ही बात करती है उसी के साथ घूमती है और आपकी तो उसे तनिक भी परवाह नही है।'

तीखी है, तभी तो फ़िलिपोस क हाथो स बची हुई है।' फिलिपोस न अतिम घूट हलक के नीचे उतारत हुए कहा।

फिर क्या किया जाए सरकार ?' शहरयार न पूछा।

हेलेन को कब्जे म लाना होगा। फिलिपोस बोला।

'अगर उसने सेल्यूकस स कह दिया !' शहरयार न कहा।

तब क्या होगा ?' फिलिपोस ने पूछा।

'सर धड से अलग होगा सरकार ! शहरयार बोला, 'इसीलिए कहता हूँ, सरकार ! आप इसका ध्यान छोडें। इससे भी ज्यादा खूबसूरत आपके कदम चूमने को तैयार हैं।'

ऐसा करना मेरे हाथ की बात नही शहरयार !' फिलिपोस ने कहा।

फिर किसके हाथ की बात है, सरकार ? शहरयार ने पूछा।

'दिल !' फिलिपोस ने उदास मन से जवाब दिया।

इस दिल का सौदा कही मौत न बन जाए सरकार !' शहरयार ने यह कहकर समझाने का प्रयास किया।

हम यूनानी मौत से नही डरते, शहरयार ! फ़िलिपोस ने लापरवाही से जवाब दिया।

'तो फिर किससे डरते हैं, सरकार !' शहरयार ने प्रश्न किया।

'प्यार की मार से ।' फिलिपोस का छोटा सा उत्तर था।

वह कैसी होती है, सरकार ?' शहरयार ने मजाक मे पूछा।

'बड़ी तीखी, शहरयार !' फिलिपोस बोला।

'अब क्या हुक्म है, सरकार ?' शहरयार ने पूछा।

'बस तुम हेलेन के पीछे साये की तरह लगे रहो।' फिलिपोस बोला, 'पर याद रहे उसे शक न होने पाए। उसकी सारी रिपोर्टें मुझे मिलनी चाहिए।'

सरकार ! एक बात कहूँ ?' शहरयार डरता हुआ बोला।

'कहो !' फिलिपोस के मुख से निकला।

उस विदेशी का ही रास्ते से क्यो नही हटा देते ?' शहरयार ने सलाह दी।

'यह बहुत मुश्किल काम है शहरयार !' फिलिपोस कुछ सोच कर बोला, 'वह छोकरा हर चीज मे आगे है। सारे उस्ताद उसकी कद्र करते है।'

'सरकार, धोखे से ।' शहरयार के मुख से निकला।

'वह ऐसा मौका ही नही देता।' फिलिपोस ने कहा, 'कभी मेरे साथ कही जाता ही नही।'

तो फिर सरकार !' शहरयार ने पूछा।

'कोशिश मे लगे रहो।' फिलिपोस का जवाब था।

अब उसकी आखें नीद से बन्द होती जा रही थी। वह शय्या पर लुढक गया।

शहरयार ने उसे सोता हुआ देखा, तो वह शिविर से बाहर निकल आया और अधकार मे विलीन हो गया।

सत्रह

प्रातःकाल का समय था। चन्द्रगुप्त अपने कक्ष में बैठा हुआ अतीत की स्मृतियों से खेल रहा था। दुर्धरा का सच्चा अनुराग उसे यवन प्रदेश में भी बेचैन किए हुए था।

उसका स्नेही वाद्य उसके पास ही रखा था।

जब कभी भी उसका अन्तःकरण बेचैन हो उठता था, तो वह उस वाद्य के साथ अपने अन्तःकरण के भावों को प्रकट कर लिया करता था।

पिछली रात्रि उसकी करवटें बदलते हुए बीती थी।

विहान वेला से ही उसे दुर्धरा की स्मृति सता रही थी। यह वियोग की वेला अभी लम्बी थी। ऐसे में क्या हो? उसका अन्तःकरण सोच उठा।

तभी उसने वाद्य की ओर देखा।

दूसरे क्षण उसकी उँगलियाँ वाद्य के तारों से खेल रही थीं।

तभी एक सुरीली तान यवन प्रदेश के वातावरण में गूंज उठी।

किसी गीत की पंक्तियाँ वह गुनगुना उठा।

तुम सुन सकोगी क्या कभी रोते हृदय का गान मेरा?

तभी कक्ष का द्वार खुला।

'किसको सुनाना चाहते हो?' हेलेन ने प्रवेश करते हुए पूछा।

'तुम!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने स्तब्ध नेत्रों से उस सुन्दरी की ओर देखा।

'हाँ मौर्यकुमार!' हेलेन बोली, 'आज हम सैर के लिए आपको ढूंढते ढूंढते थक गए। और एक आप हैं जो किसी बेवफा के लिए गमगीन बैठे हैं।'

'वह बेवफा नहीं, देवी!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'इसमें उसका क्या दोष है? मैं ही अपने हृदय की बात उससे न कह सका और यहाँ चला आया। क्या आप मेरी भाषा को समझ सकती हैं?'

'समझ तो लेती हूँ मौर्यकुमार!' हेलेन बोली, पर ठीक तरह बोल नहीं पाती।

'वह सहस्रो मे एक है, हेलेन !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'फिर भी मैं प्रणय का अनुनय न कर सका।'

'क्या शादी न होने का खतरा है ?' हेलेन ने पूछा।

'ऐसा तो नही लगता।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'तो फिर ?' हेलेन ने उत्सुकता से पूछा।

'मैं स्वय विवाह का प्रस्ताव रखना नही चाहता !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'तो फिर आपको भी बुलन्द ख्यालात का शहजादा समझा जाए।' हेलेन ने कहा।

'यह तो अपने अपने विचारो का सौदा है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने वाद्य को एक ओर रखते हुए कहा।

'आप औरत की खूबसूरती को किस नजरिये से देखते हैं ?' हेलेन ने पूछा।

'नारी का वास्तविक सौन्दर्य उसका स्वास्थ्य है। साफ रग, इकहरा बदन, चन्द्रमुख खजन से नेत्र पतली कटि और इन सब मे बढकर उसका आचरण आदि उसके सौन्दर्य के उपादानो मे आता है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'मेरा भी ऐसा ही ख्याल है, मौर्य कुमार !' हेलेन खुश होकर बोली, 'पर इतना और बताइए कि आपके मुल्क मे कैसी मुहब्बत अच्छी समझी जाती है ?'

'हमारे देश मे निष्कपट प्रेम को अधिक महत्त्व दिया जाता है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'विवाह करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि वधू वर से पाच सात वर्ष छोटी होनी चाहिए।

ऐसा रिवाज तो यूनान मे भी है, मौर्य कुमार !' हेलेन कुछ सोचकर बोली, 'क्या आपके मुल्क मे शौहर बीवी को गुलाम नही समझता ?'

नही, कदापि नही !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने दृढता के साथ कहा।

'आपके यहा लडकी का ब्याह किस उम्र मे कर दिया जाता है ?' हेलेन ने प्रश्न किया।

'अठारह वर्ष के बाद योग्य वर के मिल जाने पर कन्या का विवाह

कर दिया जाता है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'हमारे मुल्क में भी ऐसा ही है।' हेलेन बोली।

'तो अभी तुम इससे बहुत दूर हो हेलेन !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने हँसकर कहा।

'हाँ अभी तो मैं अब्बा हुजूर के लिए छोटी सी गुड़िया ही हूँ, मौर्य कुमार !' हेलेन ने कहा, 'कई दिन से मैं आपसे एक बात पूछना चाहती थी, लेकिन उसका मौका ही नहीं मिल पाता था। सोचती हूँ, आज उसे पूछ ही डालूँ।'

'अवश्य पूछिए !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'आप अपने मुल्क को छोड़कर यहाँ आए हैं।' हेलेन ने कहा, 'क्या फौजी तालीम हिन्दुस्तान में अच्छी नहीं दी जाती ?'

'मेरा यहाँ आने का कारण यह नहीं है हेलेन !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कुछ सोचते हुए कहा, 'मुझे तो वैसे ही विविध प्रकार की विद्या सीखने की इच्छा रही है, इसलिए मैं तुम्हारे मुल्क में चला आया।'

'ठीक है !' सुनकर हेलेन बोली, 'हमने मौर्य कुमार आपके हिन्दुस्तान के बारे में अजीबोगरीब बातें सुनी हैं, हमें तो उन पर यकीन नहीं आता।'

'वे कौन-सी बातें हैं कुमारी हेलेन ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'हिन्दुस्तानी जादू के बारे में।' हेलेन ने कहा, 'सुना है वहाँ इंसान को मक्खी बना दिया जाता है।'

'ऐसा तो नहीं है कुमारी हेलेन !' चन्द्रगुप्त ने कहा, 'हाँ, ईरान के जादू के समान ही वहाँ भी थोड़े बहुत तिलिस्मी खेल दिखाए जाते हैं।'

'तिलस्मी खेल कैसे होते हैं ?' हेलेन ने पूछा।

'यही जीवित साँप को खा जाना, अँगारों पर सो जाना, अँगारों को निगल जाना, पानी पर चलना, ताश का जादू, हाथ की सफाई, दृष्टि बाँध देना आदि।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'यह सब आपने खुद देखा है ?' हेलेन ने आश्चर्यचकित स्वर में पूछा।

'जी हाँ कुमारी हेलेन !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने मुस्करा कर कहा।

थोड़ी देर तक निस्तब्धता रही।

इसके बाद हेलेन मौर्यकुमार के वाद्य से खेलती रही।

चन्द्रगुप्त मौर्य उसकी रूप सुधा का पान करते रहे। फिर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए बोले, कुमारी हेलेन ! फिलिपोस तुमसे बातें करने का बहुत प्रयत्न करता है, किन्तु तुम उसे अवसर ही नहीं देती।'

'वह बदतमीज है। उसकी बात मत करो, मौर्यकुमार !' गुस्से में कह उठी हेलेन, वह कमीना हम दोनों को देखकर जलता है। अबकि बार सामने पड़ा तो उसे फटकार सुनने को मिलेगी।'

'वह तुम्हारे देश का है कुमारी, हेलेन !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'इसी बात का तो दुःख है, मौर्य कुमार !' हेलेन ने कहा 'एक हिन्दुस्तानी यूनानी की बेवकूफी का नक्शा अपने साथ लिए जा रहा है।'

तुम्हें अपने देश पर गर्व है ? चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

हर इन्सान को अपने मुल्क पर होना चाहिए।' हेलेन ने जवाब दिया।

तुम्हारे इन विचारों से मैं सहमत हूँ।' खुश होकर चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'ओह ! बहुत देर हो गई। अब चलने के लिए इजाजत चाहूँगी।' हेलेन ने उठते हुए कहा, 'बाकी बातें फिर होंगी मौर्यकुमार !'

'जैसी तुम्हारी इच्छा !' चन्द्रगुप्त मौर्य का उत्तर था।

उत्तर सुनकर हेलेन मदमाती चाल से कक्ष से बाहर निकली और घोड़े पर बैठकर अपने गन्तव्य स्थान की ओर बढ़ गई।

अठारह

सध्या का समय था। हेलेन हाथ में गुलेल लिए पक्षियों का शिकार करने के लिए सुरम्य स्थली में बैठी हुई थी। उसका ध्यान कबूतर के

जोड़े की ओर था जो प्रेमालाप में लीन था। सहसा फिलिपास का स्वर उसके कानों में पड़ा वह कह रहा था, 'अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो सकता।

'क्या बरदाश्त नहीं हो सकता फिलिपोस?' हेलेन ने उसकी ओर देख बिना पूछा।

यही कि तुम एक विदेशी के साथ वक्त जाया करती फिरो।' फिलिपोस ने तनिक आवेश में आकर कहा।

फिलिपोस!' चीख उठी हेलन, 'तुम मुझे रोकने वाले कौन हो? अब्बा हुजूर ने तुम्हें मेरा वली मुकर्रर नहीं किया है। इसलिए सांपे के समान मेरा पीछा करना छोड़ दो।'

'माफ कीजिएगा, मिस हेलन!' फिलिपोस ने खिसियानी हँसी हसते हुए कहा तुम्हें यह खिदमतगार किसी कीमत पर भी नाराज़ नहीं करना चाहता है।

और बातें तो अब बाद में होगी फिलिपास!' हेलेन ने कहा, पर मैं यह जानना चाहती हूँ कि तुम्हारी मंशा क्या है?

'मंशा!' फिलिपोस का अट्टहास गूंज उठा। फिर कुछ क्षणों के बाद बोला, शादी।

'शादी!' चीख उठी हेलेन 'तुझ मुए कि यह हिम्मत कि अब्बा हुजूर का अदना सा खिदमतगार होकर उनकी इज्जत पर हाथ डालने की सोचे। आज ही तुझ इसकी सजा भुगतनी होगी।'

'मुझे माफ कीजिएगा मिस साहिबा!' फिलिपोस गिड़गिड़ाया, 'आगे ऐसी गलती कभी नहीं करूँगा।

ठीक है। हेलेन बोली यह आखिरी मौका देती हूँ। अब मेरी आंखों के सामने से चला जा। फिर कभी कुछ कहने की हिम्मत न करना।'

फिलिपास खिसियाना सा मुह लिए चला गया।

'बदतमीज!' हेलन के मुख से निकला और हाथ से गुलेल में लगा पत्थर छूटा। निशाना अचूक था। कबूतर पत्थर की चोट खाकर धरती पर आ गिरा। कबूतरी अपने प्रियतम को उसी अवस्था में छोड़कर दूसरी ओर को उड़ गई।

तभी किसी का स्वर हेलेन के कानों में पड़ा। 'यह अच्छा नहीं किया।'

स्वर जाना पहचाना सा लग रहा था। हेलेन ने पीछे की ओर गर्दन घुमाकर देखा। मौर्यकुमार खड़े मुस्करा रहे थे। हेलेन अपने कृत्य पर स्वयं ही पछताने लग गई।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने घायल पक्षी को उठाकर देखा। घाव उसके पैर के पास ही था। डर के मारे वह बेचारा निढाल सा हो गया था। खून बह रहा था। उन्होंने घाव को साफ करके पट्टी बांध दी और फिर उसे एक शाखा पर बैठा दिया।

हेलेन चुपचाप देखती रही।

'कुमारी हेलेन!' चन्द्रगुप्त मौर्य का स्वर उभरा, 'वायदा करो कि आज के बाद किसी निरीह जीव को नहीं सताओगी।'

'वायदा करती हूँ, मौर्यकुमार!' हेलेन ने दुःखी मन से कहा, 'आगे से ऐसा ही होगा।'

चन्द्रगुप्त मौर्य कुछ क्षण तक हेलेन की ओर निहारते रहे।

'मौर्यकुमार!' सहसा बोल उठी हेलेन, 'यहाँ पर कई रोज से गरुवे कपड़े पहने दो औरतें आई हुई हैं। उनमें से एक तो मुझसे भी ज्यादा खूबसूरत है।'

'वे औरतें तुम्हें कहाँ पर मिली थीं?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'यहीं पर!' हेलेन ने कहा, 'क्या आप उन्हें जानते हैं?'

'बिना देखे क्या कहा जा सकता है, कुमारी हेलेन!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

'वे जादू तो जरूर जानती होंगी!' हेलेन ने उत्सुकता से पूछा।

'अवश्य।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'तो जादू दिखायेंगे?' हेलेन के स्वर में आग्रह था।

'पहले मैं देख लूं।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'तभी कुछ निश्चित कर सकूंगा।'

'क्या आप उनका पता लगा सकेंगे?' हेलेन ने पूछा।

'आप के क्षेत्र में विदेशियों का पता लगाना कोई कठिन कार्य नहीं

है ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा ।

अच्छा तो पता लगने पर खबर दीजिए । हेलेन बोली ।

अवश्य !' इतना कहकर चन्द्रगुप्त मौर्य हेलन को वहीं बैठा छोड़कर चले गए ।

अंधकार की नीरवता को चन्द्र ज्योत्स्ना ने धो डाला था ।

हेलेन भी उठी और उसके कदम अपने आवास की ओर बढ़ गए ।

उन्नीस

चन्द्रगुप्त मौर्य की दृष्टि दो भिक्षुणियों पर पड़ी । वे भारतीय लग रही थीं । क्या कुमारी हेलेन ने इन्हीं को देखा है ? यह विचार उठते ही वे उनके समीप पहुँचकर बोले मेरे मन आज धोखा तो नहीं खा रहे हैं सुनन्दा ! पाटलिपुत्र की एकमात्र राजकुमारी यहाँ पर एक भिक्षुणी के रूप में । यह अनोखा रूप किसलिए महाराज ने ऐसा करने की स्वीकृति कैसे दी ?'

'सुनन्दा का जो रूप आप देख रहे हैं, वह बिल्कुल ठीक है ।' सुनन्दा ने कहा, उसमें भ्रमात्मक कीटाणुओं का स्थान बनाने की तनिक भी छूट नहीं है, मौर्य कुमार ! पाटलिपुत्र की राजकुमारी सुनन्दा का देहावसान तो उसी दिन हो गया था, जिस दिन उसके प्रणय को ठुकराया गया था ।

प्रणय ठुकराया नहीं गया था राजकुमारी सुनन्दा ! चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, वह तो केवल समझने मात्र की भूल थी ।'

राजकुमारी कह कर मुझे पाप का भागी मत बनाओ मौर्य कुमार !' सुनन्दा ने कहा मैं तो केवल एक भिक्षुणी मात्र हूँ जो कि जन कल्याण हेतु भ्रमण कर रही हूँ ।

यह क्या कह रही हैं ? चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'मैंने आपको समझने में वास्तव में भयंकर भूल की है । उसका प्रायश्चित मैं करना चाहता हूं ।

'किस प्रकार से प्रायश्चित करना चाहते हैं?' सुनन्दा ने प्रश्न किया।

आपको जीवनसंगिनी बनाकर ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'ऐसे अशुभ वचन मुख से मत निकालिए, मौर्यकुमार!' सुनन्दा ने कहा, मैं अब आपकी प्रेयसी नहीं।'

'तो क्या हैं?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'जगत माता।' सुनन्दा ने संक्षेप में कहा।

'आप अपनी अल्पायु और दृढ़ निश्चय पर पुनः विचार कीजिए।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'सोच विचार करने के बाद ही यह मार्ग चुना है, मौर्यकुमार!' सुनन्दा ने उत्तर दिया।

मेरी विनती है कि आप पाषाणी न बनें!' चन्द्रगुप्त मौर्य के शब्दों में अनुनय थी।

'मौर्य कुमार! यदि धर्म के लिए इससे भी बढ़कर कुछ बनना पड़ा, तो मैं उसके लिए तैयार हूँ।' सुनन्दा ने दृढ़ता के साथ कहा।

'मेरे प्रति आपका कोई कर्त्तव्य नहीं?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'केवल उतना ही कर्त्तव्य है जितना एक माता का पुत्र के प्रति होता है।' सुनन्दा ने गम्भीर स्वर में कहा।

'क्या आप स्नेह की भावनाओं को इतनी शीघ्र तिलांजलि दे सकेंगी?' चन्द्रगुप्त ने फिर प्रश्न किया।

मौर्य कुमार! वात्सल्य स्नेह को छोड़कर मैं सब प्रकार के स्नेह को तिलांजलि दे चुकी हूँ।' सुनन्दा के स्वर में दृढ़ता थी।

'ऐसा निश्चय करने से पूर्व मुझसे तो पूछ लिया होता।' चन्द्रगुप्त मौर्य का स्वर दुःख भरा था।

'इसकी आवश्यकता ही नहीं रह गई थी।' सुनन्दा ने कहा।

'क्या मेरी मूर्खता का यही दण्ड उपयुक्त था?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'यह दण्ड नहीं है, मौर्य कुमार!' सुनन्दा बोली, आपकी स्पष्टवादिता ने मुझे यह नई राह दिखा दी थी।'

'आपने तो राह खोज ली पर मैं किधर जाऊँ?' चन्द्रगुप्त मौर्य का

स्वर दुःख मिश्रित था।

आपके लिए भी मार्ग सुगम कर आई हूँ, मौर्य कुमार!' सुनन्दा ने कहा।

आज कैसी पहेली बुझा रही हैं?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

यह पहेली नहीं सत्य है, मौर्यकुमार!' सुनन्दा बोली।

कैसा सत्य?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्सुकता से पूछा।

आपका विवाह राजकुमारी दुधरा के साथ निश्चित कर आई हूँ।' सुनन्दा ने गम्भीर होकर कहा, 'आप जब स्वदेश लौटेंगे तभी यह पुनीत कार्य गुरुदेव की सम्मति में पूर्ण होगा।'

मेरे लिए इतना कष्ट क्यों उठाया?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

जनहित के लिए, मौर्यकुमार!' सुनन्दा ने कहा, किन्तु यहाँ कुछ और ही दिखाई देता है।

'वह क्या सुनन्दा?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'कुमारी हेलेन का अनुराग!' सुनन्दा बोली, 'क्या आप उससे विवाह करना चाहते हैं?'

यदि उसके पिता ने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार किया तो!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'फिर भी राजकुमारी दुधरा के लिए मार्ग खुला रहेगा।'

वह कैसे?' सुनन्दा ने आश्चर्य मिश्रित स्वर में पूछा।

'राजकुमारों के एकाधिक विवाह हुआ ही करते हैं।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने हँसकर उत्तर दिया।

'जैसी आपकी इच्छा।' सुनन्दा बोली 'भविष्य में मुझसे दाम्पत्य प्रेम की भिक्षा मत माँगियेगा।'

उसके लिए मैं वचनबद्ध नहीं हो सकता।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'स्पष्ट है कि आप पाप का भागी बनना चाहते हैं!' सुनन्दा के मुख से निकला।

'जो कुछ भी समझो!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'मैंने तो अपने हृदय की बात कह दी।'

'अच्छा, मौयकुमार ! अब आज्ञा दीजिए।' सुनन्दा ने कहा, 'यदा-कदा भेंट हुआ ही करेगी।'

इतना कहकर सुनन्दा अपनी-अपनी साथिन के साथ चली गई।

बीस

प्रात काल का सुहावना समय था। चन्द्रगुप्त मौय अपने घोड़े पर चढ कर भाले और धनुष के साथ मृगयाथ निकले थे। थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक सुन्दर जल प्रपात दिखाई दिया। वे उसके स्वच्छ जल में स्नानादि से निवृत्त होकर आगे की ओर बढे। थोड़ी दूरी पर देखा पाषाण निर्मित देवालय था। वह आर्यों द्वारा निर्मित सा लगता था। उसकी वास्तुकला ऐसा ही दर्शा रही थी। उसके सभी भागों में यक्ष यक्षणियों की पाषाण प्रतिमाएँ बनी हुई थी। इसके अतिरिक्त चित्रकारी भी सुन्दर ढग से ही हुई थी। उसके पार्श्वों मे स्त्रियों की भिन्न भिन्न अवस्थाओं के चित्र विद्यमान थे। इस देवालय मे सारी सभ्यता का दिग्दशन पाषाण प्रतिमाओं द्वारा ही करा डाला गया था। मौयकुमार उनके इस रूप को निहारते ही रह गए। तभी उनके कानों मे घोड़ा के टापो की आवाज़ पडी। उन्होंने मुड कर देखा कि फिलिपोस तेज़ी के साथ घोडा दौडाता हुआ उनकी ओर आ रहा था। उसने पास पहुँच कर कहा, 'कहिए, मौय शाहजादे ! आप हमारे मुल्क मे लडाई की तालीम लेने आए हैं या और कुछ लेने ?'

'मैंने यहाँ आकर किसी का अहित नहीं किया, फिलिपास !' चन्द्रगुप्त मौय ने कहा, फिर इन बातों का प्रयोजन !'

मेरे अरमानों को कुचल कर ऊपर से बातें बनाते हो !' फिलिपोस ने घोडे से उतरते हुए गुस्से मे कहा।

'आपके अरमान कुचले जाएँ, ऐसा काय मैंने नहीं किया।' चन्द्रगुप्त

ने भृकुटि तानते हुए कहा।

अब यूठ म काम नही चलेगा, मौय शहज़ादे !' फिलिपोस दाँत पीसता हुआ बोला 'आप निरे आस्तीन के साँप निकले।'

'फिलिपोस ! चिल्ला उठे चन्द्रगुप्त मौर्य, 'अपने अपशब्दो को वापस लो, अन्यथा अच्छा नही होगा।'

अब इन गीदड भभकियो से काम नही चलेगा, मौय शहजादे !' फिलिपोस ने गुस्से म भर कर कहा, 'एक म्यान मे दो तलवारें नही रह सकती हैं। अब हमे तलवारो के जोर पर ही फैसला करना होगा कि हेलेन किसकी है ?

अब समझा ! चन्द्रगुप्त मौय ने कहा लेकिन याद रखो फिलिपोस, आपको हलन एक आँख भी देखना पसन्द नही करती।'

उसकी पसन्द से कुछ नही होता, मौय शहजादे !' फिलिपोस न कहा, मैं जो चाहूगा वही होगा। लेकिन दोस्ती के नाते मैं फिर यही सलाह दूगा कि आप अपने मुल्क को कल ही लौट जाए।'

'क्यो ?' चन्द्रगुप्त मौय न आश्चयचकित स्वर म पूछा।

'हेलेन के लिए मैं आपक खून स हाथ रगना नही चाहता।' फिलीपोस गुस्से म बोला।

हम भारतीय भी खून बहान मे नही डरत, फिलिपास ! चन्द्रगुप्त मौय ने गुस्से मे कहा, 'यदि मन मे जोर आजमाने की इच्छा है तो मदान मे आ।'

'आप अभी छोटे हैं यही ध्यान आता है।' फिलिपोस ने कहा, इस लिए अपने रास्ते से हटने के लिए बार-बार कह रहा हू।

मरी अवस्था का विचार मत करो, फिलिपास ! चन्द्रगुप्त मौय गुस्से म बोले शक्ति का प्रदशन भी कर क देख लो।

'कब ? फिलिपास ने पूछा।

परीक्षा अवसर पर यूनान सम्राट स आना लेकर !' चन्द्रगुप्त मौय ने उत्तर दिया।

'ठीक है। इतना कह कर फिलिपास अपने घोडे पर चढ कर उसी ओर को बढ़ गया जिधर स आया था।

उसके जाने के बाद चन्द्रगुप्त मौर्य देवालय के चबूतरे पर बैठ कर फिलिपोस के सम्भाषणों के विषय में विचार करने लगे।

इक्कीस

यूनान सम्राट सिकन्दर आस पास के राज्यों पर विजय पताका फहरा कर अपनी राजधानी लौट आए थे। अब उसके सामने एक ही सपना शेष रह गया था। वह था भारत विजय। आज उसी के लिए खुले दरबार में मन्त्रणा की जा रही थी। सभी मन्त्रीगण और सभासद गम्भीर मुद्रा में अपने अपने स्थान पर बैठे हुए थे। किन्तु सेनापति फिलिपोस का स्थान खाली पड़ा था।

'फिलिपोस अभी तक दरबार में हाजिर क्यों नहीं हुए ?' सिकन्दर ने महामात्य सेल्यूकस से प्रश्न किया।

'जहाँपनाह !' महामात्य सेल्यूकस ने कहा, जिस दिन से उस हिन्दुस्तानी नौजवान ने फिलिपोस को हराया है, तब से उसका चेहरा मुरझाया-सा रहता है। वह रात दिन अपने डेरे में ही पड़ा रहता है।'

'ठीक कहते हो, सेल्यूकस !' सिकन्दर ने कहा, 'वह हिन्दुस्तानी नौजवान गजब का होशियार है। उस जैसा बहादुर हमारी फौज में दिखाई नहीं देता। अगर वह नौजवान इस हमले में हमारा साथ दे, तो हमारी फतेह आसानी से हो सकेगी।'

'आप ने ठीक फरमाया, जहाँपनाह !' महामात्य सेल्यूकस ने कहा, 'उसे दरबार में बुला कर पूछ लिया जाए।'

'ठीक है ! ऐसा ही करो।' सिकन्दर ने कहा।

महामात्य सेल्यूकस ने तत्काल दो यूनानी सिपाहियों को चन्द्रगुप्त मौर्य को दरबार में बुलाने के लिए भेज दिया।

उन दोना यूनानी सिपाहियो ने फौरन उन्हे दरबार मे उपस्थित कर दिया।

चन्द्रगुप्त ने दरबार मे प्रवेश करते ही सिकन्दर को राजसी अभिवादन किया।

सिकन्दर ने अभिवादन को सहर्ष स्वीकार करते हुए कहा 'नौजवान! हम तुम्हारी बहादुरी के बहुत कायल हैं। साथ ही तुम्हारी फौजी तालीम की लियाकत ने हमे इनाम देन के लिए मजबूर कर दिया है। हम तुम्हे दो अच्छे याब इनाम के तौर पर देते हैं और हमारी ख्वाहिश है कि तुम सेल्यूकस की मातहती मे आला पद को सम्भालो और हिन्द के हमले मे हमारा साथ दो।'

'देव का पुरस्कार शिरोधाय है।' चन्द्रगुप्त मौय ने निडरता से कहा, 'मैं भारत के विरुद्ध आपकी सहायता करके देशद्रोही नही कहलाना चाहता, परन्तु भारतीय नरेश विशाल गुप्त की ओर से मैत्री का हाथ अवश्य बढाना चाहता हूँ।

'नौजवान! तुम्हारे ख्यालात जान कर हम खुश हुए।' सिकन्दर ने कहा, 'लेकिन हम दूसरी बात कैसे मान सकते हैं?

'देव! यदि आप मेरे राज्य को मैत्री के लिए उपयुक्त नही समझते हैं, तो मुझे स्वदेश लौटने की आज्ञा प्रदान करें।' चन्द्रगुप्त मौय न कहा।

नौजवान! कोई हुक्म देने से पहले हम तुम्हारी बातो पर फिर एक बार गौर करना चाहेंगे।' सिकन्दर ने कहा।

जैसी देव की इच्छा!' चन्द्रगुप्त मौय न कहा, 'मैं सप्तसिंधु के नरेशो को सगठित करके पाटलिपुत्र नरेश को खत्म करना चाहता हूँ। इसीलिए मैं आपकी सहायता कर सकता हूँ किन्तु विजयी होने पर मैं एक सगठित राज्य करना चाहता हूँ। उस राज्य के साथ आपका सम्बन्ध केवल मैत्री भाव का ही हो सकता है।

ऐसा नामुमकिन है, नौजवान! सिकन्दर ने कहा हम अपनी शमशीर की ताकत पर सारे हिन्द को जीतेंगे। हम तुम्हें दोस्ती की जगह पर नौकरी दे सकते हैं।'

'क्षमादान हो देव! चन्द्रगुप्त मौय ने कहा 'यह भारतीय राज

कुमार का अपमान है। मेरे लिए यह असह्य है। आप जाने की अनुमति प्रदान करें।'

'नौजवान ! तुम जानते हो कि सिकन्दर के सामने हो।' सिकन्दर ने कहा, 'इसके लिए तुम्हें सजा भी दी जा सकती है।'

'हां, देव ! इससे मैं भली भाँति परिचित हूं।' चन्द्रगुप्त मौर्य के स्वर में निडरता थी।

'नौजवान ! हम जानना चाहते है कि तुम हिन्द जाकर क्या करोगे ?' सिकन्दर ने कहा, 'यहाँ पर तुम्हें आला ओहदा मिलेगा।'

'इसके लिए धन्यवाद है, देव ! चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, देश के प्रति भी मेरा कर्त्तव्य है। वहां जाकर उसे ही पूर्ण करूंगा।'

'क्या हमारे ही इल्म से हमारा मुकाबला करोगे नौजवान !' सिकन्दर ने कहा।

'नहीं, देव ! इससे बचने का प्रयास करूंगा।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, किन्तु फिर भी मैं देश के प्रति कर्त्तव्य को भुला नहीं सकूंगा। आप स्वीकार न करेंगे तो मैं आपको वचन दे सकता हूं।'

'नौजवान ! तुम हमारी शमशीर का रोक कर तौहीन करना चाहते हो।' कहते कहते सिकन्दर की भृकुटि तन गई।

'जहाँपनाह ! आप गुस्सा न करें। यह नौजवान कुछ पागल-सा लगता है।' महामात्य सेल्यूकस ने कहा।

'वजीरे आज़म ! यह नौजवान पागल नहीं है।' सिकन्दर बोला, 'यह अपने इरादे को पूरा करने के लिए सब कुछ कर सकता है।'

'हाँ देव ! आप ठीक समझे !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, मैं देश प्रेम को नहीं त्याग सकता।'

'नौजवान ! जानते हो, तुम क्या कह रहे हो ?' सिकन्दर ने कहा।

'जी हाँ, देव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने संक्षेप मे कहा।

'नौजवान ! तुम हिन्द के खैरख्वाह होने की वजह से हमारे दुश्मन हो।' सिकन्दर ने कुपित स्वर मे कहा, 'ऐसी हालत मे हम तुम्हें सजा सुना सकते हैं।'

'अब भी मौका है, नौजवान !' महामात्य सेल्यूकस ने कहा, 'तुम

जहाँपनाह से बकत ले सकता हूँ। कैदी बनने से यह इज्जत की आजादी लाख दर्जे अच्छी है।'

'मैं अच्छी तरह विचार कर चुका हूँ, महामात्य !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने निडरता के साथ कहा 'यदि मैं विद्यार्थी आपका शत्रु हूँ, तो अवश्य दण्डित कीजिए।'

'नौजवान ! कैदी की जिन्दगी बहुत मुश्किल होती है।' सिकन्दर ने कहा।

'जानता हूँ, देव !' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले 'क्षत्रिय का जीवन कँटीला होता है। इसीलिए वह किसी बात से डरा नहीं करता।'

'नौजवान ! अगर तुम अपनी जिद् पर अड़े हो, तो हम तुम्हें यहाँ से जिन्दा नहीं जाने देंगे।' सिकन्दर ने गुस्से में कहा। उसकी आँखों से अँगारे बरस रहे थे।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने क्षण भर के लिए निहारा, बोले, 'आज्ञा का पालन कीजिए देव !'

बेड़ियाँ डाल दो।' सिकन्दर का स्वर गरजा।

तत्काल सम्राट सिकन्दर की आज्ञा का पालन हुआ। यूनानी सिपाहियों ने भारतीय क्षत्रिय को बेड़ियाँ डाल दीं और उसे ले चले बन्दीगृह की ओर।

चन्द्रगुप्त मौर्य के पग यूनानी सिपाहियों के साथ बढ़ते रहे और उनकी शृंखलाएँ बजती रहीं।

सिकन्दर उस भारतीय नौजवान की निडरता पर सोचता रह गया।

उधर हेलेन का अनुराग चन्द्रगुप्त मौर्य को बंदी के रूप में अधिक दिन तक न देख सका। वह उनकी मुक्ति के उपाय सोचने लगी। और एक दिन उपयुक्त अवसर उसके हाथ लग गया। उसने अपने प्रेमी को बंदीगृह से मुक्त कर दिया। वे दोनों योगिनियों के साथ पुरु नरेश की राजधानी में सकुशल पहुँच गए।

वहाँ पर सुनन्दा के प्रयास से राजकुमारी दुर्धरा का विधिवत् पाणिग्रहण संस्कार मौर्यकुमार के साथ कर दिया गया।

बाईस

मई 326 ईसा पूर्व की प्रात बेला मे।

सिकन्दर की 60 सहस्र सेना भारत की ओर कूच कर उठी।

यूनानी सैनिको के आक्रमण होने लगे।

सीमा प्रान्त नरेश त्राहि त्राहि कर उठे।

यूनानियो के रण-कौशल के आगे ये छोटे छोटे राज्यों की सेनाएँ विजय प्राप्त न कर सकी।

इस तरह भारत के सीमा खण्ड परतन्त्रता की बेडिया मे जकडते गए।

और सिकन्दर विजय के उल्लास मे आगे बढता गया।

तभी उसने हस्ती के दुर्ग का घेरा डाल दिया।

हस्ती नरेश ने सिकन्दर की सेना का डट कर सामना किया। दोनो के बीच 30 दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। सिकन्दर की सेना अधिक थी। विजयश्री अत मे उसी के हाथ लगी।

सिकन्दर ने हस्ती नरेश को पराजित करके बाजौर और स्वात घाटी मे प्रवेश किया। वहाँ आश्वकायन लोगो ने घोर युद्ध किया पर पराजय ही हाथ लगी। तब असिक नरेश ने राजधानी मसागा मे बैठ कर प्रचण्ड युद्ध किया। अत मे वह वीरगति को प्राप्त हो गया। उसके पुत्र ने यूनानियो की अधीनता स्वीकार कर ली।

असिक नरेश की एक रूपवती रानी ने यवनेश से एक पुत्र को जन्म दिया अमद भिबर और गजोली प्रान्त उसने अपने अधिकार मे रखे। इस मसागा राज्य के सात सहस्र सैनिक सिकन्दर के अधिकार मे आए, जिन्हे उसने अपनी सेना मे सम्मिलित करना चाहा, किन्तु उन्होने एक विदेशी की सहायता मे स्वदेशियो का अहित करना अनुचित समझा। उन्होने युक्तिपूर्वक निकलने का प्रयास किया, किन्तु यूनानी सैनिको द्वारा घेर लिए गए। ऐसी स्थिति मे लोहा लेने के सिवा कोई चारा नही था। उन्होने स्त्रियो सहित घोर युद्ध किया और अपने से अधिक सख्या मे शत्रु के सैनिको को मौत के घाट उतार डाला। मसागा राज्य की भूमि फिर

रक्त से लाल हो उठी।

उन वीर सैनिकों ने साँस रहते तक शत्रु का सामना किया और वीर गति को प्राप्त हो गए। इस विजय को पाने के लिए सिकन्दर को काफी क्षति उठानी पड़ी।

तभी सिकन्दर को तक्षशिला के निन्दित शासक अभि की ओर से पाँच सहस्र सैनिकों की सहायता मिल गई।

सिकन्दर निकेटर को सिंध नदी के पश्चिम स्थित देश का शासक नियुक्त करके अटक से लगभग 8 कोस की दूरी पर उस नदी को पुल द्वारा पार करके ओहिंद[1] पहुँचा। वहाँ तक्षशिला नरेश अभि ने उसका स्वागत किया। किन्तु महाराज पुरु इसे सहन न कर सके। वे उस भू भाग के स्वामी थे जो अब झेलम गुजरात और शाहपुर प्रान्तों में है। उन्होंने सिकन्दर को झेलम पार करने से रोकने के लिए अपने पुत्र दुधष के सेनापतित्व में 2000 सैनिक भेजे।

सिकन्दर की विशाल सेना के साथ मुट्ठी भर सैनिकों का मुकाबला करना तो कठिन था। फिर भी भारतीय वीरों ने साहस नहीं छोड़ा। घमासान युद्ध हुआ। राजकुमार दुधष अपने वीरों के साथ वीरगति को प्राप्त हो गए।

सिकन्दर की सेना ने उसी रात को झेलम नदी पार कर ली। यह देख कर वे पुत्र का वियोग तो भूल गए उन्होंने अपनी सारी सेना सन्नद्ध करके शत्रु से लोहा लेने की ठान ली। उनके इस दल को जामाता चन्द्रगुप्त मौर्य ने शिक्षित किया था और वे स्वयं युद्धार्थ नेता होने को उद्यत थे, किन्तु पुत्र विनाश से दुःखी महाराज पुरु ने उन्हें राजधानी की रक्षा के निमित्त छोड़ा। महाराज पुरु का विचार था कि यदि कहीं उनका भी अमंगल हो गया, तो वे स्वयं संततिहीन हो जाने को थे, क्योंकि सिवा पुत्री दुधरा के अब उनकी कोई सन्तान न रह गई थी। विवश होकर चन्द्रगुप्त मौर्य नगर रक्षा को वहाँ रह गए।

---

1 उमदाडपुर

महाराज पुरु शिक्षित सेना के साथ शत्रु का सामना करने के लिए बढे। उनकी सेना मे 200 हाथी, 300 रथ, 4000 अश्वारोही और 30,000 पैदल सैनिक थे। प्रत्येक रथ मे दो धनुर्धर, दो ढलत और दो सारथी रहते थे। पदातियो का चौडा खाँडा दोनो हाथो से चलाया जाता था।

दोनो ओर की सेनाओ के बीच घमासान युद्ध हुआ।[1] महाराज पुरु की विजय इस युद्ध मे निश्चित सी थी कि भाग्य न पलटा खाया। उनके हाथी बिगड उठे और उन्होने अपने ही सैनिको को कुचल डाला। फलत भारतीय सैनिको मे भगदड मच गई।

किन्तु महाराज पुरु अत पर्यन्त युद्ध करते रहे। वह 77 इच ऊँचा योद्धा नौ घावो के लगने से मूच्छितप्राय अवस्था म बदी बना लिया गया और सिकन्दर के सामने उपस्थित किया गया।

सिकन्दर की विजयी आखो ने उस निडर महाराज पुरु को देखा। वे बेडियो मे जकडे हुए भी उसके समक्ष सम्मान से खडे थे। उनके तेज एव शौर्य से प्रभावित होकर सिकन्दर ने पूछा 'आपके साथ हमारी ओर से कैसा व्यवहार किया जाए ?'

'जैसा एक राजा दूसरे राजा के साथ करता है।' महाराज पुरु ने उत्तर दिया।

महाराज पुरु के इस निर्भय उत्तर से सिकन्दर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने तत्काल ही उन्हे मुक्त करने का आदेश दे दिया और अपने पास मत्री भाव से बैठाया। उनका राज्य और उपहारस्वरूप मसागा से छीने हुए भिवर और राजोली प्रान्त भी उन्हे देकर ससम्मान विदा किया। इससे दोनो के बीच मैत्री हो गई।

इसके बाद महाराज पुरु का भतीजा गडरिस नरेश बिना युद्ध किए ही सिकन्दर से मिल गया, किन्तु शाकल मे कठो का सामना न कर सका। उनके साथ सघर्ष मे उसकी पराजय हुई।

---

1 जुलाई 325 बी सी

तेईस

व्यास नदी के तट पर एक छोटे से ग्राम मे बने शिवालय के प्रांगण मे आचार्य चाणक्य बैठे हुए थे। वे अस्त्रो शस्त्रो से सज्जित मालवी वीरो को उपदेश दे रहे थे। उन्होने कहा, 'वीरो! सोचने की बात यह नहीं कि हम जीतेंगे अथवा हारेंगे। योद्धा के लिए जीत और हार दोनो समान हैं। विचारना केवल इतना है कि हमने समयानुसार अपना कर्तव्य पूरा किया अथवा नही। सिकन्दर की सेना अधिक है। हमारे लिए उस पर विजय पाना सरल नही है, किन्तु इस से हमारे कर्तव्य मे किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं आता। उसने हमारे देश पर आक्रमण किया है। तुम्हारे मालव देश को परतन्त्र बनाने का कुचक्र रचा है। यदि हम उसके दास बनना चाहते हैं यदि हम अपने सिर को जो आज तक किसी के सामने नही झुका शत्रु के चरणो मे झुकाना चाहते हैं यदि हम अपने बच्चों को दास बनाकर यूनान के बाजारो मे बिकवाना चाहते हैं, तो कुछ करने कराने की आवश्यकता नही है। शत्रु की सेना स्वयं ही यह काम आसानी से कर देगी। यदि हम ऐसा नही चाहते तो हमारा कर्तव्य है कि प्राणो की बाजी लगाकर भी शत्रु की इस आततायी सेना को छिन्न भिन्न कर दिया जाए।

मालवी वीर चिल्ला उठे, 'हर हर महादेव!'

वहाँ से उठ कर आचार्य चाणक्य दूसरे ग्राम मे पहुँचे। वहाँ पर भी उन्होने एक पीपल के वृक्ष के नीचे खड़े होकर कहना आरम्भ किया, 'मालवी वीरो! यह युद्ध नही यज्ञ है। विजय की आशा त्याग कर, प्राणों का मोह छोड कर आप लोगो को इस यज्ञ मे आहुति देनी होगी। राष्ट्र देवी बलिदान माँगती है। देवी माँ आज रक्त पिपासिनी हो उठी है! कौन देगा उसे रक्त? कौन बुझाएगा उसकी पिपासा!

सामने खड़े मालवी वीरो ने अपनी तलवारें खींच ली और उन्हे हवा मे हिलाते हुए चिल्ला उठे 'हर हर महादेव!'

वहाँ से आचार्य चाणक्य तीसरे ग्राम मे पहुँचे। उनके समक्ष मालवी

वीरों का दल हाथों में शख और तुरहियाँ लिए तथा कमर से तलवारें लटकाए खड़ा था। आचाय चाणक्य ने कहना आरम्भ किया, 'वीर सपूतो! जीवन और मृत्यु दोनों खेल हैं। जीवन के उपरान्त मृत्यु और मृत्यु के उपरान्त जीवन एक कटु सत्य है। आज तक न तो कोई सदा जीवित रहा है और न ही सदा के लिए मृत्यु को अकशायिनी बनाया है। फिर इस नश्वर जीवन से मोह कैसा? मृत्यु से भय क्यों? इन दोनों के बीच कर्तव्य ही हमारा साथी है। उसे ही हमें पूर्ण करना है।'

इतना सुनते ही तुरहियाँ बज उठीं। उनकी तीव्र ध्वनि से मानो आकाश फटने लगा हो।

वहाँ से चल कर आचाय चाणक्य एक और ग्राम के शिवालय में पहुँचे। वे एक बड़े शिवलिंग के सामने खड़े थे। शिवालय के प्रांगण में कितने ही मालवी योद्धा एकत्रित थे? उनके चेहरे पर तेज चमक रहा था। उन्होंने मालवी वीरों को सम्बोधित करते हुए कहा, 'मालव के वीर सपूतो! अब आगे बढ़ने का समय आ गया है। भुजाबल दिखलाने का समय आ गया है। मृत्यु से जूझने का समय आ गया है। जो शत्रु तुम्हारी स्वतन्त्रता पर आँखें गड़ाए बैठा है उन आँखों को फोड़ना होगा। स्मरण रहे अपने राष्ट्र पर आक्रमण करने वाले शत्रु को विनष्ट कर देना ही हमारा कर्त्तव्य है। छिप कर अथवा छिपा कर, धोखे अथवा प्रपंच से, छल से अथवा पाखण्ड से, झूठ से अथवा चोरी से किसी भी विधि से शत्रु को नष्ट कर देना ही हमारा काम है। पापी का सामना करने के लिए पाप से काम लेना कोई पाप नहीं है। आगे बढ़ो! राष्ट्रात्मा आप लोगों को आशीर्वाद देने के लिए आतुर हो उठी है।'

और मालवी वीर 'हर हर महादेव' का घोष करते हुए बढ़ गए।

वहाँ से आचार्य चाणक्य और एक ग्राम में पहुँचे। सध्या का समय था। सूर्य अस्त हो रहा था। गाँव की स्त्रियाँ और बच्चे एक ओर खड़े थे और दूसरी ओर युवक तथा प्रौढ़ मालवी वीर! चाणक्य एक अश्व की पीठ पर पर आसीन थे। वे उसकी पीठ से उतरे नहीं। वहीं पर बैठे हुए बोले 'भाइयो और बहनो! आज ब्राह्मण का वह मान नहीं रहा उसकी मर्यादा नहीं रही। पहले वह आज्ञा देता था और आज आप से

भीख माग रहा है इन देवियो के लिए, इन अबोध बच्चों के लिए। क्या हम अपने प्राणो के मोह म इनके भविष्य को नष्ट कर डालेंगे क्या हम सहन कर सकेंगे कि यूनानी सेवक इन देवियो को दासियाँ बना कर अपने देश म ले जाएँ और इन बच्चों को सदैव के लिए दास बना डालें ? क्या हम सहन कर सकेंगे कि हमारी पवित्र धरा आततायी के परो के नीचे रौंदी जाए ? जवाब दो ! आज यह भिखारी ब्राह्मण भीख के रूप म केवल आपका जवाब माँग रहा है। क्या उसे भीख मिलगी ? क्या इस ग्राम के युवक राष्ट्र की रक्षार्थ अपना बलिदान देंगे ?'

एक प्रौढ मालवी ने आगे बढ कर कहा, 'ब्राह्मण का आदेश व्यथ नही जाएगा बहनो ! आगे बढो, तिलक लगाओ। हमारी तलवारें देश की रक्षा क लिए बेचैन हो उठी हैं।'

कितनी ही ग्रामीण युवतियो ने आगे बढ कर आचाय चाणक्य के परो की धूल ले ली। उसे मस्तक पर लगाया। साथ ही मालवी वीरो ने म्यानो स तलवारे निकाल कर उन्हे हवा मे हिलाते हुए कहा, 'हर हर महादेव !'

और इसके बाद आचाय चाणक्य उस ग्राम म पहुँचे जहाँ पर वे अपनी छोटी सी कुटिया म तक्षशिला स आकर ठहरे हुए थे। अँधेरा घिर आया था घोडे को एक ओर बाँध कर वे कुटिया म आए। तल के दीपक को प्रज्वलित किया। फिर वे आसन पर बैठ गए।

थोडी ही दर बाद पालक और जीवसिद्धि न कुटिया म प्रवेश करके कहा 'गुरुदव, प्रणाम !'

आयुष्मान भव ! आचाय चाणक्य ने आशीर्वाद दिया। फिर पालक सम्बोधित करते हुए बोले पालक ! आज के क्या समाचार हैं ?

'गुरुदेव ! सिकन्दर के सैनिक मालवी वीरो क आक्रमणों से बौखला उठे हैं। गत रात्रि क आक्रमणो म तो कितने ही यूनानी मत्यु की गोद मे सो गए हैं। दिन क समय खोजने पर भी यूनानी सैनिको को कोई सशस्त्र मालवी नही मिलता किन्तु रात्रि के समय उनके दल के दल यूनानियो की नींद हराम कर देते हैं। सिकन्दर स्वय सेल्यूकस से कह रहा था कि क्या हम सारी उम्र इस मालव मुल्क मे ही फँसे रहेंगे ? क्या इन

मालवियो को ठीक करने का कोई तरीका नहीं ?'

फिर सेल्यूकस ने क्या उत्तर दिया ?' आचार्य चाणक्य ने प्रश्न किया।

गुरुदेव ! सेल्यूकस ने कहा कि जहाँपनाह ! जिनका कोई राजा नही, कोई राजधानी नही उनसे हम लडें, तो कैसे लडें ?'

'फिर सिकन्दर क्या बोला ? आचार्य चाणक्य ने पूछा।

'गुरुदेव ! सिकन्दर सेल्यूकस के इस उत्तर से कुछ चिढ सा गया, बोला कि अजीब मुल्क है और बडे वाहियात लोग हैं। बादशाह नही, सिपाही नही, फिर भी लडे जा रहे हैं। पुरु, अभी और मेघाश कोई भी नही बता सकता कि इन लोगो को कैसे सीधा किया जाए ?'

'और कुछ पालक ? आचार्य चाणक्य ने कहा।

'हाँ, गुरुदेव ! एक बात और है।' पालक ने कहा, 'उससे यूनानी सैनिको का दिल बैठा जा रहा है।'

'वह क्या ? गुरुदेव चाणक्य ने चौंक कर पूछा।

'सेल्यूकस की प्यारी बेटी की प्रेम कहानी गुरुदेव !' पालक ने कहा, 'उसे सुन-सुन कर यूनानी सिपाहियों को अपने अपने घर की याद सताने लग गई है।'

सच !' आचार्य चाणक्य के मुख निकला, 'एक दिन वृषल और हेलेन का प्रेम रंग लायेगा पालक !'

'क्या आप जानते हैं, गुरुदेव ?' पालक ने आश्चर्यचकित स्वर मे पूछा।

हाँ पालक ! मेरी स्वीकृति से ही वृषल ने इसे बढावा दिया है।' आचार्य चाणक्य बोले, 'हेलेन वीरांगना है। वह वृषल की मुक्तिदायिनी है। उसने ही बन्दीगृह से मुक्त करके वृषल को प्राण दान दिया है। ऐसे प्रेम में मैं बाधक नही बना। इसीलिए इसे रोका भी नही। अब तुम जाओ।'

पालक गुरुदेव को नमस्कार करके चला गया।

जीवसिद्धि ! यहाँ बैठो और कुछ सदेश ले जाओ।' आचार्य चाणक्य ने कहा।

जीवसिद्धि आचार्य चाणक्य के पास बैठ गया।

'जीवसिद्धि !' आचार्य चाणक्य का स्वर उसके कानो मे पडा 'अब

तक तो सब कुछ ठीक ही रहा। मेरा विश्वास है कि सिकन्दर अब व्यास नदी से आगे नहीं बढ़ेगा। चन्द्रगुप्त का काम पूरा हो गया है। उससे जाकर कहो कि अब हेलेन से कम मिला करे पता नहीं कोई भ्रम... ।'

ऐसा ही होगा गुरुदेव।' जीवसिद्धि ने हाथ जोड़ कर उठते हुए कहा।

जीवसिद्धि चला गया। उसके जाने के बाद गुरुदेव चाणक्य किसी गहरी सोच में डूब गए।

चौबीस

व्यास नदी के पश्चिमी तट पर सिकन्दर की सेना खुशियाँ मना रही है।

थोड़ी दूरी पर उनके शिविर लगे हुए हैं।

यूनानी सैनिक अपनी इच्छानुसार काम कर रहे हैं।

कुछ उनमें से मदिरा की मादकता में अपनी थकान को मिटाने का प्रयास कर रहे हैं।

कुछ आग पर रखी हुई माँस की हड्डियों को बार बार देख रहे हैं।

तभी एक यूनानी सैनिक ने लकड़ी को सरकाते हुए कहा, 'दोस्त! बादशाह की मर्जी अभी वतन को लौटने की नहीं दिखलाई देती।'

'तुमने कैसे जाना ?' दूसरे सैनिक ने जाम खाली करते हुए कहा।

'वह देखो सामने।' पहले सैनिक ने कहा 'कैसी बेचैनी से चक्कर लगा रहा है। जब वह ऐसा करता है तो उसका मतलब यह होता है कि वह कोई मसला हल कर रहा है। और उसका मसला होता है सारी दुनिया को अपनी शमशीर से फतह करना।

तभी तीसरे ने फुसफुसाते हुए कहा 'वह शाहबजादी है न हेलेन!'

'क्या हुआ उसे ?' पहले सैनिक ने आश्चर्य से पूछा।

इश्क लड़ा रही है।' तीसरे यूनानी सैनिक ने जवाब दिया। 'हाय बेचारा फिलिपोस!'

यार, मैं समझा नहीं।' दूसरे यूनानी सैनिक ने कहा।

क्या करोगे समझ कर?' तीसरा यूनानी सैनिक बोला, हिन्दुस्तानी शहजादे को दिल दे बैठी है। दोनों खूब मिलते हैं।'

'अच्छा!' पहले यूनानी सैनिक के मुँह से निकल गया, यह सेल्यूकस की बेटी है और बादशाह उसकी मुट्ठी में है।'

फिर तो लगता है अपने वतन बच्चों को भूल कर इस दोजख में पड़ा रहना पड़ेगा।' दूसरे यूनानी सैनिक ने कहा।

इसके अलावा हम कर भी क्या सकते हैं?' तीसरा यूनानी सैनिक बोला।

जग जग हम लोग उकता गए हैं इस जिन्दगी से।' दूसरा यूनानी सैनिक गुस्से में भर कर बोला 'अब हमें आगे बढ़ने से इंकार करना होगा।' और सैनिकों ने भी उसकी हां में हाँ मिलायी।

रात डूबती रही।

और सिकन्दर के सैनिकों के मन में वतन को लौटने की इच्छा बलवती होती गई।

विहान बेला में तैयारी का बिगुल बज उठा।

लेकिन यूनानी सैनिक अपने शिविरों में से नहीं निकले।

सन्नाटा देख कर सिकन्दर गरज उठा, 'सेल्यूकस!'

सेल्यूकस ने सिकन्दर के शिविर में प्रवेश करके राजसी अभिवादन के बाद कहा, 'जहाँपनाह!'

'इस खामोशी की वजूहात क्या है?' सिकन्दर ने सेल्यूकस को सामने देख कर कहा।

'जहाँपनाह! हमारे सिपाही अब इस खून खराबी से तंग आकर वतन को लौटना चाहते हैं।' सेल्यूकस ने विनम्र स्वर में कहा।

और हमारा सपना, सेल्यूकस!' सिकन्दर चिंघाड़ा, 'उसे जरूर पूरा करेंगे इसके लिए आगे बढ़ना होगा सिपाहियों को हमारा साथ देना होगा। यह हमारा हुक्म है।

'हुक्म मानने के लिए सब तैयार हैं, जहाँपनाह !' सेल्यूकस ने कहा, वे दुनिया को जीतना भी चाहते हैं। बादशाह का सपना उनका अपना सपना है।

तो फिर ! सिकन्दर ने पूछा।

सिपाही कुछ दिनों के लिए आराम चाहते हैं, जहाँपनाह !' सेल्यूकस ने कहा।

'सेल्यूकस !' चीख उठा सिकन्दर, 'हम लोग यहाँ पर आराम करने के लिए नही आए हैं। हमे अभी कूच करना होगा। हम आराम जैसी छोटी सी चीज़ के लिए फतेह की कामयाबी को पीछे नही धकेल सकते।'

सेल्यूकस ने सिकन्दर के तमतमाते हुए चेहरे को देखा। वह अपने शिविर में चहलकदमी कर रहा था। उसका दायाँ हाथ बार-बार कमर में लटकती हुई तलवार पर पड़ रहा था, उसकी आँखें चिंगारियाँ बरसा रही थी। कुछ देर चुप रहने के बाद उसने पूछा, किस तरफ को कूच किया जाए जहाँपनाह ?'

सिकन्दर ने सेल्यूकस के इन शब्दों को सुना और फिर बोला 'व्यास नदी को पार करके मगध की तरफ कूच करो।'

जहाँपनाह ! मगध का शासक पुरु से भी ज्यादा ताकतवर है।' सेल्यूकस ने कहा, 'इस वक्त हमारे सिपाहियों में इतनी ताकत नही है कि वह उसकी बड़ी फौज का मुकाबला कर सकें।

सेल्यूकस ! हमे अपनी ताकत पर यकीन है।' सिकन्दर ने उत्साहित होकर कहा हम बिना सहारे ही आगे बढ़ेंगे। और देखेंगे मगध की ताकत को।

जहाँपनाह ! आप ऐसा न सोचें।' सेल्यूकस ने कहा 'हम सब आपके साथ हैं। लेकिन ।

लेकिन क्या सेल्यूकस ? सिकन्दर ने पूछा।

जहाँपनाह ! ये यूनानी सिपाही हमेशा आपके इशारे पर नाचने के लिए तैयार रहे हैं। सेल्यूकस ने कहा। ये आपका सपना पूरा करने के लिए बड़ी इच्छा से दूर यहाँ की खाक छान रहे हैं। अब आपका भी फर्ज है कि कुछ दिन आराम की भी सोचें।

सेल्यूकस !' सिकन्दर ने कहा ।

'जहाँपनाह ! मैं ठीक कह रहा हूँ । आप आगे बढने का ख्याल छोड दीजिए ।' सेल्यूकस का स्वर किसी आशका मे डूबा हुआ था ।

'क्या हमे अपने अरमानो का जनाजा निकालना होगा, सेल्यूकस ?' सिकन्दर ने कुछ सोचते हुए कहा ।

'मेरी अर्ज है कि आप वक्त की नजाकत को समझें, जहाँपनाह !' सेल्यूकस का स्वर आग्रह भरा था ।

'खैर जैसी तुम्हारी मर्जी !' सिकन्दर ने ठण्डी सास भरते हुए कहा । और वह कटे वृक्ष की तरह अपनी शय्या पर गिर पडा । जीत की उसे इतनी खुशी नही थी, जितना लौटने का गम था ।

यूनानी सैनिक भी नया पैगाम सुनने के लिए अपने अपने शिविरो से निकल कर मैदान मे इकट्ठे हो गए थे । सब की आँखें सिकन्दर के शिविर की ओर लगी हुई थी । सभी आपस मे झुण्ड बना कर खुसर पुसर कर रहे थे । तभी सेल्यूकस को अपनी ओर आते हुए देखा । उनके हृदय धक्-धक करने लग गए थे ।

सेल्यूकस ने अपने सैनिको के पास पहुँच कर उनकी उत्सुकता को देखते हुए कहा, 'अब जल्दी ही आप लोग अपने बाल बच्चो से मिल सकेंगे ।'

'सच ! क्या जहाँपनाह मान गए ?' सबका एक साथ स्वर उभरा ।

हाँ, खुदा ने आपकी सुन ली ।' सेल्यूकस बोले ।

इन शब्दो से मानो उनमे प्राण आ गए हो । उनके मुरझाए हुए चेहरे उसी प्रकार खिल पडे जिस प्रकार कमल भास्कर की सुनहरी किरणो को अपने अक मे समेटने के लिए कोमल पखुडियो को खोल देता है ।

खुशी का आलम छा गया । जशन की तैयारियाँ होने लगीं । ईरानी तरानो से सारा वातावरण गूँज उठा । सिकन्दर ने उन खुशी के तरानों को सुना । इससे उसकी धधकती हुई अग्नि की लपटें शान्त हो गई ।

कुछ देर बाद उसने सेल्यूकस को बुला कर बारह ऊँचे-ऊँचे पाषाण स्तम्भ बनवा कर गड़वाने का आदेश दिया ।

आदेश का पालन हुआ। ये पाषाण स्तम्भ सिकन्दर की विजय के प्रतीक थे।

उसने यहाँ पर अपना दरबार लगाया। उसमें उनके अधीनस्थ नरेशों ने भी भाग लिया। वह विजित प्रदेशों में शासक नियुक्त करना चाहता था। उसने अभिसार के राजा को हजारा का शासक बनाया। तक्षशिला नरेश को झेलम और सिंध नदियों के बीच का प्रदेश मिला। पुरु को झेलम और व्यास नदियों के बीच के प्रदेश दिए गए।

इस प्रकार यूनान सम्राट सिकन्दर भारतीय नरेशों से राजनीतिक मेल करके दूसरे रास्ते से अपने वतन को लौटने के लिए तैयार हुआ।

मार्ग में सिनोई[1] राज्य अधीन हुआ। अगलसोई लोगों ने यूनानी सैनिकों से संघर्ष लिया जिसमें उनकी हार हुई। पंचनद में मालवीयों का प्रजातन्त्र राज्य था। आचार्य चाणक्य के उपदेश से वे यूनानी सैनिकों को छापामार युद्ध से तंग करने लग गए थे। क्षुद्रक इनके सहज शत्रु थे, किंतु सिकन्दर के आक्रमण के समय वे दोनों मिल गए थे किन्तु जब तक वे मिलित दल का सेनापति नियुक्त करें तब तक यूनानियों ने बढ़ कर दोनों को अलग अलग पराजित कर दिया था।

एक मालवीय दुर्ग में कूदने पर सिकन्दर के हृदय में एक बाण द्वारा कठोर घाव लगा था। क्षुद्रक भी प्रजातन्त्र राज्य था। अब निकेटर के स्थान पर फिलिपोस सिंध नदी से पश्चिमी प्रान्त का क्षत्रप नियत किया गया। सिंध देश में राजा मूषिक पहले अधीनता स्वीकार करके पीछे ब्राह्मण मन्त्रियों के परामर्श से लड़ा था, पर जीत न सका। यूनानियों ने पतालापुरी में एक दुर्ग का निर्माण भी करवाया था।

इस तरह सिकन्दर अपने अरमानों को दबाये बिलोचिस्तान के मार्ग से अपने वतन के लिए बढ़ा। वह हाला पर्वत के अस्तित्व से अनभिज्ञ था जिससे उसे बहुत चक्कर खा कर जाना पड़ा। इस दुर्गम और लम्बे मार्ग में उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उसके सहस्रों

1 शिवि

सैनिक प्यास को सहन न कर सके और पिपासा के कारण वहीं मर खप गए।

इस पर भी सिकन्दर ने साहस नहीं छोड़ा। उसके कदम बढ़ते ही गए। अनेक शत्रुओं से उसे लोहा लेना पड़ा। लूटे हुए भारतीय सामान को अग्नि की भेंट चढ़ा दिया गया।

अब वह दिन दिन दुखी होता जा रहा था। उसके मस्तिष्क ने सोचने का काम बन्द कर दिया था। उसे चहुँ ओर ही अंधकार-सा दिखाई देने लग गया था।

उसके हृदय की शांति कभी की उड़ गई थी। उसके सैनिक आक्रमणों और भूख प्यास से परेशान हो उठे थे। इस पर भी वह विक्षिप्तावस्था में आगे बढ़ना चाहता था। परन्तु सैनिकों के क्रन्दन ने उसे बिल्कुल ही निढाल-सा कर दिया था।

अब उसकी देह जवाब देती आ रही थी।

बिलोचिस्तान पहुँचने पर उसकी देह ने आगे बढ़ने से बिल्कुल ही इंकार कर दिया। वह तीन दिन तक वहीं विक्षिप्तावस्था में पड़ा रहा। यह देश भारत का अंग था। पेठान यूनानियों की ओर से सिंध देश का शासक था।

पच्चीस

हरीपुर की पर्वतीय शृंखलाओं में बना सुन्दर उद्यान। उसके मध्य संगमरमर का सरोवर और उस सरोवर के स्वच्छ जल से क्रीड़ा कर रही है राजकुमारी छाया।

उसके नेत्र बेसब्री से किसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। सहसा किसी के स्पर्श से वह चौंक उठी। उसने मुड़ कर देखा। उसके मुख से निकल गया, 'आप!'

'हाँ, जहाँ छाया वहाँ मैं !' आगन्तुक ने कहा।

'यह असत्य भाषण कहाँ से सीख आए, मौर्यकुमार ?' छाया ने उठते हुए कहा, 'कई मास के बाद आज आने की सूचना मिली थी, सो यहाँ बैठी प्रतीक्षा कर रही थी। और आप कह रहे हैं जहाँ छाया वहा !'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने उसके मुख पर हाथ रख कर वाक्य पूरा नही करने दिया, बोले, 'छाया ! इतनी-सी बात से नाराज हो गइ। मै इस बीच किसी आमोद प्रमोद मे तो नही फँसा था। देश के लिए ही कुछ कर रहा था।'

'बातें बनानी आपको खूब आती हैं।' छाया ने लजाते हुए कहा।

नही प्रिये ! यह वास्तविकता है।' चन्द्रगुप्त मौय ने कहा, यूनान सम्राट सिकन्दर की जो काली आँधी भारत के सीने पर आग बढ रही थी, गुरुदेव चाणक्य उसे रोकने मे सफल हो गए हैं। उनके प्रयास से भारतीयो को ऐसा महसूस होने लगा है कि बिना पूण सहयोग के देश का कल्याण नहीं हो सकता है। अब राजनीतिक सगठन धीरे धीरे दढ होते जाएँगे।

'गुरुदेव चाणक्य ! छाया ने आश्चयचकित स्वर म कहा 'किन्तु यहाँ तो सभी लोग यही कहते है कि आपकी कूटनीति न ही सिकन्दर का सव नाश किया। वह व्यास नदी से ही वापस अपने वतन को लौट गया।'

बहुत खूब ! यह बिना अर्जित यश मुझे मिल रहा है' चन्द्रगुप्त मौय ने कहा 'किन्तु कहने वाले लोग वास्तविकता को नही जानत छाया ! मैं तो केवल एक शस्त्र हूँ, चलाने वाले है गुरुदेव चाणक्य !'

हूँ !' छाया के मुख से निकला और वह किसी सोच म डूब गई।

छाया को इस स्थिति म देख कर चन्द्रगुप्त मौय बोले, 'अब तो खुशी का अवसर आया है। बवडर दूर हो गया है। फिर यह चाँद सा मुखडा दु ख सागर म क्यो डुबकियाँ लगान लगा ?'

'आयकुमार !' छाया ने कहा, 'मेरी चिन्ता का कारण है एक भय कर चट्टान जो आपकी उन्नति की राह म बाधा डाल रही है। काश ! उसे भी यूनानी बवडर स दूर कर दिया होता।'

चट्टान !' चन्द्रगुप्त मौय न दुहराया।

'हाँ, मौर्यकुमार !' छाया ने कहा, 'काश, मगध नरेश भी ।'

'तुम ऐसा क्यों सोचती हो छाया ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने सान्त्वना देते हुए कहा समय पर सब ठीक हो जाएगा ।'

'सो तो ठीक है, मौर्य कुमार !' छाया बोली, 'सिकन्दर की सहायता से मगध का राज्य लेने में जो आपको सुविधा हो सकती थी, वह अब नहीं रही।'

'ऐसा तुम्हारे से किसने कहा ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा ।

'पिता श्री ने !' छाया ने उत्तर दिया ।

'हाँ नहीं रही, छाया !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कुछ सोचते हुए कहा, 'पर विदेशियों को अपने देश का स्वामी बना कर मैं कोई राज्य नहीं लेना चाहता । इससे तो अच्छा है कि मैं विदेशियों से स्वदेश की रक्षा करते हुए अपने प्राण त्याग दूं ।'

छाया ने शीघ्रता से चन्द्रगुप्त मौर्य के मुख पर हाथ रख कर लम्बी सांस भरते हुए कहा 'प्रभु आपकी रक्षा करें, यह क्या कह दिया आपने ! आप जानते नहीं किसके साथ बातें कर रहे हैं ? सुनने वाले का भी कोई विचार नहीं किया !'

'पगली ! मैंने प्राण थोड़े ही त्यागे हैं ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'अभी तो बहुत कुछ करना शेष है । सिकन्दर लौट गया । किन्तु यूनानियों का शासन अभी तक उत्तरी भारत के सीने पर मूंग दल रहा है । अभि, पुरु और तुम्हारे पिता महाराज पर्वतक अभी तक यूनानियों की सत्ता को माने हुए हैं । सिकन्दर का विश्वासपात्र फिलिपोस झेलम के किनारे बैठा-बैठा अभी तक उसके नाम पर शासन कर रहा है । देश के मस्तक पर परतन्त्रता की जो खड्ग झूल रही थी, बस वह थोड़ी शिथिल हुई है अवश्य, पूर्ण रूप से दूर नहीं हुई ।'

'यह फिलिपोस कौन है, मौर्य कुमार ? छाया ने पूछा ।

'सिकन्दर का उप सेनापति जिसे वह जीते हुए क्षेत्र को परतन्त्र बनाए रखने के लिए यहाँ छोड़ गया है ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा ।

'फिलिपोस, इन यूनानियों के भी कैसे अजीब नाम हैं ।' छाया ने हँसते हुए कहा, देश की राजनीति तो मैं नहीं जानती, मौर्य कुमार !'

'फिर क्या जानती हो प्रिये ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने छाया की ठोड़ी को ऊपर उठाते हुए कहा।

'केवल प्रेम के विषय में जानती हूँ।' छाया हर्षित स्वर में बोली, 'और वह भी प्यार का प्रेम। आपके कूटनीति शास्त्र से मुझे कुछ लेना-देना नहीं है।'

'तो फिर !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने अनजान बनते हुए कहा।

'छाया के लिए तो विश्व भर का राज्य आपकी सलोनी मुसकान में है, आपके दर्शन में है और उन चकोर सी आँखों में है जिन्हें देखने के लिए आँखें थक गई हैं। अब वचन दो, जहाँ आप जायेंगे, मुझे साथ ले जायेंगे।'

'अवश्य इस वचन को पूरा करूँगा, छाया !' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'पर अभी नहीं।'

'क्यों ?' छाया ने पूछा।

'इसकी आज्ञा गुरुदेव चाणक्य से अभी नहीं मिली है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने जवाब दिया।

'चाणक्य चाणक्य ! चीख उठी छाया, 'इस नाम ने तो मेरे जीवन में विष घोल दिया है। भविष्य में मैं इस नाम को सुनना नहीं चाहती अगर कभी वे मेरे सामने आ जाएँ तो !'

चन्द्रगुप्त ने छाया के मुख पर हाथ रख कर रोकते हुए कहा, 'धत् पगली ! गुरुदेव के लिए ऐसे शब्द नहीं कहते। वे भारत के शुभचिन्तक हैं ! देश के रक्षक हैं ! ब्राह्मण हैं ! और मेरे आराध्यदेव ! इस समूचे भारत में भ्रमण करके उन्हीं को पाया है जिनका मस्तिष्क दूर की सोचता है, जिनकी आँखें दूर तक देखती हैं जिनकी प्रतिभा और देशभक्ति के सामने बृहस्पति की प्रतिभा भी फीकी प्रतीत होती है। फिर उनका अपना कोई स्वार्थ नहीं। कभी उनके दर्शन करोगी, तो श्रद्धा से उनके चरणों में मस्तक झुका दोगी।'

इतना कह कर चन्द्रगुप्त मौर्य अश्व पर चढ़ कर चले गए। छाया उन्हें जाता हुआ उस समय तक देखती रही जब तक कि उनका अश्व आँखों से ओझल नहीं हो गया।

छब्बीस

झेलम के तट पर सघन वन। वन मे विशालकाय शिवालय। उसके एक कक्ष मे आचार्य चाणक्य विचारमग्न बैठे हैं। उनके नेत्र द्वार की ओर लगे हैं—कदाचित् वे किसी की प्रतीक्षा मे हैं। तभी जीवसिद्धि ने कक्ष मे प्रवेश कर नतमस्तक होकर कहा 'गुरुदेव के चरणो मे शिष्य का प्रणाम!'

'आयुष्मान भव!' आचार्य चाणक्य बोले, 'तुम सीधे पुरु की राजधानी से आ रहे हो, वत्स?'

'हाँ गुरुदेव!' जीवसिद्धि ने इधर उधर देख कर कहा, 'महाराज पुरु पूर्णरूप से मैत्री निभा रहे हैं। वे अपने सैनिको को फिलिपोस से यूनानी विधि से अस्त्र चालन की शिक्षा दिला रहे हैं। तक्षशिला कश्मीर और मालव के लोगो को भी तरह तरह के लालच देकर सेना मे शामिल किया जा रहा है।'

'अच्छा!' आचार्य चाणक्य ने कुछ सोच कर कहा 'जो काम सिकन्दर स्वय नहीं कर सका था, उसे फिलिपोस स्वय भारतीय सैनिको को लेकर करना चाहता है। अब पालक को मेरे पास भेज दो और उस मालवी वीर प्रसेनजित को भी। ध्यान रहे, दोनो एक साथ न आएँ।'

जीवसिद्धि आचार्य चाणक्य का आदेश पालन करने के लिए जाने लगा।

तभी गुरुदेव का स्वर उसके कानो मे पडा। वे पूछ रहे थे, 'चपल का कोई समाचार मिला।'

गुरुदेव! इतना ही समाचार मिला है कि उनकी स्थान स्थान पर पूजा हो रही है। फिलिपोस के आदमी उन्हे दण्ड देने के लिए खोज रहे हैं। भारतीय उन्हे अपना रक्षक और नेता मानते हैं। यदि आपने मना न कर दिया होता तो मैं लोगो को बतलाता कि यह उनका भ्रम है। उनके वास्तविक रक्षक तो गुरुदेव हैं।'

'ऐसी ग़लती न कर बैठना, जीवसिद्धि!' आचार्य चाणक्य तुरत

बोल उठे, 'यह सब मेरे आदेश से ही हो रहा है, वत्स ! भारत को आज एक क्षत्रिय नेता की आवश्यकता है। इसलिए मैंने मालवी वीर प्रसेनजित से ऐसा ही प्रचार करवाया है कि जो कुछ किया चन्द्रगुप्त मौर्य ने ही किया। भारत को आज चन्द्रगुप्त मौर्य सरीखे वीर की आवश्यकता है। उसका यश सर्वत्र फैलना चाहिए। भारतीयों में उसके लिए उत्सुकता बढ़नी चाहिए। जब कभी भी किसी से बात करने का अवसर मिले तब तुम भी ऐसा ही कहना अब जाओ पालक को भेज दो।'

'जो गुरुदेव की आज्ञा !' जीवसिद्धि ने नतमस्तक होकर कहा।

इसके बाद जीवसिद्धि ने शिवालय में पुजारी बन कर बैठे जाप करते पालक से कहा 'ज्योतिषी जी ! गुरुदेव ।'

पालक ने शीघ्रता से उठते हुए कहा, उनकी जय हो ! गुरुदेव को मेरी याद तो आई। मैं तो समझा था कि उन्होंने मुझे बिल्कुल ही बिसार दिया है।'

और फिर पालक इधर उधर देख कर आचार्य चाणक्य के कक्ष में पहुँच गया और नतमस्तक होकर प्रणाम किया।

आओ ज्योतिषी महाराज !' आचार्य चाणक्य ने हँस कर कहा। तुम शायद इसलिए नाराज हो कि कई दिनों से हमने तुम्हें कोई काम नहीं दिया है। अब बताओ, तुम्हारा ज्योतिष क्या कहता है ?'

'गुरुदेव ! आपके समक्ष इस तुच्छ का ज्योतिष नहीं चलता।' पालक बोला।

पालक ! आचार्य चाणक्य हँस कर बोले, तुम पुरानी भाषा के पण्डित हो ! यूनानी भाषा भी कुछ-कुछ आ गई है और फिलिपोस को भी तुमने देखा है।

हाँ गुरुदेव ! यह सब तो आपकी कृपा का प्रताप है।' पालक ने कहा, एक बार सिकन्दर के चले जाने के बाद उसने दरबार लगाया था। आपकी आज्ञा से मैं भी उस दरबार में उपस्थित था।'

'ठीक, बिल्कुल ठीक !' आचार्य चाणक्य बोले 'दरबार में उसके पास कौन कौन बैठे थे ?'

महाराज पुरु महाराज आंभि और महाराज । पालक झट बोल

पड़ा ।

'गाडी मत छोड़ो !' आचार्य चाणक्य बोले, 'फिलिपोस के बायीं ओर कौन था ?'

'ओह बायीं ओर !' पालक मस्तिष्क पर ज़ोर देता हुआ बोला, 'वह तो यूडेमियस था' फिलिपोस का सेनापति ।'

'ठीक कहा तुमने । वह यूडेमियस ही था ।' आचार्य चाणक्य बोले, 'तुम्हें जैन भिक्षु बन कर उसके पास जाना है । उसे अपने ज्योतिष का चमत्कार दिखाकर, भारत के आर्यों की निन्दा करके और यूनानियों के प्रति पूर्ण आस्था दर्शा कर उसका विश्वास प्राप्त करना है ।'

'जो गुरुदेव की आज्ञा !' हर्षित स्वर में पालक बोला ।

'एक बात और पालक !' आचार्य चाणक्य ने कहा 'उसके इतने विश्वास पात्र बन जाओ कि वह हर बात के लिए तुम्हारे से ही मन्त्रणा करे । उसका दिमाग सैनिक का है जो सोचता कम है और जोश अधिक खाता है । इसलिए तुम्हें उसका विश्वास पाने में विशेष कठिनाई नहीं होगी । इसके बाद क्या करना है यह तुम्हें जीवसिद्धि समय समय पर जाकर बताता रहेगा ।

'और कुछ गुरुदेव !' पालक ने पूछा ।

'और कुछ नहीं, वत्स !' आचार्य चाणक्य ने कहा 'अब तुम यहाँ से यथाशीघ्र प्रस्थान कर जाओ । यूडेमियस के पास जाकर सबसे पहले यह कहना कि फिलिपोस की जिन्दगी को खतरा है ।'

'फिलिपोस की ' पालक ने आश्चर्यचकित होकर कहा ।

'हाँ उसी की !' आचार्य गम्भीर होकर बोले 'तर्क की आवश्यकता नहीं, वत्स ! अब जाओ । शिवालय के बाहर एक नकाबपोश प्रतीक्षा कर रहा है । उसे मेरे पास भेज दो ।'

पालक ने तत्काल गुरुदेव की आज्ञा का पालन किया । उसने शिवालय के बाहर वट वृक्ष के नीचे खड़े नकाबपोश को आचार्य चाणक्य के पास भेज दिया ।

नकाबपोश के कक्ष में प्रवेश करते ही आचार्य चाणक्य ने कहा, 'नकाब उतार दो, प्रसेनजित !'

प्रसनजित ने नकाब उतार कर प्रणाम करते हुए कहा, आर्य ! मैं फिलिपोस को महाभारत की कथा सुना रहा था कि उस आदमी ने, जिसे जीवसिद्धि प्रसनजित समझता है मेरे पास आकर आपका आदेश सुनाया। मैं उपस्थित हूँ। आपके आदेशानुसार नकाब पहन कर आया हूँ। अब आज्ञा करें।

'तुम्हारा यहाँ नकाब पहन कर ही आना ठीक था।' आचार्य चाणक्य ने बहुत धीरे से कहा, यहाँ सभी मेरे विश्वस्त व्यक्ति हैं। किन्तु फिर भी विश्वस्तपु अपि न विश्वसेत' यही चाणक्य का सिद्धान्त है। अच्छा इधर आओ और सुनो।'

नकाबपोश व्यक्ति आचार्य चाणक्य के बिल्कुल समीप चला गया।

आचार्य चाणक्य ने उसके कान में कुछ कहा। उसे सुन कर वह चौंक उठा। उसके मुख से निकला हत्या।'

यह राजनीति है धर्म नहीं।' आचार्य चाणक्य ने धीरे से कहा, 'वत्स ! धर्म में जो बात अनुचित हो सकती है वही राजनीति में उचित हो जाती है। स्मरण रहे पुरु के प्रासाद में । अब जाओ। काम हो जाने के बाद तुम शीघ्र ही इस शिवालय में आ जाना। यहाँ से आगे जाने का प्रबन्ध पूरा हुआ मिलेगा।'

प्रसनजित ने नकाब डालते हुए कहा आर्य की जय हो।

प्रभु तुम्हें सफलता प्रदान करें।' आचार्य चाणक्य ने प्रसेनजित को आशीर्वाद दिया।

प्रसेनजित के बाहर निकलते ही आचार्य चाणक्य ने पुकारा, 'जीवसिद्धि !'

जीवसिद्धि ने कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा आज्ञा, गुरुदेव !'

'जीवसिद्धि ! आज से सातवें दिन एक व्यक्ति शिवालय में आयगा।' आचार्य चाणक्य ने कहा उसे यथाशीघ्र कुलूत राज्य में पहुँचाने का प्रबन्ध करना होगा। सब स्थान पर अश्व तैयार रहने चाहिए।'

जीवसिद्धि ने मन-ही मन में कुछ सोचते हुए कहा 'ऐसा ही होगा, गुरुदेव !'

और चन्द्रगुप्त के तक्षशिला वाले स्थान पर आज ही एक संदेश

पहुंचाना होगा।' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'वपल से कहना होगा कि आज से ठीक सातवें दिन वहीं आए बिना ही महाराज पुरु के प्रासाद में जाए। इसके अलावा और कोई विशेष बात कहने की आवश्यकता नहीं।'

'और कुछ, गुरुदेव!' जीवसिद्धि ने पूछा।

'हां, एक बात और!' आचार्य चाणक्य ने कहा 'महाराज पुरु के प्रासाद के पहरेदारों और राजपुरुषों को यह पता चल जाए कि चन्द्रगुप्त मौर्य महाराज से मिलने आया था।'

'ठीक है गुरुदेव!' जीवसिद्धि बोला।

'बस! वपल से यह भी कह देना कि महाराज पुरु से भेंट करके शीघ्र ही प्रासाद से निकल जाए। आचार्य चाणक्य कुछ सोच कर बोले, 'हो सकता है महाराज पुरु वपल को बंदी बनाने का प्रयास करें। उनका प्रयास विफल होना चाहिए, जीवसिद्धि!'

जीवसिद्धि की बुद्धि में गुरुदेव की बातें नहीं बैठीं, फिर भी उसने कहा, 'जो आज्ञा गुरुदेव!'

'खूब अच्छी तरह समझा कर उसे कहना होगा—आज से सातवें दिन, महाराज पुरु के प्रासाद में।' आचार्य चाणक्य ने जाते हुए जीवसिद्धि से कहा।

'आप निश्चिंत रहें, गुरुदेव!' कह कर जीवसिद्धि चला गया।

सत्ताईस

सभी राजनैतिक संगठन इस निर्णय पर पहुंच चुके थे कि जब तक सप्तसिंधु और सिंधु देश को मिला कर एक राष्ट्र स्थापित न होगा, तब तक उत्तर पश्चिमोत्तर भारत का मंगल सम्भव नहीं है। तक्षशिला नरेश आंभिक के विचार सबसे अलग थलग थे। इसे चाणक्य और चन्द्रगुप्त ने कई बार समझाने का प्रयास किया था, महाराज पुरु की ओर से इसे

स्वतन्त्र राजा मानने का प्रस्ताव भी रखा गया था, किन्तु इस देश द्रोही नीच के मन में स्वजाति और स्वदेश प्रेम का बीज न उग सका था। अत में सबकी यह सम्मति हुई थी कि सबसे प्रथम इस नीच को भारतीय स्वतन्त्रता के मार्ग से हटा दिया जाए।

इसी बीच अभि की प्रजा और सेना में आचार्य चाणक्य के सहयोग से स्वदेश का बीज हरा भरा हो उठा। और एक दिन गुरुदेव का आशीर्वाद लेकर चन्द्रगुप्त मौर्य स्वयं दस सहस्र सैनिकों के साथ तक्षशिला की ओर कूच कर गये।

तक्षशिला नरेश अभि सामना करने को उद्यत हुआ। किन्तु प्रजा और सेना की ओर से विशेष सहायता न मिलने के कारण युद्ध में मारा गया। इस तरह तक्षशिला राज्य पर चन्द्रगुप्त का अधिकार हो गया।

इसके बाद चन्द्रगुप्त मौर्य सिंध की ओर बढ़े। वहाँ के शासक पैठन ने बिना युद्ध किए ही शस्त्र डाल दिए। इससे यूडेमियस को सबसे अधिक दुःख पहुँचा। वह चन्द्रगुप्त मौर्य को नीचा दिखाने के लिए अवसर की तलाश में रहने लग गया।

उधर चन्द्रगुप्त मौर्य सारे सप्तसिंधु और सिंध प्रांत पर अधिकार करके अपने राज्य को लौट गए। इन युद्धों में उन्हें काफी कोष हाथ लगा था। अब उनका केवल एक ही सपना बाकी रह गया था, वह था पाटलिपुत्र पर अधिकार करने का। इसको साकार करने के लिए वे शक्ति और गुरुदेव की अनुमति की प्रतीक्षा में थे।

तभी काफी दिनों के बाद गुरुदेव का संदेशा जीवसिद्धि के द्वारा उन्हें मिला। उसके अनुसार वे एक सशस्त्र क्षत्रिय के वेष में सातवें दिन महाराज पुरु के प्रासाद के द्वार पर पहुंचे और प्रतिहारी से बोले, 'मैं चन्द्रगुप्त हूँ। महाराजा पुरु को मेरा प्रणाम कहिए।'

प्रतिहारी ने उस सशस्त्र क्षत्रिय को बड़े गौर से देखा कहा 'श्रीमन्! आप प्रतीक्षा गृह में पधारें। महाराज के पास अभी संदेश पहुंच जाएगा।'

प्रतीक्षा गृह प्रासाद के द्वार के साथ ही था। चन्द्रगुप्त मौर्य उसमें जा बैठे। उसमें लगे एक शिवालय के चित्र को देखकर वे सोचने लग गए कि गुरुदेव क्या चाहते हैं वे समझ नहीं सके।

तभी प्रतिहारी ने आकर कहा, 'महाराज पुरु ने आपका स्मरण किया है। मेरे साथ आइये।'

सूर्य अस्ताचलगामी हो रहा था। धीरे धीरे अंधकार अपना आवरण फैलाता जा रहा था। ऐसे ही समय में चन्द्रगुप्त मौर्य प्रतिहारी के साथ आगे बढ़े। साथ साथ चलते हुए प्रतिहारी बोला, 'श्रीमन्! मैंने आपकी ख्याति सुनी है। मेरा हृदय आपके लिए पूजा से परिपूर्ण है। किन्तु यहाँ आकर आपने अच्छा नहीं किया।'

'प्रतिहारी! मैं आभारी हूँ।' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'तुम्हारे जैसे श्रद्धालुओं के होते हुए मुझ पर कोई मुसीबत नहीं आ सकती है।'

'प्रभु, आपकी रक्षा करें।' प्रतिहारी ने कहा, 'आप इस सामने वाले प्रासाद में बैठिए। महाराज पुरु अभी इधर ही आएंगे।'

उस प्रासाद में दीपक जल रहे थे। चन्द्रगुप्त मौर्य ने उसमें प्रवेश करते हुए कहा 'मैं यहाँ महाराज की प्रतीक्षा करूंगा।'

इसी समय प्रासाद के द्वार पर प्रसेनजित के साथ एक सुन्दर प्रौढ़ यूनानी प्रविष्ट हुआ। प्रतिहारी ने तुरही बजाकर कहा, 'महामात्य फिलिपोस की जय!'

तभी उससे अगले द्वार के प्रहरी ने कहा, 'महाराज फिलिपोस की जय!'

और तब एक के बाद दूसरे कितने ही व्यक्तियों के मुख से निकला, 'महामात्य फिलिपोस की जय!'

फिलिपोस अहं में डूबा हुआ प्रसेनजित के साथ आगे बढ़ रहा था। थोड़ी दूर जाने पर उसने प्रसेनजित से कहा, 'तुम जैसे अक्लमंद आदमी मैंने बहुत कम देखे हैं। इस वक्त अचानक पुरु के महल में आ जाने से, अगर कोई षड्यन्त्र हो रहा होगा, तो उसका पता आसानी से मिल जायेगा। चारों तरफ निगाह रखो। हमारे खुफिया आदमी ने बताया था कि चन्द्रगुप्त यहाँ आया है। मैं उस हिन्दुस्तानी नौजवान को अच्छी तरह जानता हूँ। वह बहुत चालाक इंसान है।'

'मैं उसी चालाक इंसान को ढूंढ रहा हूँ, सरकार!' प्रसेनजित ने कहा, 'तनिक ठहरिए वह सामने वृक्ष के पीछे कौन है?'

ये दोनो उस पथ से आगे बढ रहे थे, जिस पर से होकर अभी अभी चन्द्रगुप्त मौर्य गए थे। इस पथ के दोनो ओर बागीचा था। और बागीचा अंधकार मे डूबा हुआ था। उसी अंधकार म खडे एक वृक्ष की ओर संकेत करके प्रसेनजित ने कहा था।

फिलिपोस ने उस ओर ध्यान से देखा, बोला, 'कुछ दिखाई तो नही देता।'

'नहीं सरकार! वहां कोई है।' प्रसेनजित ने दृढता के साथ कहा, 'आपको यदि भय लगता हो तो मैं देख लेता हूँ।'

इन शब्दो से फिलिपोस के अहं को चोट पहुँची। वह अकड कर बोला मैं यूनानी हूँ और यूनानी को डर नही लगता। चलो मैं भी चलकर देखता हूँ।'

और वह प्रतिहारी जो अभी अभी चन्द्रगुप्त को प्रासाद में छोड आया था, पथ के पास खडा खडा देखता रहा कि वे दोनो अन्धकार की ओर बढ रहे हैं और एक वृक्ष के पास जा रहे हैं। उस वृक्ष के पास पहुँचते ही प्रसेनजित ने अपनी तलवार से फिलिपोस पर आक्रमण कर दिया और चिल्लाकर कहा, 'बचो सरकार! चन्द्रगुप्त !'

लेकिन इससे पूर्व कि फिलिपोस घूमकर देखे प्रसेनजित ने भरपूर हाथ मार कर उसका सिर धड से अलग कर दिया। और फिर अंधेरे मे ही कहीं निकल गया।

प्रतिहारी शीघ्रता से चन्द्रगुप्त मौर्य की ओर दौडा। वे अभी तक प्रासाद मे अकेले बैठे थे। उनके पास पहुँचकर बोला यहाँ से भागो, श्रीमन! अभी अभी इसी प्रासाद मे फिलिपोस की हत्या हो गई है। हत्या करने वाले ने पुकार कर कहा था कि बचो सरकार! चन्द्रगुप्त!! इस समाचार के फैलने से पहले आप यहाँ से चले जाइए। नही तो, महाराज पुरु के प्रासाद से जीवित निकलना कठिन हो जाएगा।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने आश्चर्य के साथ कहा अब समझा! धन्य गुरुदेव!

फिर कुछ रुककर बोले प्रतिहारी! जहाँ तुमने इतनी कृपा की है, वहाँ एक बात और करना। फिलिपोस की हत्या किसने की, यह किसी को मालूम न होने पाये!'

'प्रतिहारी ने धीरे से कहा, 'गुरुदेव की इच्छा पूरी होगी आप जाइए।'

चन्द्रगुप्त मौर्य जाते जाते चौंककर खडे हो गए। प्रतिहारी की ओर ध्यान से देखते हुए बोल, 'क्या कहा तुमने, गुरुदेव?'

प्रतिहारी ने नकली दाढी को उतार कर कहा, आपने पहचाना नही, मैं जीवसिद्धि हूँ।'

'जीव तुम!' चन्द्रगुप्त मौर्य चकित होकर बोले।

'हाँ!' जीवसिद्धि ने अपनी दाढी फिर से लगाते हुए कहा 'अब जाइए, देर करना आपके हित मे नही है।

शीघ्रता से एक ओर चन्द्रगुप्त मौर्य और दूसरी ओर वह प्रतिहारी चल दिए।

महाराज पुरु के प्रासाद से थोडी ही दूर पर यूनानी सेनापति यूडेमियस का प्रासाद था। उसके विशाल कक्ष म वह बडी सी चौकी पर बठा था। पास मे नीचे बठा था जैन साधु वेष म पालक!

ज्योतिषी!' यूडेमियस ने कहा, तुम बातें खूब करत हो, अब तो हमारे फिलिपोस की जिन्दगी को कोई खतरा नही। अब तो यूनानी सिपाही अच्छी तरह से उनके महल की देखभाल करते हैं।'

यह नही जानता सरकार!' पालक बोला मेरा ज्योतिष कहता है कि अब भी खतरा है और किसी गहरे मित्र से खतरा है।'

तभी एक यूनानी सनिक हाँफता हुआ आया और फौजी ढग से अभिवादन करके उसने कहा, हुजूर! बबाद हो गए।'

क्या बकता है?' यूडेमियस ने उठते हुए कहा।

'ठीक कह रहा हू, हुजूर!' उस सैनिक ने कहा, 'फिलिपोस साहब कत्ल कर दिए गए।'

'फिलिपोस साहब का कत्ल!' यूडेमियस चिल्लाया, कहाँ?'

राजा पुरु के महल म।' यूनानी सैनिक ने जवाब दिया।

'कैसे? यूडेमियस ने प्रश्न किया।

'सरकार! जासूसो से पता चला है कि चन्द्रगुप्त धाम को राजा पुरु से मिलने गया था। उन्होंने उसे जल्दी ही अन्दर बुला लिया था।' यूनानी

सैनिक ने कहा, 'यह भी पता चला है कि कत्ल के वक्त राजा पुरु अपने अन्दरूनी महल से बाहर थे।'

यह ज्योतिषी ठीक कहता था।' यूडेमियस चिल्लाया, यूनानी फौज को कहो कि पुरु का महल घेर ले, और तुम खुद जाकर पुरु का खात्मा कर आओ।

यूनानी सैनिक के जाते ही पालक ने कहा, 'हुजूर, मैंने कहा था कि किसी गहरे मित्र से खतरा है। पर यह नहीं समझा था कि वह गहरा मित्र पुरु होगा।'

यूडेमियस ने तेजी से चहलकदमी करते हुए कहा, 'अब तुम्हारा ज्योतिष क्या कहता है ? अब आगे क्या होगा ?'

पालक ने अपनी उँगलियों पर कुछ हिसाब लगाते हुए कहा मेरा ज्योतिष कहता है कि आपकी जिन्दगी भी खतरे में है। किन्तु बचाव हो सकता है। आपकी समझदारी आपको इस खतरे से बचा सकती है।'

मुझे भी खतरा है। यूडमियस ने चौंककर कहा मेरी समझदारी ।' और फिर उसने चिल्लाकर पुकारा, एण्टीओकस !'

एण्टीओकस एक यूनानी सैनिक था। वह दौड़ा हुआ अन्दर आया और फौजी अभिवादन के बाद खड़ा हो गया।

'हमारे पास कितने यूनानी सिपाही हैं, एण्टीओकस ?' यूडमियस ने घबराकर पूछा।

'तीन हजार सरकार !' एण्टीओकस ने उत्तर दिया।

'क्या सबके पास घोड़े हैं ?' यूडमियस ने पूछा।

नहीं सरकार !' एण्टीओकस ने कहा लेकिन हम पुरु के घोड़े और हाथी ले सकते हैं।'

इन नदियों को पार करने के लिए हाथी ज्यादा मुफीद साबित होंगे।' यूडमियस ने कहा जितने हाथी और घोड़े हमारे पास हैं सबको तैयार करो। सभी यूनानी सिपाही मेरे साथ अभी चलेंगे। हमें जल्दी से यह शहर छोड़ देना होगा।

ऐसा ही होगा सरकार ! एण्टीओकस ने सिर झुकाकर कहा।

'और देखो !' यूडेमियस ने कहा, दरवाजे पर खड़े पहरेदारों से कह

दो कि जैसे ही राजा पुरु अन्दर आएँ वैसे ही उन्हें कत्ल कर दिया जाए। मेरे पास लाने की कोई जरूरत नहीं।'

एण्टीओकस ने आश्चय मे सेनापति के मुख की ओर देखा। सेनापति ने चिल्लाकर कहा, 'जाओ!'

उसके जाते ही पालक ने कहा, 'हुजूर, मेरा ज्योतिष कहता है कि आपकी समझदारी रंग दिखाएगी। लेकिन आप रास्ते म कहीं न ठहरें।'

'मैं कहीं नहीं ठहरूँगा, ज्योतिषी!' यूडेमियस चिल्लाया, 'मुझे जल्दी से जल्दी हिन्दुस्तान छोड देना है।'

अट्ठाईस

अगले दिन महाराज पुरु की राजधानी म झुण्ड के झुण्ड लोग राज पथो पर घूम रहे थे। उन सबका खून खौल रहा था। उनके हाथो म नगी तलवारें थीं। वे उन्हें हवा मे हिला रहे थे। प्रासाद के बाहर एक ऊँचे से स्थान पर खडा एक सैनिक जोर जोर से बोल रहा था। उसके आस पास लोग जमघट लगाए खडे थे। वह कह रहा था यूनानियो ने हमारे साथ विश्वासघात किया है। महाराज पुरु अपने वचनानुसार उनकी सहायता कर रहे थे। उनके सेनापति यूडेमियस ने धोखे से बुलवा कर मरवा डाला और हाथी चुराकर चोरो की तरह भाग खडा हुआ। यह विश्वासघात और मित्रघात नहीं तो क्या है?

'विश्वासघातियो का नाश हो।' भीड एक स्वर मे चिल्ला उठी।

बाजार मे एक चौराहे पर खडा व्यक्ति चिल्ला चिल्ला कर कह रहा था 'भाइयो!' मुझे पता चला है कि आय चन्द्रगुप्त और महाराज पुरु मिलकर देश को यूनानियो के चगुल से छुडाने का प्रयास करने वाले थे। किसी तरह यूनानी इस रहस्य को जान गए। उन्होंने महाराज पुरु को कायरो की तरह अपने महल मे बुलाकर मार डाला। लानत है इस कौम

पर। शायद इन्होंने आर्य चन्द्रगुप्त का भी खून कर दिया हो। दोनों वीर देश के लिए बलि चढ़ गए।'

इसी प्रकार एक जैन साधु चिल्ला चिल्ला कर कह रहा था, भाइयो! मैं जैन हूँ। किन्तु आज जैन अथवा आर्य का तो कोई प्रश्न नहीं। यह देश दोनों का है। पहले हमारी आजादी पर आक्रमण हुआ था और आज हमारे मान पर हमारी मैत्री पर आक्रमण किया गया है।'

तभी भीड़ में से किसी ने कहा, 'खून का बदला खून से लिया जाएगा?'

मैं अहिंसा का उपासक होते हुए भी इस कथन को समय के अनुकूल मानता हूँ। जैन साधु ने कहा, जिन लोगों ने हमारे देश को रौंद डाला, जिन्होंने पुरु जैसे पुण्यवान महात्मा का वध कर दिया, जिन्होंने आर्य चन्द्रगुप्त की हत्या की उनके लिए अहिंसा नहीं है। आगे बढ़ो, भाइयो! नराधम फिलिपोस और यूडेमियस के महलों को आग लगा दो।'

बिफरी हुई भीड़ को संकेत चाहिए था। वह तलवारें हिला हिला कर आगे बढ़ी। वह चिल्ला चिल्ला कर कह रही थी, 'महाराज पुरु और आर्य चन्द्रगुप्त का प्रतिशोध लो।'

चन्द्रगुप्त की जय!' कोई भीड़ में से चिल्ला उठा।

'महाराज पुरु की जय!' दूसरे ने नारा दिया।

फिलिपोस और यूडेमियस यूनानियों के प्रासाद पास पास थे—कितने ही मार्गों से कितने ही उन्मादी लोगों ने आकर इन्हें अग्नि दे दी। दोनों प्रासाद धू धू करके जलने लग गए।

यहाँ से यूनानियों का नामोनिशान मिटा दो साथियो!' कोई चिल्लाया।

तभी किसी का स्वर उभरा जय स्वतन्त्र आर्य देश!'

तभी जलते हुए प्रासादों से कुछ दूरी पर जैन साधु ने एक ऊंचे स्थान पर खड़े होकर फिर कहा, 'ठहरो भाइयो! मेरे पास आओ।'

लोग जैन साधु के इर्द गिर्द इकट्ठे होने लग गए। कुछ देर के लिए शोर-गुल थम-सा गया। उस शांत वातावरण में पुन जैन साधु ने कहना शुरू किया, आज नगर में आग ही-आग दिखाई दे रही है। यूनानियों के घर

और ग्राम-जन हर राख हुआ ही चाहते हैं, किंतु हमारा प्रश्न वही का वही है। इसके बाद क्या होगा ? महाराज पुरु आज हमारे बीच नहीं हैं। देश रक्षक आर्य चन्द्रगुप्त भी नहीं हैं। हम अनाथ हो गए हैं। हमारा नाथ बनकर कौन आएगा ? देश की बागडोर कौन सम्भालेगा ? ये यूनानी बड़े चालाक हैं। ये बड़े फितरती हैं। यूडमियस इनका नेता है। वह फिर यहाँ आ सकता है, यदि वह यहाँ आ गया, तो जुल्म की ऐसी कहानी दुहराई जाएगी, जिसका अन्त नहीं होगा। काश ! आज आर्य देश के भाग्य विधाता जीवित होते।'

भीड़ में से कोई चिल्लाया, 'आर्य देश के भाग्य विधाता जीवित हैं। मैंने थोड़ी देर पहले ही आर्य चन्द्रगुप्त को देखा है।'

'किसने देखा है आर्य चन्द्रगुप्त को ?' जैन साधु ने सहर्ष पूछा।

भीड़ में से एक व्यक्ति निकलकर जैन साधु के पास आया बोला, 'मैं भवानी की कसम खाकर कहता हूँ कि आर्य चन्द्रगुप्त जीवित हैं। थोड़ी ही देर पहले मैंने उन्हें श्वेत अश्व पर देखा था।'

भीड़ हर्षोल्लास से झूम उठी। वह निनाद कर उठी —

'आर्य चन्द्रगुप्त की जय ! देव चन्द्रगुप्त की जय !!'

जैन साधु ने भीड़ को संकेत से शांत करते हुए कहा, 'भाइयो ! यदि देव चन्द्रगुप्त जीवित हैं, तो देश की देवी का धन्यवाद करो। उसने हमारी रक्षा की है। हम उसके कृतज्ञ हैं।'

सब लोगों के मस्तक झुक गए। मानो वे किसी अदृश्य शक्ति के प्रति श्रद्धा सुमन चढ़ा रहे हों।

तभी जैन साधु का स्वर उनके कानों में पड़ा, 'यदि हमारे अधिष्ठाता बच गए हैं तो देश की बागडोर वही सम्भालेंगे। हम उन्हें ही अपना महाराज बनायेंगे। हम पौरव, मालवी, तक्ष और पर्वतीय—सबके सब उन्हीं को अपना महाराजा स्वीकार करेंगे। हम अखण्ड राज्य चाहते हैं। देश में सुव्यवस्था चाहते हैं। देश को पूर्णतया स्वतन्त्र रखना चाहते हैं।'

सबने एक स्वर में कहा, 'हम देश को पूर्णतया स्वतन्त्र रखना चाहते हैं।'

तभी जैन साधु के पास खड़े व्यक्ति ने चिल्लाकर कहा, 'भाइयो !

देखो, श्वेत अश्व को दौड़ाते हुए देव चन्द्रगुप्त आ रहे हैं।' -

सब ने उस ओर देखा। सबके चेहरे खिल उठे। वास्तव में आर्य चन्द्रगुप्त उन्हीं की ओर आ रहे थे।

उनके पास आते ही नारा लगा — 'देव चन्द्रगुप्त की जय!'

चन्द्रगुप्त मौर्य अपने अश्व से उतर कर उस स्थान पर पहुंचे, जहां पर जैन साधु खड़ा था। वह उन्हें देखकर नीचे उतर गया। केवल उसका हाथ आशीर्वाद के लिए उठा।

'भाइयो! मेरे देश के पीड़ित भाइयो!' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'मुझे तनिक भी महाराज बनने की इच्छा नहीं है। मैं उनका आत्मीय हूं। किन्तु राज्य की लालसा का अंकुर मेरे मन में कभी नहीं उपजा। मैं महाराज पुरु को पितृ तुल्य समझता था। मैं सदैव उनका हित चाहता था। यह मेरा दुर्भाग्य है कि उन्हें शत्रु के षड्यन्त्र से न बचा सका। इसका मुझे जीवन भर दुःख रहेगा।'

तभी नारा लगा 'देश रक्षक चन्द्रगुप्त की जय!'

कोई और चिल्ला उठा 'महाराज चन्द्रगुप्त की जय!'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने उन्हें शान्त करते हुए कहा, 'मैं महाराज नहीं, आपका सेवक बनकर देश की सेवा करना चाहता हूं। इसी से महाराज पुरु की आत्मा को शान्ति मिलेगी।'

सर्वत्र निस्तब्धता छायी रही।

'मैंने सच्चे देश सेवक के रूप में प्रयास किया कि यूनानियों की आंधी इस देश में आगे न बढ़े।' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले 'मैंने कोशिश की वह छिन्न भिन्न होकर वापस लौट जाए। ऐसा हुआ भी। मकदूनी ने देश की रक्षा की किन्तु जाते जाते यूनानियों ने हम पर जो वार किया है, उसे हम भूल नहीं सकते। महाराज पुरु जैसे धर्मात्मा फिर कब इस धरा पर अवतरित होंगे?'

भीड़ चिल्लाई 'महाराज पुरु की जय!'

'महाराज पुरु की इस कायरतापूर्ण हत्या पर मुझे हार्दिक दुःख है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'उससे बढ़कर दुःख है इस बात का कि उनकी हत्या करके यूनानियों ने देश में अव्यवस्था फैलाने की कोशिश की है ताकि

वे सेना लेकर फिर आ सकें और स्वामी हीन इस देश को पाँव तले रौंद सकें।'

'यह देश हमारा है। हम स्वामी हीन नहीं रहे।' भीड चिल्लायी, 'हमारे स्वामी आप हैं। हम आपको महाराज बनायेंगे।'

पर मैं तो आपका तुच्छ सेवक हूँ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'मैं महाराज बनना नहीं चाहता।'

फिर एक गगनभेदी स्वर उभरा 'महाराज चन्द्रगुप्त की जय!'

और तभी किसी व्यक्ति ने ताज लाकर चन्द्रगुप्त मौर्य के सिर पर रख दिया। कहा 'प्रजा बधुओं की इच्छा से भारत के महान रक्षक को मैं मालव, कुलूत, पौरव, तक्षशिला और पर्वत राष्ट्रों का महाराज घोषित करता हूँ।'

भीड ने शिरस्त्राण और हाथ की चीजें उछाल-उछाल कर कहा, 'महाराज चन्द्रगुप्त की जय!'

और चन्द्रगुप्त मौर्य ने धीरे से सिर झुका दिया।

अब भी फिलिपोस और यूडेमियस के प्रासादों से लपटें निकल रही थीं।

वहाँ से घोडा दौडाते हुए चन्द्रगुप्त मौर्य झेलम के किनारे बनी कुटिया में पहुँचे। उसमें एक दीपक टिमटिमा रहा था। उसी की क्षीण रोशनी में आचार्य चाणक्य विचार मुद्रा में बैठे हुए थे। वृषल को देखकर वे प्रसन्न हो उठे। बोले वत्स! आज इस ब्राह्मण की पहली इच्छा पूर्ण हुई। आज देश स्वतंत्र हुआ। और वृषल उस स्वतंत्र देश का सम्राट् बना।'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने आचार्य चाणक्य के चरणों को स्पर्श करते हुए कहा, यह सब गुरुदेव की कृपा का फल है।'

'आत्म विश्वास और स्वार्थ त्याग से ही सिद्धि मिलती है, वृषल!' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'वत्स! अब तक जो कुछ हुआ, वह हमारे काम का सिर्फ एक अंश है। यूनानी हमारे देश से पलायन कर गए। हमने स्वतंत्रता की साँस ली। फिर भी एक बात हृदय का शूल बनी हुई है।'

'कौन-सी बात, गुरुदेव?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्सुकता से पूछा।

'वृषल ! यह देश छोटे छोटे राज्यों में बटा हुआ है।' आचार्य चाणक्य ने तनिक चिन्तित मुद्रा में कहा, 'इस स्थिति में यह स्वतन्त्रता किसी भी समय नष्ट हो सकती है। किसी भी समय कोई और सिकन्दर एक के बाद दूसरे और दूसरे के बाद तीसरे नरेश को पराजित करता हुआ आगे बढ़ सकता है।'

'गुरुदेव ! इसका कोई उपाय ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'वृषल ! इसका एक ही उपाय है।' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'सम्पूर्ण देश एक हो। छोटे छोटे राज्य मिट कर भारत भर में एकछत्र राज्य स्थापित हो।'

'इसमें तो समय लगेगा, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'हाँ वृषल ! इसके सिवा और कोई चारा भी नहीं है।' आचार्य चाणक्य ने उत्तर दिया।

'गुरुदेव का स्वप्न पूरा हो।' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले।

'अवश्य पूरा होगा वत्स !' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'इसे तुम ही पूरा करोगे। वह दिन दूर नहीं जब तुम सम्पूर्ण भारत के सम्राट होगे।'

चन्द्रगुप्त मौर्य की आँखें भर आई। वे धीरे से बोले, 'गुरुदेव के आशीर्वाद से और इस यज्ञ में महामात्य का कार्य आपको ही करना होगा।'

'तुम कहते हो तो करूँगा ही।' आचार्य चाणक्य बोले 'लेकिन एक बार फिर वचन देना होगा वृषल !'

'आज्ञा कीजिए गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'मेरी कोई भी आज्ञा टाली नहीं जाएगी।' कहते कहते आचार्य चाणक्य गम्भीर हो गए।

'आपकी आज्ञा पालन में यदि मैं अपना सर्वस्व भी अर्पित कर सका तो अपना जीवन सफल समझूँगा।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने आचार्य चाणक्य के चरणों को स्पर्श करते हुए कहा।

आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के सिर पर हाथ रख कर कहा, 'युग युग जीयो भारत सम्राट् ! अब तुम जा सकते हो। राजधानी में सारा प्रबन्ध तुम्हें पूर्ण हुआ मिलेगा। मन्त्रि मण्डल तुम्हारी प्रतीक्षा कर

रहा है।'

चन्द्रगुप्त मौर्य प्रणाम करके अपने अश्व पर बैठ कर राजधानी की ओर बढ़ गए। वहाँ पर मन्त्रिमण्डल ने स्वागत किया। शासन की बाग-डोर सम्भालते ही उन्होंने महाराज पुरु के निधन पर तेरह दिन तक राजसी शोक मनाया।

उनतीस

'जीवसिद्धि !' आचार्य चाणक्य ने पुकारा।

आज्ञा, महामात्य !' जीवसिद्धि ने अन्दर प्रवेश करते हुए कहा।

'तुम्हारा अनुमान ठीक है जीवसिद्धि। आचार्य चाणक्य गम्भीरता से बोले, 'आज से मैं सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का महामात्य हूँ।'

'तब तो आज से ही प्रासाद में चल कर रहेंगे।' जीवसिद्धि ने प्रसन्न होकर कहा।

क्या !' आचार्य चाणक्य चौंक कर बोले, 'प्रासाद में ! नहीं जीव-सिद्धि, प्रासाद में नहीं ! मैं इसी कुटिया में रहूँगा। आमोद प्रमोद, विलास और ऐश्वर्य ब्राह्मण के लिए नहीं बनाए गए। ब्राह्मण का काम केवल सेवा करना है देश और समाज की सेवा। आमोद प्रमोद, विलास और ऐश्वर्य केवल राजाओं के लिए हैं—उन्हीं को मुबारक हो। मैं तो यहीं रहूँगा। और तुम मेरे पास रहोगे ! भविष्य में ऐसी बात तुम्हारे मुह से न सुनूं।'

'क्षमा प्रदान करें, महामात्य !' जीवसिद्धि ने सिर झुकाकर कहा, फिर कभी ऐसी गलती नहीं होगी।'

जीवसिद्धि ! सम्राट ने तो तेरह दिन का राजसी शोक घोषित कर दिया है।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'पर तुम्हें इस बीच यह काम करना होगा।'

'आज्ञा की जए, महामात्य !' जीवसिद्धि ने कहा।

'पर्वतेश्वर के राज्य मे, कुलूत मे, तक्षशिला मे, इन्द्रप्रस्थ मे, लिच्छवी राज्य मे, ताम्रलिपि मे और मगध मे हमारे जो लोग हैं, उन्हें आदेश भेजना होगा कि वे सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य की विजय के उपलक्ष्य म अपने अपने नगरो मे प्रदशन करें।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'देश भर मे सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य की जय जयकार हो। ऐसे भाषण हों कि लोग उन्हे भारत का रक्षक और देव समझने लगें। इतना मान हो उनका, इतना यशगान कि छोटे छोटे राज्य भय से आतंकित हो उठें।'

ऐसा ही होगा महामात्य !' जीवसिद्धि ने कहा, 'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए तो हर राज्य के लोग अपने प्राण तक न्योछावर करने के लिए तैयार हैं।'

मैं जानता हूँ जीवसिद्धि ! महामात्य चाणक्य ने कहा, 'किन्तु जिस उद्देश्य से यह सारा प्रचार किया गया उसे पूर्ण करने का समय अब आ पहुचा है। महामात्य की मोहर बन कर आ गई होगी। राक्षसी शोक के बाद उस मोहर को लगा कर मगध के सिवा सब राज्यो को लिखना होगा कि यह पत्र लिखने के एक मास के अन्दर अन्दर सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को कर देना और सब राज्याधिकार उन्हे सौंपना स्वीकार करें अन्यथा उनके राज्य पर आक्रमण कर दिया जाएगा। इसी के साथ लिखना कि सम्राट यह सब कुछ अपने लिए नही करना चाहते विदेशी आक्रमणो के मुकाबले म देश के भीतर एक राज्य सत्ता बनाने के लिए ही करना चाहते हैं।

समझा महामात्य ! जीवसिद्धि न कहा ऐसा ही होगा।'

और सुनो।' महामात्य चाणक्य ने कहा मुझे पत्र दिखा लेना। मोहर मेरे सामने लगाना। और इस एक मास म विभिन्न राज्यो के भीतर इतने प्रदर्शन होने का आदेश भेज देना कि राजाओ के लिए हमारी बात मानने के सिवा और कोई चारा न रहे ?

महामात्य की जय हो।' जीवसिद्धि ने कहा, आपका आदेश शिरोधार्य।'

'अब जाओ, जीवसिद्धि। महामात्य चाणक्य बोले, 'बाहर पालक

होगा। उसे मेरे पास भेज दो।'

पालक बाहर बैठा हुआ जीवसिद्धि के निकलने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके निकलते ही वह कुटिया मे प्रवेश कर गया। वह अपने पुराने भेस मे ही था। महामात्य चाणक्य को प्रणाम करके बोला एक समाचार है गुरुदेव !'

'मैं जानता हूँ, वत्स !' महामात्य चाणक्य ने कहा मैं काम की अधिकता के कारण तुम्हे पहले बुला नही सका। यूडेमियस को भगा कर जो तुमने सराहनीय काय किया, उसके लिए मेरी ओर से बधाई।

गुरुदेव ! मेरे कारण महाराज पुरु की जो हत्या हुई, इसका मुझे बहुत दु ख है।' पालक ने भीगे हुए कण्ठ से कहा।

'महाराज पुरु महात्मा थे।' महामात्य चाणक्य न गम्भीर स्वर म कहा, यह मैं जानता हू, पालक ! किन्तु देश को आज महात्माओ की नही राजनीतिज्ञो की आवश्यकता है। महाराज पुरु के मरण से देश को अधिक लाभ हुआ है और जीवन से हानि होती। अब यूडेमियस का समाचार कहो।'

यूडेमियस का तो कोई समाचार नही गुरुदेव !' पालक ने कहा, एक और महत्वपूर्ण समाचार है।'

'वह क्या ? महामात्य ने गम्भीर होकर पूछा।

'यूडेमियस के पलायन करने के बाद ही एक संदेशवाहक कबूतर उसके महल मे आया था।' पालक ने कहा, यूनानी भाषा मे एक सन्देश लिखा था। सिकन्दर की बिलोचिस्तान मे मृत्यु हो गई।

सिकन्दर परलोक सिधार गया।' महामात्य चाणक्य ने चौंक कर कहा 'देखो पालक ! यह समाचार फैलने न पाये कम से कम एक मास तक। कोई और बात ?'

कवल एक !' पालक ने सिर झुका कर कहा, 'आप जानते है कि मैं चित्रकार हूँ।'

'ज्योतिषी महाराज।' महामात्य चाणक्य ने मुस्करा कर कहा पर उसस क्या ?

पालक ने सिर झुका कर कहा, 'मैंने एक चित्र बनाया है गुरुदेव !'

चित्र।' महामात्य के मुख से निकला।

'हाँ गुरुदेव।' इतना कह कर कपडे मे लिपटा चित्र गुरुदेव के सामने रख दिया।

महामात्य चाणक्य ने कपड़ा हटाया। चित्र को देख कर एकाएक उनके चेहरे का रंग बदल गया। उनके मुख से निकला, 'माया, मेरी प्यारी बेटी!'

'गुरुदेव! यूडेमियस के प्रासाद मे समय काफी था।' पालक ने कहा, 'मैं बहन माया का यह स्मृति चित्र बनाता रहा।'

माया! मेरी प्यारी बच्ची!' महामात्य चाणक्य ने एक लम्बी साँस भरते हुए कहा पता नहीं बेचारी किस हाल मे है? वह जीवित भी है अथवा नही। मेरी नीति यूनानियो को खदेडने म सफल रही और उसने चन्द्रगुप्त मौर्य को सम्राट बना दिया। पर अपनी प्यारी बेटी का नही खोज पायी। बेटी, तू कहाँ है? बोल नहीं सकती। एक बार बोल तो। मैं तेरे लिए आकाश पाताल एक कर दूगा।'

इसके साथ ही महामात्य चाणक्य की बडी बडी आँखो से अश्रु छल कने लगे।

गुरुदेव की ऐसी स्थिति देखी तो पालक घबडा गया।

इस चित्र को ले जाओ पालक! महामात्य चाणक्य ने कहा, 'तुम्हारा यह चित्र मुझे कुछ नहीं करने देगा। इसे मेरे पास मत रखो। और हाँ चित्र बनाते समय एक बात तो तुम भूल ही गए। माया बिटिया के दायें कपोल पर एक साथ दो तिल हैं।

हाँ मैं भूल गया था, गुरुदेव!' पालक ने कहा, 'अब आज्ञा चाहता हूँ।'

इसके बाद पालक चित्र को उठा कर और नमस्कार करके चला गया।

तीस

हरिपुर के निकट महाराज पर्वतक के भव्य उद्यान मे राजकुमारी छाया एक सुन्दर सी शिला पर विचार-मग्न बैठी हुई है। तभी किसी ने पुकारा 'छाया!'

राजकुमारी छाया ने चौक कर देखा। उसका बड़ा भाई युवराज मलयकेतु पुकार रहा है। उसकी आखें भरी हुई हैं।

छाया उसके पास जाकर छाती से लिपट गई। बोली, 'भय्या ! तुम्हारी आँखो म आँसू।'

'मेरी प्यारी बहन।' युवराज मलयकेतु दुखी मन से बोला, 'मैं तुम्हारा बड़ा भाई कहलान के योग्य नही।'

'ऐसा न कहो, भय्या!' कहते कहते छाया की आँखें भी भर आईं।

'जो भाई अपनी छोटी बहन की पीड़ा को बाँट न सके और मूकदर्शी बना देखता रहे।' युवराज मलयकेतु बोला, 'वह भाई कहलाने योग्य नही, छाया! वह पाषाण है।'

छाया के अधरो पर एक सिसकी आ गई। उसे दबा कर वह बोली, 'इसम तुम्हारा क्या दोष है भय्या? मेरा भाग्य ही खोटा है। मेरा देवता मुझ से रूठ गया है। उसके हृदय मे केवल एक ही धुन है—देश को स्वतत्र बनाना—उसकी शक्ति को बढाना। पिता नही मानते। मेरे ही पिता अपनी बेटी की राह मे आ खडे हुए हैं। तुम क्यो इस अभागिन के लिए दुखी होते हो?'

'प्यारी बहन।' युवराज मलयकेतु ने कहा, 'यह तुम क्यो भूल जाती हो कि वे मेरे भी पिता हैं। युवराज बना कर भी मुझस परामर्श नही किया। फिर चन्द्रगुप्त मौर्य ने भी गलत नही कहा, छाया! देश मे एक राज्य की आवश्यकता है। एक सत्ता म ही देश का हित है। तभी तो देश शक्तिशाली होगा। तभी तो विश्व का अग्रणी बन सकेगा, अन्यथा यूनानी फिर आक्रमण करेंगे और छोटे छोटे राज्य फिर उनकी विशाल

सना के आगे सिर झुका देंगे। मैं अभी महाराज के पास जाऊंगा। उन्हें अवगत कराऊँगा कि उनके हठ से उनके ही परिवार का सर्वनाश हुआ जा रहा है। परिवार में एक अबोध बालिका रो रोकर अपने प्राण देने पर तुली है और देश में स्वतन्त्रता की रोती हुई देवी अभिशापपूर्ण नेत्रों से उनकी ओर देख रही है। उनका हठ हम सब को—सारे देश को नष्ट ।'

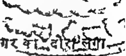
राजकुमारी छाया ने जल्दी से युवराज मलयकेतु के मुख पर हाथ रखते हुए कहा, ऐसा मत करिए, भय्या ! इससे कोई लाभ नहीं होगा। मैं महाराज के पास गई थी। वे अपने विशेष कक्ष में आमोद प्रमोद में लीन थे। अर्द्धनग्नावस्था में एक नर्तकी । मेरी बात सुन कर वे चिल्लाये थे—चली जा यहाँ से नादान छोकरी यह राज की बात है। तेरी समझ में बैठने वाली नहीं । और फिर मदिरा का पात्र होठों से लगा लिया। और मैं रोती बिलखती चली आई ।

'पिता हैं अथवा पाषाण !' युवराज मलयकेतु चिल्लाए प्यारी बेटी को अश्रु बहाते देख कर भी उनका हृदय नहीं पसीजा। इस राज्य का आखिर वे कब तक साथ लिए रहेंगे ? क्या मरते समय भी चिता में साथ ले जाएँगे। ऐसे राज्य लोलुप को धिक्कार है धिक्कार है छाया !

क्या कहते हो भय्या ? छाया ने युवराज मलयकेतु के मुख पर हाथ रखते हुए कहा वे केवल महाराज ही नहीं, हमारे पिता भी हैं। उन्हें कुछ मत कहो। मेरे भाग्य में यदि रोना लिखा है, तो मुझे चुपचाप रोने दो।

बहन, छाया !' युवराज मलयकेतु का दुःख ज्वालामुखी बन कर फूट पड़ा।

'हाँ भय्या ! कह कर छाया अपने भय्या से लिपट गई। दोनों के अश्रु टप टप करके गिरने लगे।



सवेरे की विहान वेला थी। महामात्य चाणक्य नगर का दौरा लगा-कर लौटे थे। वे अश्व को बाध कर अपनी कुटिया मे आए।

कुछ देर बाद ही भास्कर देव पूव दिशा से उदित हुए। और उनकी प्रथम किरण के साथ ही जीवसिद्धि ने कुटिया मे प्रवेश करके प्रणाम किया।

'काय पूण हुआ, जीवसिद्धि !' महामात्य चाणक्य ने उसके हाथ म भोज पत्रो के पन्ने देखते हुए कहा।

'हा महामात्य !' जीवसिद्धि ने कहा 'कुलूत लिच्छवी वैशाली, हस्तिनापुर, शालिकोट, तक्षशिला और सिंधु देश के राजाओं ने हमारी बात मान ली है। महाराज चन्द्रगुप्त मौय की सनाएँ इन राज्यो मे प्रविष्ट हो चुकी हैं। सभी राजाओ के लिए आपके आदेशानुसार आजीवन भत्ता निश्चित कर दिया गया है।'

महामात्य चाणक्य ने प्रसन्न होकर कहा, 'यह तो शुभ समाचार है, जीवसिद्धि ! वृपल आज ठीक अर्थों मे सम्राट बने। आगे ।'

'बाबल से हमारे गुप्तचर ने लिखा है कि सेल्यूकस की बेटी कुमारी हेलेन अब भी हमारे महाराज के लिए दीवानी हो रही है।' जीवसिद्धि ने एक भोज पत्र पढ कर बताया।

'बहुत खूब !' महामात्य चाणक्य का अट्टहास कुटिया मे गूज उठा। फिर बोले गुप्तचर को लिख भेजो कि यह प्रेम दिन दिन बढता चला जाए। कम न हो। सेल्यूकस तो सिकन्दर के बाद अब फारस और बाबल का सम्राट बन बैठा है। वृपल के लिए उसका प्रेम लाभदायक सिद्ध होगा। और हाँ शायद वृपल उसे पत्र लिखना न चाहे। उनस कहना यह मरी आज्ञा है। वे हेलेन को पत्र लिखें प्यार भरा ताकि वह उसे पढ कर दुनिया की सारी बातें भूल जाए। यह पत्र अतिशीघ्र जाना चाहिए।

'एसा ही होगा, महामात्य !' जीवसिद्धि की ओर से उत्तर मिला।

'आगे !' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'हमारे पत्र के उत्तर में महाराज पर्वतक ने लिखा है...।' जीवसिद्धि पढ़ते-पढ़ते रुक गया।

'पर्वतक !' महामात्य चाणक्य ने चौंक कर कहा, 'पर्वतक ने क्या लिखा है ?'

जीवसिद्धि ने उस राजपत्र को धीरे धीरे पढ़ा, 'पर्वतेश्वर की सेनाएं पिप्पली कानन के उद्दण्ड युवक और हरीपुर के उच्छृंखल ब्राह्मण का सामना करने के लिए हर समय तैयार हैं। यदि हम पर आक्रमण किया गया, तो हम उन दोनों का सिर...!'

'पढ़ो पढ़ो ! आगे क्या लिखा है ?' महामात्य चाणक्य चिल्लाए।

जीवसिद्धि ने डरते डरते उस राजपत्र को पूरा किया, 'हम उन दोनों का सिर काट कर अपनी सीमा पर टांग देंगे।'

महामात्य चाणक्य की आंखों से अंगार बरसने लगे। वह होंठ हाथ मलते हुए सिर दबाते हुए कुटिया में इधर से उधर, उधर से इधर तेजी से कदम धरने लगे।

जीवसिद्धि भय के मारे बोल नही सका। केवल सिर झुका कर चला गया। और महामात्य चाणक्य वैसे ही क्रोध मे जलते हुए बोले, 'पर्वतक ! पर्वत !!' और उन्होंने फिर उस टूटी हुई यष्टिका को उठा लिया। घूर कर उसकी ओर देखा। फिर जमीन पर जोर से पटक कर उस पर अपना पैर रख दिया। इसके बाद क्रोध मे कुटिया के चक्कर काटने लगे। हर बार वह टूटी हुई यष्टिका उनके पैरो के आगे नीचे आकर कुचली जाने लगी।

इसी अवस्था में आकर सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने आकर उन्हे देखा। शीघ्रता से आगे बढ़कर उनके पाँव पर सिर रख दिया और हाथ जोड़ कर बोले, 'गुरुदेव !'

महामात्य चाणक्य रुक गए। सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को उठाकर बोले, 'वृषल ! कल सवेर तुम्हें पर्वतक के राज्य की ओर चलना है। मैं तुम्हारे साथ चलूंगा। इस यात्रा में हम दोनो को भेस बदलना होगा। किसी को यह भी पता नही लगना चाहिए कि हम पर्वतक के राज्य में गए हैं।

पर्वतेश्वर के राज्य मे !' सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य चौंक कर बोले।

हाँ वृषल ! मैं जानता हूँ कि तुम्हारी छाया विरह मे पागल हो रही है। महामात्य चाणक्य ने शान्त होकर कहा तुम उससे मिलना। मैं अपने गुप्तचरो मे मिलूंगा। छाया के पिता पर्वतक ने हमारे राज्य मे सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया है। उसने कहा है कि वह मेरा और तुम्हारा सिर काट कर अपनी सीमा पर लगा देगा।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य चिल्ला कर बोले 'मेरे गुरु का सिर ! कहो उसकी शामत तो नही आई ! बस केवल आज्ञा दें, मैं सेना लेकर उसके राज्य को तहस नहस कर दूं।'

'इसकी आवश्यकता नही वृषल !' महामात्य चाणक्य सोचते हुए बोले 'जब तक कोई मजबूरी न आ जाए मैं भारतीयो को आपस मे लड़ने न दूंगा। अभी इन्हें मगध की विशाल सेना से लड़ना है। फिर यूनानियो का भय भी अभी दूर नही हुआ है। इस समय नीति की आवश्यकता है। सोच समझ कर कदम उठाने की जरूरत है, सेना की नही। कल सुबह ही हम चल देना होगा।'

'गुरुदेव की आज्ञा !' सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने सिर झुका कर कहा।

'एक बात और वृषल !' महामात्य चाणक्य बोले, 'आज संध्या को मैं तुम्हारे प्रासाद में आऊँगा। तुम द्वारपाल को कह देना कि वह मुझे प्रवेश न करने दे।'

'गुरुदेव !' सम्राट चन्द्रगुप्त ने चौंक कर कहा।

घबराने की कोई बात नहीं, वृषल ! महामात्य चाणक्य कुछ सोचते हुए बोले 'मैं चाहता हूँ कि लोग जानें कि तुमने मेरा अपमान किया है। मैं द्वारपाल से झगड़ा करूँगा। तुम उसी समय प्रासाद के द्वार पर आकर क्रोध से कहना, ओ ब्राह्मण ! तुम्हारी उच्छृंखलता मुझसे सहन नहीं होती। तुम मेरे मित्रों को मेरा शत्रु बना रहे हो। चले जाओ यहाँ से ! आज से तुम मेरे महामात्य नहीं हो।'

गुरुदेव !' सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने उनके चरण स्पर्श करते हुए कहा, यह मुझसे न हो सकेगा। ऐसा राज्य मुझे नहीं चाहिए। ऐसी नीति मुझे पसंद नहीं जो मुझसे गुरुदेव का अपमान करवाये। मैं ऐसा गलत कदम किसी को धोखा देने के लिए भी नहीं उठा सकता।'

'पागल न बनो वृषल ! महामात्य चाणक्य थोड़ा हँसते हुए बोले, 'भारत का हित इसी बात में है। पर्वतक मुझसे घृणा करता है। उसके गुप्तचर यहाँ सक्रिय हैं। वे मेरा और तुम्हारा झगड़ा कराने का अवसर भी खोजते फिरते हैं। इससे पर्वतक और उसके गुप्तचरों को विश्वास हो जाएगा कि वे अपने प्रयास में सफल हुए। और उनका यह विश्वास ही एक दिन उनके सर्वनाश का कारण होगा। और तुम्हारे हृदय से मैं भली भाँति परिचित हूँ। तुम्हारी गुरुभक्ति मुझसे छिपी नहीं। उसके लिए तुम्हें किंचितमात्र भी चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है।'

आप मुझसे बहुत कठिन कार्य करा रहे हैं। सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा गुरुदेव की इच्छा के आगे चन्द्रगुप्त का मस्तक नत है।

ईश्वर तुम्हें दीर्घायु और पूर्ण विजय प्रदान करे !' महामात्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के सिर पर हाथ रखते हुए कहा आज संध्या को मैं तुम्हारे प्रासाद पर आऊँगा। मेरा अपमान करने के बाद तुम अपने मंत्रि महल की बैठक बुलवाओगे और उन्हें आदेश दोगे कि वे अपना-अपना

काय सुचारु रूप से करते रहे । और कल विहान बेला मे हम यहा से चले जायेंगे ।'

'गुरुदेव की इच्छा पूण हो !' सम्राट चन्द्रगुप्त मौय के मुख से निकला । इसके बाद वे नमस्कार करके कुटिया से बाहर चले गए ।

महामात्य चाणक्य ने टूटी हुई यष्टिका को उठाकर कहा, 'पवतक ! अब तू मेरी मुटठी मे है ।'

बत्तीस

अगले दिन विहान बेला म दो व्यक्तियो न झेलम के तट पर खडी एक नौका के नाविक स कहा, उस पार चलोगे भाई !'

नाविक नौका मे बैठा ऊँघ सा रहा था । उसने अधखुली आखो से देखा । दो व्यक्ति घाडो की लगाम पकडे हुए खडे हैं। अँधेरे म वह उनके ढके हुए मुह नही देख सका ।

उसने जम्भाई लेते हुए कहा, 'इतनी सुबह नाव नही खुलेगी । थोडी देर ठहरो । सूय भगवान के दशन करके ही हम चलेंगे । तब तक और सवारी भी आ जाएँगी ।'

उन दोना व्यक्तियो में से एक बोला, 'जरूरी काम है, भय्या ! तुम सवारियो का सोच मत करो । हम पूरी नाव का किराया देंगे। बस हमे घोडो के साथ जल्दी ही उस पार पहुँचा दो ।'

पूरी नाव का किराया सुनकर नाविक की तन्द्रा टूट गई । उसने फिर उन दोनो की ओर देखा, बोला, 'अच्छा, आधा स्वण देना होगा ।'

'वही देंगे !' पहले व्यक्ति ने कहा, 'नाव खोलो ।'

दूसरे ही क्षण वे दोनो व्यक्ति अपने घोडो के साथ नाव मे थे । उनके बैठते ही नाविक ने नाव चलानी शुरू कर दी । दूसरी पार पहुँचते ही उस व्यक्ति ने अर्द्ध स्वण नाविक की हथेली पर रख दिया ।

इसके बाद वे दोनो अपने अपने घोडे पर चढे और तेजी से एक ओर को बढ गए।

धीरे धीरे भास्कर देव पूर्व दिशा से उदित होने लगे। उनकी सुनहरी किरणें धरा पर अपना प्रकाश फैलाने लगी। तभी उन दोनों में से एक ने निश्चित स्थान पर पहुँच कर अपने घोडे की लगाम खींचते हुए कहा, 'गुरुदेव !

दूसरे ने अपने मुह पर से कपडा हटाते हुए कहा, 'यह हमारे शत्रु का क्षेत्र है। यहाँ गुरुदेव नही चलेगा। कुछ देर के लिए मैं न तुम्हारा महामात्य हू और न तुम्हारा गुरुदेव ! तुम हो वैशाली के नगरसेठ प्रतापी मित्र और मैं हूँ तुम्हारा अंगरक्षक विष्णु !'

'गुरुदेव ! मैं जानता हूँ यह आपकी नीति है।' पहले व्यक्ति ने घोडे से उतरते हुए कहा परन्तु आपको सेवक कह कर पुकारने की शक्ति तो मेरी जिह्वा मे नही ! चन्द्रगुप्त जिस दिन गुरुदेव को सेवक समझेगा अथवा कहेगा, उसी दिन मैं सच्चे हृदय से प्रार्थना करता हूँ कि भवानी उसका नाश कर दें।

'शान्त रहो चपल !' महामात्य चाणक्य ने शीघ्रता से कहा 'यह गुरुभक्ति का न तो स्थान है और न ही समय ! हवा के भी कान होते हैं। हमने भेस बदल लिया, नाम बदल लिया और कुछ देर के लिए हमें अपने असली अस्तित्व को भी भूल जाना होगा।'

कल सन्ध्या को प्रासाद के द्वार पर जो आपका अपमान हुआ, उसकी ग्लानि मैं कभी हृदय से निकाल नहीं सकूगा।' पहले व्यक्ति ने कहा।

'अब बस भी करोगे अथवा नही !' दूसरा व्यक्ति क्रोध से बोला, 'मालूम होता है, नगर सेठ का अश्व थक गया है ! लेकिन थोडा ही और चलने पर नए घोडे तैयार मिलेंगे। अब चलो यात्रा लम्बी है। फिर राह मे रुकना भी ठीक नहीं है।

इसके बाद दोनो घोडो पर बैठकर द्रुतगति से गन्तव्य पथ की ओर बढ गए।

तैंतीस

हरीपुर के निकट पर्वतक का भव्य उद्यान। उसमें विशाल सरोवर के पास बना पर्वतक का प्रासाद। उसके विशेष कक्ष में महाराज पर्वतक अपने सामन्तों के साथ रंगरलियों में मस्त। अर्द्धवसना सुन्दरियाँ मयूराकार स्वर्ण पात्रों से मदिरा उडेल उडेल कर सब को पिला रही थीं। उनका सौन्दर्य और मदिरा की मादकता उनकी चेतना को लुप्त कर रही थी।

इसी अवस्था में एक नर्तकी के पैर थिरक रहे थे। महाराज पर्वतक अपनी भुजा फैला कर उसे आगोश में लेने की चेष्टा कर रहे थे, तभी राजकुमारी छाया ने उस कक्ष में प्रवेश किया।

नर्तकी की दृष्टि राजकुमारी छाया पर पड़ी। उसके थिरकते हुए पैर रुक गए। घुंघरुओं की आवाज़ एकदम बंद हो गई। सामन्तगण सम्भल कर बैठ गए। तभी महाराज पर्वतक की दृष्टि राजकुमारी छाया पर पड़ी। कड़कती हुई आवाज़ में बोले 'तुम यहाँ!'

हाँ, पिताजी!' छाया ने मस्तक झुका कर कहा, 'आज सारी मर्यादा को भुला कर, लज्जा को त्याग कर, आपकी बेटी इस विशेष कक्ष में आई है। क्या यही आपका मंत्रणा कक्ष है? क्या इसी मंत्रणा के लिए सामन्तगण एकत्रित हुए हैं?'

महाराज पर्वतक की भृकुटि तन गई। समय को उचित न जान कर उन्होंने इतना ही पूछा, 'इस समय यहाँ आने का कारण?'

कारण! राजकुमारी छाया ने कहा 'आप मौर्य राज्य पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहे हैं। आपकी सेनायें तैयार हैं। वे आज्ञा मिलते ही मौर्य राज्य में प्रवेश कर जाएँगी।'

राजकुमारी छाया के इन शब्दों से महाराजा पर्वतक का नशा चूर-चूर हो गया। वे सीधे बैठते हुए बोले, 'तो फिर!'

'मैं इस असमय में यही बताने आई हूं, पिताजी!' राजकुमारी छाया ने गम्भीर स्वर में कहा, 'यदि ऐसा हुआ, तो आपकी सेनाएँ छाया की देह

को रौंदती हुई आगे बढ़ सकेंगी। आपका रथ मौर्य राज्य में प्रवेश करेगा अपनी बेटी की लाश पर से होकर ।'

तभी राजकुमार मलयकेतु ने प्रवेश करके कहा, 'इस युवराज की लाश के ऊपर से भी! चन्द्रगुप्त मौर्य ने यूनानियों को भारत से खदेड़ कर जो भारतीयों पर एहसान किया है, उसके बदले म उनके राज्य पर आक्रमण करना, देश से शत्रुता करना और यूनानियों की सहायता करना होगा!'

युवराज मलयकेतु के इन शब्दों को सुनकर महाराज पवतक जोश म नहीं आए, बल्कि तनिक मुस्करा कर बोले, लगता है हमारा युवराज साधु बनने की तैयारी कर रहा है। अब यह विश्वधम का प्रसार करना चाहता है।'

युवराज मलयकेतु पिता के इस व्यग्य से तनिक भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने पूण उत्साह के साथ कहा 'अभी तो आपका कथन यथाथ से दूर है पिताजी! हो सकता है किसी दिन यह सच भी हो जाए। मुझ आपके राजकाज लोभ-नीति और भोगविलास स घणा है। एक ही देश में जन्म लेकर एक ही भूमि का अन्न खाकर हम केवल सीमाओं और अधिकारों के लिए भला दूसरों के गले क्यों काटते फिरें ?'

'समझा!' महाराज पवतक ने मुस्करा कर कहा। और फिर सामतों की ओर देखकर बोले, आप लोग जाएँ।'

साम तो के चले जाने के बाद नतकी और सोमरस पिलाने वाली सुन्दरियों से बोले, तुम भी ।'

युवराज मलयकेतु ने इधर उधर लुढके हुए सुरा पात्रों की ओर सकेत करते हुए कहा इस सुरा और नत्य को लेकर ही आप उस महावीर चन्द्रगुप्त से लोहा लेने चले हैं जिन्होंने कुछ न होते हुए भी विश्वविजयी सिकन्दर के दाँत खट्टे कर दिये थे!

हूँ! महाराज पवतक के मुख से निकला।

पिताजी! क्या आप नहीं जानते कि आपकी प्रजा महाराज चन्द्र गुप्त मौय को कितना चाहती है? उनसे कितना प्यार करती है? छाया बोली उनके साथ युद्ध छिडते ही आपके राज्य मे विप्लव मच जाएगा।'

महाराज पर्वतक के अधरों पर मुसकान खेल रही थी। वे हँसते हुए बोले, 'लगता है, तुम लोगों की बुद्धि तनिक भी काम नहीं कर रही है। और फिर तुम राजनीति में तो बिल्कुल कोरे हो।'

'हम समझे नहीं।' दोनों के मुख से निकला।

मेरे अबोध बच्चो!' महाराज पर्वतक ने कहा, 'चन्द्रगुप्त मौर्य की आज देश भर में पूजा हो रही है, यह मैं मानता हूँ। मेरे राज्य में भी अधिकांश लोग उसे भारत का रक्षक समझते हैं, यह भी जानता हूँ और यह भी कि मेरी प्रजा के अतिरिक्त राजकुमारी छाया भी उन्हें प्रेम करती है। किन्तु एक बात जो तुम दोनों नहीं जानते, वह मैं जानता हूँ कि महाराज पर्वतेश्वर भी मौर्यकुमार चन्द्रगुप्त को अपने पुत्र की तरह प्रेम करते हैं।'

छाया ने उद्विग्न होकर पूछा, 'पिताजी! तब यह आक्रमण क्यों?'

महाराज पर्वतक अट्टहास करते हुए बोले, 'यहीं तुम्हारी बुद्धि मात खा गई। चन्द्रगुप्त मौर्य पर आक्रमण नहीं होगा। मुझे घृणा है उस ब्राह्मण चाणक्य से! मेरे ही राज्य का एक साधारण सा शिक्षक मुझे लिखता है कि राज्य छोड़ दो। मैं इस बात को सहन नहीं कर सकता। मैं उसका सिर कुचल दूँगा।'

छाया और युवराज मलयकेतु दोनों ही चुपचाप महाराज पर्वतक की बातें सुनते रहे।

'और चन्द्रगुप्त ने उस उद्दण्ड ब्राह्मण का स्वयं ही अपमानित करके निकाल दिया है। उसका घमण्ड चूर चूर कर दिया है। बड़ा महामात्य बना फिरता था।' महाराज पर्वतक ने फिर कहा 'अब सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ मेरा कोई झगड़ा नहीं रहा। अब वे मेरे मित्र हैं, आत्मीय हैं। मैंने आज ही उन्हें एक पत्र लिखा है कि पाटलिपुत्र विजय में मैं तुम्हारे साथ हूँ। राज्य का आधा भाग मेरा होगा।'

छाया ने हर्षपूर्ण नेत्रों से युवराज मलयकेतु की ओर देख कर कहा 'भय्या!'

युवराज मलयकेतु ने हाथ जोड़ कर कहा, 'हम दोनों क्षमा माँगते हैं, पिताजी! किन्तु एक बात और है।'

छाया बीच में बोल पड़ी 'जब पिताजी मौर्यकुमार को प्रेम करते हैं तो भय की कोई बात नहीं। तुम स्पष्ट बतला दो।'

'पिताजी! आपने जिन्हें पत्र भेजा है, वे इस समय इसी प्रासाद में हैं।' युवराज मलयकेतु ने कहा।

'कौन? चन्द्रगुप्त!' महाराज पर्वतक चौंक कर बोले, 'अरे! उन्हें वहाँ क्या खड़ा कर रखा है यहाँ बुलाओ।' फिर कुछ सोच कर बोले, 'अच्छा मैं ही चलता हूँ।'

और बाहर उस स्फटिक सरोवर के किनारे जाकर एक वृक्ष के सहारे खड़े नगरसेठ बने चन्द्रगुप्त मौर्य को पुकार कर कहा 'चन्द्रगुप्त!'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने चौंक कर पीछे देखा। महाराज पर्वतक के पीछे मलयकेतु और छाया खड़े थे।

'भागने का प्रयास मत करना चन्द्रगुप्त!' महाराज पर्वतक ने मुस्कराते हुए कहा।

'आप जानते हैं मौर्य लोग भागना नहीं जानते।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने बढ़ कर कहा 'आप यह भी जानते हैं कि मैं यहाँ क्यों आया हूँ?'

महाराज पर्वतक ने छाया की ओर देख कर मुस्कराते हुए कहा, 'मैं जानता हूँ।'

छाया ने लज्जा से सिर झुका लिया।

महाराज पर्वतक शीघ्रता से आगे बढ़ कर चन्द्रगुप्त को छाती से लगाते हुए बोले, 'मेरे मित्र! मेरे आत्मीय! मैं तुम्हें बधाई देता हूँ, यूनानियों को इस देश से खदेड़ने के लिए और एक प्रबल साम्राज्य बनाने के लिए।'

'मैं धन्यवाद करता हूँ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने आहिस्ता से कहा।

महाराज पर्वतक ने उनके दोनों कन्धों पर हाथ रखते हुए कहा, 'अब हम दोनों मिल कर मगध पर आक्रमण करेंगे। यह विशाल भारत आधा तुम्हारा होगा और आधा मेरा।'

और फिर वे चन्द्रगुप्त मौर्य को छाया और मलयकेतु के पास ले गए।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने महाराज पर्वतक की बात का कोई उत्तर नहीं

दिया, पलट कर कहा, 'विष्णु !'

वृक्ष के पीछे भेस बदल कर छिपे हुए चाणक्य सेवक विष्णु के रूप में आगे बढ़े। हाथ जोड़ कर बोले, 'हाँ, महाराज !'

महाराज पर्वतक ने चौंक कर कहा, विष्णु ! कौन विष्णु ?'

चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'मेरा एक सेवक !'

महाराज पर्वतक ने लम्बा सास लेते हुए कहा, 'चन्द्रगुप्त ! मैं समझा था विष्णुगुप्त चाणक्य। उस उद्दण्ड ब्राह्मण को महामात्य पद से हटा कर और उसका अपमान करके तुमने मुझ जो सुख पहुचाया, उसका मैं वर्णन नही कर सकता। अपने गुप्तचरो से यह बात सुनते ही मैंने निर्णय किया कि चन्द्रगुप्त मौर्य मेरा परम मित्र बनेगा।'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने जैसे सहज स्वभाव से कहा, 'ओह ! वह बात, विष्णु !'

सेवक विष्णु ने और भी निकट आकर कहा, 'मैं बधाई देता हूँ, महाराज ! इस नई मैत्री के लिए, आत्मीयता के लिए। पर्वतेश्वर और मौर्य दोनो मिलकर, भारत तो क्या विश्व को विजय कर सकते हैं। आधे-आधे भारत की बात मैंने सुनी है। इससे सुन्दर प्रबन्ध और क्या हो सकता है ?

महाराज पर्वतक सेवक विष्णु की ओर देख कर बोले, 'तुम्हारा सेवक तो बहुत समझदार है, चन्द्रगुप्त !' और फिर विष्णु को सम्बोधित करते हुए बोले 'लेकिन सेवक को स्वामी के इतना निकट आकर खड़ा नही होना चाहिए, विष्णु !'

सेवक विष्णु ने थोड़े पीछे हट कर हाथ जोड़ते हुए कहा, 'गलती हुई पर्वतेश्वर ! क्षमा कीजिए इस सेवक को। मैं अपने स्वामी को बधाई देने का लोभ नही रोक सका। स्वामी ! अब तो आप रात भर प्रासाद मे ही ठहरेंगे। घोड़े अश्वालय मे ले जाऊँ ?'

चन्द्रगुप्त मौर्य धीरे से बोले, 'हा इसीलिए बुलाया था मैंने। हम चलेंगे वापस।

केवल एक रात के लिए ही पर्वतेश्वर का आतिथ्य ग्रहण करेंगे।'

महाराज पर्वतक ने कहा, कुछ दिन ठहर कर मुझे आवभगत का अव

तो प्रदान कीजिए।'

छाया ने चन्द्रगुप्त मौर्य की ओर देखा कि क्या उत्तर देते हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपने सेवक विष्णु की ओर देखा। उसने दूर जाते हुए कहा, 'महाराज! कल तक मेरे योग्य कोई सेवा हो तो मुझे वहीं से बुलवा लीजिए।'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने मानो कुछ सोचते हुए कहा, 'हां हां, विष्णु! बुलवाने भेजूंगा।' और फिर महाराज पर्वतक की ओर देख कर बोले, 'कल तक ही ठहरना होगा, पर्वतेश्वर! मगध का राज्य विशाल है। उस पर विजय पाने के लिए काफी तैयारी करनी होगी। मैं भी करूंगा और आप भी कीजिए।'

महाराज पर्वतक हंसते हुए बोले 'जैसी तुम्हारी इच्छा!' फिर छाया को सम्बोधित करते हुए बोले, 'दिन ढल रहा है छाया! इन्हें भोजन तो कराओ! मलय, चलो अन्तःपुर में चलते हैं।'

चन्द्रगुप्त मौर्य और छाया खड़े रह गए। महाराज पर्वतक युवराज मलयकेतु को लेकर चले गए।

उनके जाने के बाद चन्द्रगुप्त मौर्य ने छाया के अति निकट आकर पूछा 'छाया! अब तो तुम प्रसन्न हुई! अब तो कोई दुःख नहीं रहा।'

'दुःख!' छाया ने चन्द्रगुप्त मौर्य के वक्षस्थल से लगते हुए कहा 'दुःख तो नहीं रहा, मेरे राजा! पर एक भय...।'

'अब कैसा भय रह गया है, प्रिये?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'ऐसा प्रतीत होता है मौर्यकुमार!' छाया ने खिन्न मन से कहा, 'मेरा इष्ट नहीं होगा।'

'तुम्हारा इष्ट नहीं होगा।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने आश्चर्यचकित स्वर में कहा, 'तुम्हारा अनिष्ट कौन करेगा?'

'आपका यह सेवक विष्णु!' छाया ने चन्द्रगुप्त मौर्य की आंखों में झांकते हुए कहा, 'पता नहीं क्यों मुझे उसकी आंखों से भय सा लगा। वह घूर घूर कर मुझे देख रहा था और मुझ में दुःख समाता जा रहा था।'

सुन कर चन्द्रगुप्त मौर्य हंस गए।

सच सच बताइए मौर्यकुमार !' छाया ने हठ करते हुए पूछा 'यह व्यक्ति कौन है ?'

चन्द्रगुप्त मौर्य छाया का प्रश्न सुनकर असमंजस में पड़ गए। घबराहट को देखते हुए बोले, 'पागल न बनो, छाया !'

'मैं पागल नहीं हूँ, मौर्यकुमार !' छाया ने हठ नहीं छोड़ा बोलिए कौन है वह व्यक्ति ? मेरी सौगन्ध ? आपने आज तक मुझ से कोई बात नहीं छिपाई। आज तक असत्य भाषण नहीं किया। फिर आज ही ऐसा क्या ? कहते कहते छाया की आँखों में अश्रु छलछला आए।

छाया की व्यथा को देखकर चन्द्रगुप्त मौर्य का हृदय क्रन्दन कर उठा। उन्होंने छाया के अश्रुओं को पोंछते हुए कहा छाया तुम्हारे से कुछ छिपाऊँगा नहीं भले ही मेरा सर्वनाश हो जाए ! मैंने कभी तुम्हारे से असत्य भाषण नहीं किया, फिर आज शंका का पात्र क्यों बनाया मुझे ?'

छाया गुमसुम बनी खड़ी रही।

तुम अपने मौर्यकुमार पर विश्वास रखो छाया !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने गम्भीर होकर कहा, 'आज तुमने मुझे धर्म संकट में डाल दिया है, राजपुत्री ! एक ओर मेरे गुरु की आज्ञा है और दूसरी ओर तुम्हारा स्निग्ध स्नेह ! आज मैं उनकी आज्ञा को भी ताक में रख कर सत्य भाषण कर रहा हूँ। जिस व्यक्ति ने तुम्हारे चेहरे को पढ़ने का प्रयास किया है, वह और कोई नहीं, मेरे गुरुदेव हैं आचार्य चाणक्य !'

'आचार्य चाणक्य !' छाया न चौंक कर एक पग पीछे रखते हुए कहा 'तो वही अब भी आपके महामात्य हैं।'

'वे मेरे गुरु हैं छाया !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने बहुत धीरे से कहा, देश के सच्चे हितैषी वही हैं। यूनानियों को खदेड़ने में भी वे ही परोक्ष में थे। सही अर्थों में वे देश के सच्चे रक्षक हैं। उनसे निश्चय ही हमारा कोई अनिष्ट नहीं हो सकता है। उनसे अधिक मौर्यकुमार का इष्ट चाहने वाला तो शायद और कोई नहीं।'

'मेरे आराध्य देव !' छाया ने तनिक दुःखित मन से कहा।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने उसे भुजाओं में कस लिया। बोले 'आह ! भूल गया तुम हो। अब तो प्रसन्न हो जाओ, छाया ! कोई भय नहीं रहा। हृदय

के कपाट खोल कर हँसो।'

छाया न मनमोहक दृष्टि स चन्द्रगुप्त मौय को निहारा और फिर जसे ही भुजाओ का बधन शिथिल पडा, वह निकल कर भाग खडी हुई। दूर जाकर अटटहास करती हुई मन्त्र मुग्ध दृष्टि स मौय कुमार की ओर देखती रह गई।

चौंतीस

चन्द्रगुप्त मौय रथ मे बैठे हुए थ। सेवक विष्णु का भेस धारण किए हुए आचाय चाणक्य रथ पर सारथि का काय कर रहे थ। रथ क आगे पीछे दायें बायें कितने ही सैनिक घोडो पर चल रहे थे। रथ द्रुत गति से महाराज पवतक की सीमा पार कर गया। तब उन्होंने सैनिको स कहा 'अब आप लौट जाएँ। मेरी ओर से महाराज को धन्यवाद कहियगा।

इच्छा न होते हुए भी सनिको को चन्द्रगुप्त मौय का आदश मान कर राजधानी लौटना पडा। उनक लौटने पर रथ आगे बढा। अब वह हरिपुर और तक्षशिला को पार करके पवन वेग की भाँति उडा जा रहा था।

चन्द्रगुप्त मौय ने थोडा आगे होकर कहा, 'गुरुदेव!'

'हाँ, वत्स। आचाय चाणक्य न कहा।

'यह सेवकाई का खेल कब तक चलेगा?' चन्द्रगुप्त मौय बाले। 'मुझे तो दख देख कर दुख होने लगा है।

दुख की कोई बात नहीं वत्स!' आचाय चाणक्य ने कहा, 'राजाओ नाटककारो और नतकियो को बारम्बार नया रूप धारण करना पडता है। बार बार उन्हें विभिन्न खेल खेलन पडत हैं और सेवकाई का यह खेल उस समय तक चलेगा तब तक तुम्हारी छाया किसी को यह भेद

ख्याल न दे कि सेवक विष्णु ही मौर्य साम्राज्य का महामात्य चाणक्य है।'

चन्द्रगुप्त मौर्य आश्चर्य से पीले पड गए। उनका मुख खुला था, चौंक कर बोले, 'गुरुदेव !'

इसके अतिरिक्त उनके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला।

'वृषल ! तुम समझते हो कि पर्वतेश्वर के मध्य उद्यान में तुम और छाया अकेले थे। ऐसी बात नहीं। वहां पर हमारे पचास चुने हुए सैनिक और दस गुप्तचर छिपे हुए थे। यदि पर्वतेश्वर तुम्हारी ओर मैत्री का हाथ बढाने की बजाय तुम पर आक्रमण कर देता, तो हमारे ये सैनिक उसकी बोटी बोटी उडा देते। इन्ही छिपे हुए गुप्तचरों ने मुझे बताया कि तुम्हारी छाया के साथ क्या-क्या बातें हुई हैं ?'

दौडते हुए रथ में चन्द्रगुप्त मौर्य ने अपना मस्तक गुरुदेव के चरणों में रख दिया और एक बार फिर वे 'गुरुदेव' के अतिरिक्त कुछ न कह सके।

महामात्य चाणक्य ने एक हाथ से चन्द्रगुप्त मौर्य को उठाते हुए कहा 'चिन्ता की कोई बात नहीं। किन्तु आगे से स्मरण रखो कि स्त्री का भेद की बात बताना सबसे बडी मूर्खता है।

'गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा 'छाया ऐसी लडकी नहीं है।'

महामात्य चाणक्य घोडों को चाबुक लगाते हुए बोले, 'जानता हूँ, वृषल ! वह तुम्हारे से इतना प्यार करती है कि अपने प्राण भी दे सकती है। यदि ऐसा न होता तो मेरे गुप्तचर उसे उठाकर तुम्हारे प्रासाद में पहुँचा देते। किन्तु वह ऐसी लडकी नहीं है देवी है।'

'गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने प्रसन्न मुद्रा में कहा।

'चिरजीव रहो वत्स !' महामात्य चाणक्य आगे देखते हुए बोले, 'मुझे ज्वर हो रहा है मैं अब तुम्हारा रथ न चला सकूंगा। अगले पडाव पर मुझे छोडकर, किसी और रथवान को लेकर तुम शीघ्रता से राजधानी में पहुँचना।'

गुरुदेव की अस्वस्थता की बात सुन कर चन्द्रगुप्त मौर्य उतावले हो उठे। व्यथित स्वर में बोले, 'गुरुदेव ! आपने क्या वृषल को पाषाण

समझ रखा है ? आप अस्वस्थ हों, ताप परेशान किए हुए हो और वृषल आप को छोड़कर आगे बढ़ जाए। छोड़िए रथ को मैं चलाऊँगा इसे। मुझसे यह खेल अब सहन नहीं होता।'

महामात्य चाणक्य अधरों पर मुसकान लाकर बोले, 'अभी नहीं, अभी मैं रथ को चला सकता हूँ वृषल ! फिर यह ज्वर तो मैंने स्वयं ही पैदा किया है। एक जड़ी-बूटी खा ली थी। उसी से ज्वर हुआ है। यदि तुम मुझे छोड़कर आगे बढ़ोगे तो उसके दो घड़ी बाद यह ज्वर भी उतर जाएगा। मैं अस्वस्थ नहीं हूँ। तुम चिन्ता मत करो।'

'धन्य गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य के मुख से निकला 'हर बात में खेल, हर बात में नीति।'

'हाँ मौर्य सम्राट !' महामात्य चाणक्य ने कहा 'हर बात में नीति ! नीति न हो तो यह ब्रह्माण्ड ही नष्ट हो जाए। अगले पड़ाव पर मुझे छोड़ कर तुम्हें आगे बढ़ना होगा। राजधानी में पहुँच कर सेना को तैयार करना। मालवी वीर प्रसेनजित कुलूत से वापस आ गया है सेना की बागडोर उसके हाथ में दे देना। मैं बाकी प्रदेशों में जाकर राज्य को सुव्यवस्थित रखने और मगध की ओर सेना भेजने का प्रबंध करूँगा। और एक बात और ।'

'वह क्या गुरुदेव ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'महर्षि कात्यायन विश्राम हेतु कश्मीर चले गए हैं।' महामात्य चाणक्य ने कहा 'मगध की सुरक्षा का भार महासेनापति भद्रसाल ने सम्भाला है किन्तु वह भी धनन द के कुटिल व्यवहारों से पीड़ित जनता को अपनी ओर मिलाने में असमर्थ रहा। इस समय मगध अराजकता का गढ़ बन चुका है। आक्रमण के लिए इस से उत्तम अवसर हाथ नहीं आने वाला है। फिर भी इस बात का ध्यान रखना कि हमारी सेना का सबसे अच्छा भाग मगध की ओर लड़ने नहीं आएगा।

फिर हम विजयी कैसे होंगे गुरुदेव ! चन्द्रगुप्त मौर्य ने प्रश्न किया।

'चाणक्य की कूटनीति से वृषल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, पर्वतेश्वर की सेना के सहारे। हमारी अपनी सेना भारतीय सीमा की

रक्षा करेंगी। यूनानियो का भय अभी दूर नही हुआ है। अब यह रास पकड लो। मेरे हाथ शिथिल हो रहे हैं। पर्वतेश्वर की सेना होगी मगध मे और हमारी सेना होगी उसके राज्य की सीमा पर। पर्वतेश्वर अपने राज्य मे वापस नही आ सकेगा। यही प्रतिशोध होगा तुम्हारे गुरु चाणक्य का।'

'महाराज पर्वतक!' चन्द्रगुप्त मौर्य चिल्लाकर बोले।

महामात्य चाणक्य ने सुना भर, पर बोले नही। वे पीछे हट कर रथ मे एक ओर लेट गए और क्षीणतम स्वर मे बोले, 'मुझे अगले पड़ाव पर उतार कर आगे बढ जाना। अब मैं पाटलिपुत्र के बाहर मिलूगा। मगध की राजधानी पाटलिपुत्र याद रखना वृषल!'

पैंतीस

धननद का साम्राज्य मगध। उसकी राजधानी पाटलिपुत्र शोण और गगा के सगम पर। एक ओर शोण नदी का अथाह जल प्रवाहित है और दूसरी ओर पवित्र गगा। तीसरी ओर दोनो का सगम हो गया है। सगम पर सुदर और विस्तृत घाट बने हुए है। चौथी ओर विशाल खाई है, जिसम गगा से लाया गया पवित्र गगाजल लहरें मारता है। पाटलिपुत्र के चहुँ ओर पहले लकडी और फिर पत्थर की ऊँची प्राचीर है। इस प्राचीर म चौसठ द्वार हैं और द्वारो के साथ-साथ 570 बुर्ज हैं, जिनम तेज बाणो की वर्षा करने वाले सैनिक हर समय बाहर से आने वाले लोगो पर दृष्टि रखते हैं। नगर के भीतर सुदर और सुव्यवस्थित राज पथ हैं तथा सजी हुई दुकानें हैं। इन राजपथो पर रथ चलते हैं। अश्वो पर चढ कर मागधी लोग बाजारो म आवश्यकतानुसार वस्तुएँ क्रय करने के लिए आते हैं। ऊँची ऊँची अट्टालिकाएँ आकाश को चूमती हैं। गगा के तट पर महाराजाधिराज धननद का भव्य प्रासाद है। प्रासाद के मुख्य द्वार पर

खड़ी एक हब्शिन सेविका ने नंगी तलवार ऊँची करके कहा, 'सावधान! महाराजाधिराज मगधेश्वर श्री महानंद की सवारी आती है।'

इसके कुछ क्षण बाद ही पहले सैनिक निकले। उनके पीछे हाथों में नंगी तलवारें लिए सुंदर गौरांगना सेविकाएँ और फिर महाराज नंद का स्वर्णमंडित विशाल रथ जिसमें महाराजाधिराज नंद आराम से लेटे हुए थे। अर्द्धनग्न सुंदरियाँ उन पर चंवर डुला रही थीं। उस रथ के पीछे नौ श्वेत अश्वों पर उनके पुत्र थे।

महानंद के रथ पर खड़ी एक विशालकाय हब्शिन सेविका ने चिल्ला कर कहा, 'महाराजाधिराज महानन्द की जय! मगधपति की जय!!'

राजपथ के दोनों ओर खड़ी थी भीड़ ब्राह्मणों, साधुओं, भिक्षुकों, सरदारों और नगरवासियों की। सभी एक स्वर में चिल्ला उठे, 'महाराजाधिराज महानंद की जय!'

महाराज महानंद एक क्षीण मुसकान के साथ अपने दायें बायें देखने लगे।

महाराज महानंद के नौ बेटों के आगे आगे चलती हुई क्रीत सेविकाओं ने कहा, 'नवनंदों की जय!'

और श्वेत अश्वों पर चढ़े हुए नवनंद स्मितपूर्ण मुद्रा से राजपथ के दोनों ओर खड़ी भीड़ का अभिवादन स्वीकारने लग गए।

तभी एक भिक्षुक पंक्ति में से निकल कर महाराजाधिराज महानंद के रथ के सामने आकर खड़ा हो गया। एक हाथ से उसने षोडशी को पकड़ रखा था। उसका यौवन कमल के समान खिल रहा था। उसके सुंदर लम्बे केश धरा को चूम रहे थे। उन्होंने उसके सौंदर्य को द्विगुणित कर दिया था। उसकी भयभीत सुंदर आँखें डरी हुई हिरनी के समान चहुँ ओर देख रही थीं। उस भिक्षुक ने अपना दूसरा हाथ उठा कर कहा, 'दुहाई! अन्नदाता दुहाई!!'

महाराजाधिराज महानंद लेटे ही लेटे बोले, 'कौन है तू? क्या चाहता है?'

भिक्षुक ने राजपथ की धूलि को मस्तक पर लगाते हुए कहा, 'अन्नदाता! मैं दारुक भिक्षुक हूँ। यह मेरी कन्या है सुनन्दा! हम दोनों आपकी

छत्रछाया मे गा गा कर भिक्षा माँगते हैं। पर आपका एक सैनिक मुझसे बुढापे का सहारा छीन लेना चाहता है। इसके बिना तो मैं जीता ही मर जाऊँगा, न्यायमूर्ति।'

महाराजाधिराज महानद ने सुनेत्रा की ओर देखा। और एक कुटिल मुसकान अधरो पर लाते हुए कहा, तेरी बेटी सुदर है। इसे देख कर हमारे सनिक की राल टपक पडे, तो इसमे आश्चय क्या है ?

अन्नदाता! सारा देश घूम कर आपकी शरण मे आया हूँ, अन्न दाता!' दारुक ने कहा, 'मुझे अभयदान दीजिए।'

महाराजाधिराज महानद ने गव से कहा, 'जाओ भिक्षुक! हमने अभयदान दिया। आज से तुम्ह अथवा तुम्हारी इस सुदर बेटी को कोई कुछ नही कहेगा!'

'महाराजाधिराज महानद की जय हो!' दारुक भिक्षुक धरा तक झुक कर चिल्ला उठा।

स्वणमडित रथ के आगे चलती हुई सेविकाओ ने उस भिक्षुक को एक ओर हटा दिया। रथ आगे बढा। उसके साथ ही सारा जुलूस और भीड भी। राजपथ पर भिक्षुक दारुक और षोडशी सुनत्रा रह गए थ।

'अब तो छोड, बूढे!' सुनेत्रा ने बलपूवक स्वय को छुडाते हुए कहा, 'मैं कहा भागी नही जाती।'

'भाग जाने मे कोई कसर छोडी है, कलकिनी!' दारुक न दाँत पीसते हुए कहा, पर याद रख, अब अगर उस सैनिक बघु स तू मिली अथवा वह तुझे मिला, तो मैं महाराज महानद स कह कर तुम दोनो को फासी पर चढवा दूगा। महाराज महानद ने मुझे अभयदान दिया है।'

बडा आया मुझे धमकी देने वाला!' सुनत्रा न होठ भीचत हुए कहा, 'महाराज को अभी कुछ भी मालूम नही है। कभी वक्त आया तो मैं कहूँगी, मुझे किसी सनिक स कोई भय नही है। भय है, तो इस बाबा से। यह शराब पीता है। चोरी करता है। मैं रोकती हूँ, तो बहुत पीटता है। फिर मैं कहूँगी कि इस दुनिया मे बधु ही मेरे एकमात्र रक्षक हैं। उनसे बढ कर मेरा आत्मीय कोई नही। मैं उनस प्यार करती हूँ और विवाह के सूत्र में बँधना चाहती हूँ।'

दारुक ने लपक कर उसके सुन्दर केश खींच लिए। बोला, 'चल कल-मुंही ! मैं उतारूंगा तेरे इश्क का भूत ! अब कुछ थोड़ा माग खा ले। वरना हड्डियां नहीं चढ़ेंगी और रात को पेट में चूहे कूदेंगे।'

इसके बाद दारुक उसे घसीटता हुआ ले गया चौराहे की ओर। उस पर छोटा सा सुन्दर फव्वारा बना था और उसके चारों ओर मखमली घास उगी हुई थी। उस मखमली घास पर सुनन्दा नृत्य करने लग गई।

उस सुन्दरी के नृत्य को देखने के लिए भीड़ लग गई।

'यार ! क्या हुस्न पाया है इस छोकरी ने ?' एक दिल फेंक बोला।

'मानो भगवान ने सांचे में ढाला है।' दूसरे ने कहा।

'कमबख्त की पैनी नजर घायल कर गई।' तीसरे की आवाज निकली, महाराज की निगाह से कैसे बच गई जालिम ?'

'अरे, अभी कली है ! फूल बन लेने दे।' पहला बोला, 'फिर महा-राजा ।'

'अबे चुप कर, किसी ने सुन लिया तो महाराज सूली पर लटका देंगे।' दूसरे ने कहा।

'अबे कुछ सुना तूने। कोई कह उठा 'चन्द्रगुप्त अपनी सेना लेकर पाटलिपुत्र की ओर बढ़ा आ रहा है। कौन जाने, कब क्या हो जाए ? इस नाच वाच का चक्कर छोड़, धन्धे को देख।'

'आखिर ठहरा न बनिया। जिन्दगी के हर पल में पैसा ही पैसा !' दूसरे ने कहा।

कोई पूछ बैठा पाटलिपुत्र पर कौन हमला कर रहा है ? यह चन्द्र-गुप्त कौन है ?

'अरे, तुम चन्द्रगुप्त को नहीं जानते !' उस व्यक्ति ने अपनी मूछों पर ताव देते हुए कहा।

नहीं सेठ !' पास में खड़ा कुम्हार बोला।

'मुरा दासी का बेटा, चन्द्रगुप्त !' सेठ ने कहा

'तब पाटलिपुत्र का क्या होगा ? उस कुम्हार ने पूछा।

कौन जाने ? कह कर वह सेठ बढ़ गया।

तभी भीड़ में खड़े सैनिक ने कमल के फूलों का सुन्दर सा हार सुनेत्रा

पर फेंक दिया।

सुनेत्रा ने मुसकरा कर उस सैनिक की ओर देखा। हाथ जोड दिए। उस सैनिक ने दोनो अधरो पर उँगलियाँ रख कर उन्हे चूम लिया।

सुनेत्रा और उस सैनिक को सबसे पहले देखा उस दारुक ने। चिल्ला उठा वह, 'वधु! बदमाश!! फिर तू आ गया यहाँ। ठहर कमीने! इस बार मैं तुझे महाराज के पास ही लेकर चलूगा।'

इतना कह कर दारुक उस सैनिक को पकडने के लिए दौडा। भीड मे खलबली मच गई। वधु थोडा थोडा पीछे हटता था। और बूढा दारुक उसे पकडने के लिए पीछा करते करते हाँप गया। लुहार की धौंकनी की तरह उसकी साँस चलने लगी। किन्तु वधु उस काफी देर तक परेशान करता रहा। कभी इधर, कभी उधर!

और सुनेत्रा नाचना छोड कर उनके आँख मिचौनी के खेल को देख कर लोट पोट होने लगी।

छत्तीस

पाटलिपुत्र के बाहरी क्षेत्र मे गगा के तट पर एक विशाल शिवालय जीर्ण अवस्था म। उसी मे ठहरे हुए हैं आचार्य चाणक्य। सध्या का समय है। पक्षीगण लौट रहे हैं अपने-अपने घासलो मे।

शात वातावरण मे आचार्य चाणक्य बैठे हुए दीपक के प्रकाश मे भोजपत्रों पर कुछ लिख रहे हैं।

इसी समय बाहर किसी न उच्च स्वर मे कहा, 'देखो, पालक! चाँद निकल आया अधकार दूर हुआ। फिर भी लोग नवग्रहो की पूजा करते हैं।'

आचार्य चाणक्य इन शब्दो को सुनकर चौंक उठे। फिर स्वय ही बोले, 'चाँद निकल आया, नवग्रहो की पूजा होती है ऐसा विदित होता है कि

कोई चन्द्रगुप्त और नवनदा की बात कर रहा है।' फिर पुकार उठे, 'कौन ? कौन है बाहर ? भीतर आओ !'

एक व्यक्ति न भीतर प्रवेश करते हुए कहा जय हो, महामात्य ! मैं क्षपणक हूँ।'

महामात्य चाणक्य कुछ सोचते हुए बोल, 'हाँ याद आया। मैंने तुम्हे एक पत्र देकर सम्राट चन्द्रगुप्त मौय के पास भेजा था।'

'उन्ही का समाचार लेकर उपस्थित हुआ हूँ महामात्य !'

क्षपणक न कहा 'आपका पत्र पढते ही मौय महाराज सब कुछ छोड छाड कर अपने अश्व पर चढे और आपके पास आन के लिए प्रस्थान कर गए। मैं उनस कुछ ही देर पहले यहाँ पहुँचा हूँ।'

महामात्य चाणक्य आश्चय स बोले, 'सम्राट चन्द्रगुप्त ! यहाँ।' फिर छत की ओर देखते हुए बोले 'ओह समझा ! अब तुम जा सकते हो क्षपणक !

'जैसी महामात्य की आज्ञा !' क्षपणक ने कहा और वह चला गया।

कुछ देर बाद चन्द्रगुप्त मौय अश्व को दौडाते हुए वहाँ पहुँच गए। अश्व से उतर कर शिवालय की ओर बढे। अश्व थका था। वह पछाड खा कर गिर पडा। उसकी ओर ध्यान दिए बिना ही बाहर बैठे पालक से कहा 'मैं गुरुदेव स मिलना चाहता हूँ, अभी !'

तभी महामात्य चाणक्य ने शिवालय से बाहर आकर कहा, 'सम्राट की जय हो ! अगरक्षको के बिना यहाँ आना ठीक नही।'

चन्द्रगुप्त मौय ने शीघ्रता से उनके चरणो का स्पश करते हुए कहा, गुरुदेव ! मैं एक अत्यन्त आवश्यक काय से यहा आया हूँ।'

'जानता हूँ वपल !' महामात्य चाणक्य बोले, पालक क्षपणक तुम यहाँ से दूर चले जाओ ताकि हम दोनो का वार्तालाप तुम्हे सुनाई न द।'

उन दोनो के दूर जाते ही चन्द्रगुप्त मौय बोले, ऐसा न कीजिए, गुरुदेव ! ऐसा करना तो अनथ होगा। महाराज नद मुझसे घृणा करते हैं। उनके तो पुन मेरे रक्त के प्यासे हैं। फिर भी वे मेरे आत्मीय हैं। मरे अपने हैं। मैं नही चाहता कि वे ।'

चन्द्रगुप्त मौय ! तुम राजा हो' महामात्य चाणक्य ने गम्भीर होकर

कहा 'तुम साधारण मनुष्य नही '

रा ा ! मनुष्य !'' चन्द्रगुप्त मौय न कहा मैं समझा नहीं गुरुदेव !'

चन्द्रगुप्त !' महामात्य चाणक्य ने और गम्भीर होकर कहा, 'राजा के लिए न कोई आत्मीय होता है और न कोई अपना। उसके लिए देश का हित और जन कल्याण ही सर्वोपरि है। तुम्हारा देश आज सगठन चाहता है स्वतन्त्रता चाहता है और सुराज्य चाहता है। क्या महानद इन सबकी राह मे बाधक नही है ? क्या उसके नद विलास की मूर्ति बने प्रजा का हित चाहने की अपेक्षा उसका सवनाश नही कर रहे हैं ?'

चन्द्रगुप्त मौय नतमस्तक हो गए।

चन्द्रगुप्त !' महामात्य चाणक्य का स्वर उभरा, महानद के नौ बेटे हैं। उनके लिए कम से कम नौ राज्य चाहिए। क्या तुम समझते हो कि देश को इतने भागो मे विभाजित करके हम यूनानियो के आने वाले आक्रमण को रोक सकते हैं ? एक ओर महानन्द दूसरी ओर पर्वतक और तीसरी ओर सम्राट चन्द्रगुप्त मौय तथा चौथी ओर महानद के नव नद—सब षड्यन्त्र करते है, सब एक दूसरे के साथ लडते हैं। ऐसी अवस्था मे क्या बाहर से आकर आक्रमण करने वाला कोई भी व्यक्ति असफल हो सकता है ?'

'गुरुदेव ! हम उन्हे युद्ध मे परास्त कर सकते है।' चन्द्रगुप्त मौय ने कहा।

निश्चय ही कर सकते हैं, चन्द्रगुप्त ! महामात्य चाणक्य ने कहा, 'उस युद्ध मे कितने व्यक्ति मरेंगे ? कितनी स्त्रिया विधवा होंगी ? कितने बच्चे अनाथ होंगे ? तुम्हारे देश की स्त्रियाँ तुम्हारे देश के बच्चे ! और फिर शत्रु को लड कर ही परास्त करना चाहिए, यह बात तुम्हारे से किसने कही ? जो शत्रु है, उसका किसी भी प्रकार विनाश कर देना ही नीति है। छल से या बल से ! सत्य से या झूठ से—ऐसा झूठ पाप नहीं वत्स ! ऐसा छल अन्याय नही है। इसे कोई अधम नही कहेगा।

पर वे मेरे अपने हैं, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौय ने नतमस्तक होकर निवेदन किया।

जानता हूँ, वत्स !' महामात्य चाणक्य उतावले हो उठे, 'बार-बार

एक ही बात करने की आवश्यकता क्या है ? तुम चाहो तो तुम्हारे आत्मीय बच सकते हैं। तुम्हारे अपनो को जीवन दान मिल सकता है। उन्हें विलासिता के मद मे डुबकियाँ लगाने के लिए छोडा जा सकता है।'

यह सब हो सकता है, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य का चेहरा खिल उठा।

हाँ, वृषल !' महामात्य चाणक्य ने गगा के तट पर लगे सूखे तिनको के ढेर की ओर देखते हुए कहा, बस मुझे छुट्टी दो ! ब्राह्मण के लिए दो मुट्ठी अन्न का अभाव अब भी इस देश मे नही है। तुम्हारे दस आत्मीय बच जाएँगे, किन्तु करोडो भारतीयो की स्वतन्त्रता, उनका हित, उनका सुख सब कुछ स्वाहा हो जाएगा। यह देश यूनानियो का दास बनेगा। हमारा धर्म, हमारी पुरातन सभ्यता, हमारा वैभव सब विनिष्ट हो जाएगा !'

'गुरुदेव, क्षमा !' चन्द्रगुप्त ने उनके चरणो मे गिरते हुए कहा।

उठो वत्स !' महामात्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य को उठाते हुए कहा इसमे क्षमा की कोई बात नही। मेरी कुटिया जो शिवालय के प्रागण मे है उसमे एक दीपक जल रहा है उसे यहा ले आओ !'

चन्द्रगुप्त मौर्य शीघ्रता के साथ कुटी मे गए और दीपक को लेकर तत्काल बाहर आ गए।

'दीपक को घास के उस ढेर पर फेंक कर अविलम्ब वृक्ष के पीछे आ जाओ। महामात्य चाणक्य ने कहा, 'गगा के दूसरे तट पर खडा कोई व्यक्ति तुम्हे देख न ले।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने गुरुदेव के आदेशानुसार कार्य किया। देखते-ही देखते उस ढेर से आग की लपटें निकलने लगी। गगा नदी, तट और जगल मे प्रकाश फैल गया।

वृक्ष के पीछे चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा, क्या गुरुदेव ! आप किसी को सकेत दे रहे हैं ?

महामात्य चाणक्य ने जलती हुई आँखो से अग्नि के उस ढेर को देखा कहा, हाँ वृषल ! सामने पाटलिपुत्र मे महानन्द के राज प्रासाद मे मेरा शिष्य जीवसिद्ध रसोइया बन कर रहता है। इस आग को देखते ही वह महानन्द और उसके पुत्रो के भोजन मे एक तीव्र विष मिला देगा। बस,

फिर वे कल का सूरज नही देख सकेंगे ।'

'गुरुदव !' चन्द्रगुप्त मौर्य के मुख से क्षीण स्वर निकला और गिरने से लगे ।

महामात्य चाणक्य ने उन्हें सम्भाल कर वक्षस्थल से लगाते हुए कहा, 'वत्स ! तुम मनुष्य नही, राजा हो । आओ कुटिया मे चलें ।' और उन्होंने फिर जोर से पुकारा, 'पालक !

सैंतीस

महामात्य चाणक्य की कुटिया म जीवसिद्धि घुटने टेके हुए बैठा था । वे बाहरसे स्नानकरके आए । गीले अगोछे को एक ओर फेंकते हुए बोले, समाचार जीवसिद्धि समाचार !'

जीवसिद्धि न चौंक कर कातर वाणी मे कहा, गुरुदेव की जय हो ।' और फिर खडा होकर बोला 'महानद के बेटो का दाह सस्कार कर दिया गया है । प्रासाद मे कुहराम मचा है ।'

'और महानद का ! महामात्य चाणक्य अपने आसन पर बठते हुए बोने, क्या वह अब भी जीवित है ?'

हाँ, गुरदेव !' जीवसिद्धि ने सिर झुका कर कहा ।

'यह सब कैसे हुआ जीवसिद्धि ?' महामात्य चाणक्य ने आवश मे आकर पूछा ।

कल रात महानद ने भोजन ही ग्रहण नही किया । इसलिए वह ।' जीवसिद्धि बोला ।

'नराधम ! मेरे हाथो फिर बच गया ।' महामात्य चाणक्य दाँत पीस कर बोले, 'आगे कहो जीवसिद्धि !'

'गुरुदेव !' जीवसिद्धि ने कहा, 'राक्षस महामन्त्री ने कई सेवको से पूछताछ शुरू कर दी है । मैं बडी मुश्किल से निकल कर आया हू ।'

मैं युद्ध करना नहीं चाहता था, पर अब करना होगा।' महामात्य चाणक्य ने सोच कर कहा 'महानंद ऐसे चुप बैठने वाला नहीं है। वह अपने बेटों की हत्या का अवश्य बदला लेगा। जीवसिद्धि!'

'आज्ञा, गुरुदेव!' जीवसिद्धि ने कहा।

'हमारी सेना किस स्थिति में है?' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'गुरुदेव! हमारी सेना पाटलिपुत्र के उत्तरी द्वार पर आ पहुँची है। छावनी डाल दी गई है। आक्रमण के लिए महाराज चन्द्रगुप्त आपके आदेश की प्रतीक्षा में हैं।'

'आज रात को आक्रमण करना होगा।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'शत्रु को सम्भलने से पूर्व ही कुचल देना होगा। यह संदेशा चन्द्रगुप्त तक पहुंचा दो।'

'अभी जाता हूँ, गुरुदेव!' इतना कह कर जीवसिद्धि अश्व पर बैठ कर चला गया।

रात्रि के अंतिम पहर में चन्द्रगुप्त मौर्य ने पर्वतक, शकटार और विशाल गुप्त की सरक्षकता में विशाल सेना के साथ मगध पर धावा बोल दिया। महासेनापति भद्रशाल ने अपनी विशाल सेना के साथ डट कर युद्ध किया।

पन्द्रह दिन तक दोनों ओर की सेनाओं के बीच घमासान युद्ध होता रहा। इस बीच मगध नरेश की एक तिहाई सेना चन्द्रगुप्त मौर्य से जा मिली। इस पर भी महासेनापति भद्रशाल ने साहस नहीं छोड़ा। उसने अपने रणचातुर्य से विशाल गुप्त और भूतपूर्व महामात्य शकटार को मृत्यु की गोद में सुला दिया।

इन दोनों महान आत्माओं की मृत्यु के समाचार ने चन्द्रगुप्त मौर्य के हृदय को जबरदस्त ठेस पहुँचायी। उनके शिविर में खुशियाँ मनायी गईं और चन्द्रगुप्त मौर्य के शिविरों में मातम छा गया।

संध्या समय आर्य शकटार और विशाल गुप्त का विधिवत संस्कार कर दिया गया।

चन्द्रगुप्त मौर्य अपने शिविर में महामात्य चाणक्य को देखकर बच्चों के समान फूट फूट कर रोने लग गए।

वत्स !' महामात्य चाणक्य ने सांत्वना देते हुए कहा, 'ये अश्रु उन आत्माओं को जीवित नहीं कर सकते हैं, फिर इनका बहाना व्यर्थ है। उठ और लक्ष्य की ओर झुक ! ऐसा अवसर बार बार नहीं आया करता।'

महामात्य चाणक्य के शब्दों से चन्द्रगुप्त मौर्य को सम्बल मिला।

उन्होंने रात्रि के अंतिम पहर में धावा बोल दिया।

मगध नरेश की थकी हुई सेना इस आक्रमण का सामना न कर सकी। चन्द्रगुप्त मौर्य की सेना ने आगे बढ़ कर पाटलिपुत्र के दुर्ग को घेर लिया। मगर प्रयास करने पर भी दुर्ग के द्वार कई दिन तक न खुल सके। उधर जब मगध नरेश महानंद को विजय की आशा न रही, तो उसने चन्द्रगुप्त मौर्य के पास संधि का प्रस्ताव भेजा। उन्होंने उस प्रस्ताव पर महामात्य चाणक्य से विचार विमर्श किया।

यह निश्चय हुआ कि मगध नरेश महानंद अपनी महारानी और आवश्यकतानुसार निष्क और स्वर्णादि लेकर दुर्ग से चले जाएँ और पाटलिपुत्र के बाहर विश्राम भवन में शेष जीवन काटें।

चन्द्रगुप्त मौर्य की यह शर्त मान ली गई। इसके साथ पाटलिपुत्र प्रासाद के द्वार खुल गए।

चन्द्रगुप्त मौर्य की सेना ने मार्ग छोड़ दिया।

महाराज महानंद अपनी साम्राज्ञी और सेवकों के साथ वन की ओर चल गए।

मगध राज्य के बहुत से पदाधिकारी जिन्होंने चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रति आस्था प्रगट की, उन्हें वहीं पर रहने दिया गया। शेष को महामात्य चाणक्य की आज्ञा से बंदीगृह में डाल दिया गया।

पाटलिपुत्र में भगदड़ सी मच गई। प्रत्येक परिवार चिन्तित था। नंद के नौ पुत्रों की हत्या और महाराज के वनवास से सम्बन्धित चर्चा सर्वत्र हो रही थी। राजपथों पर स्थान स्थान पर लोग एकत्रित होने लग गए थे। वे चिल्ला रहे थे—महाराज चन्द्रगुप्त की जय।

चन्द्रगुप्त मौर्य और महाराज पर्वतक जीवसिद्धि और प्रसेनजित पर शांति स्थापित करने का भार सौंप कर छावनी में लौट गए थे। उनकी संरक्षकता में कुछ विश्वासपात्र सैनिक भी छोड़ दिए गए थे।

महामात्य चाणक्य अपनी पर्ण कुटिया मे बैठे हुए अपने गुप्तचरो की सहायता से पाटलिपुत्र की राजनैतिक स्थिति और कुटिल महानद के विश्वासपात्रो पर दृष्टि रखे हुए थे।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने पितृवियोग के कारण कुछ दिनो तक पाटलिपुत्र के प्रासाद मे प्रवेश न करके छावनी मे ही रहने का निश्चय किया था। इस निश्चय मे भी महामात्य चाणक्य का ही आदेश निहित था।

अड़तीस

महाराज पर्वतक के अनुरोध पर चन्द्रगुप्त मौर्य ने विजयोत्सव को मनाने की अनुमति दे दी। उसकी तैयारी होने लगी। उसके लिए किसी सुन्दर नर्तकी का भी आयोजन किया गया। छावनी के मध्य मे एक विशाल विलासागार बनवाया गया।

इस उत्सव से कुछ घटे पूर्व ही जीवसिद्धि चिन्तित मुद्रा मे महामात्य चाणक्य की कुटिया मे पहुचा। उसे देख कर महामात्य चाणक्य ने पूछा राजधानी की अराजकता की क्या स्थिति है?

गुरुदेव! वहाँ की अराजकता तो पूर्णतया समाप्त हो चुकी है।' जीवसिद्धि ने कहा।

क्या मगधवासी सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य को सच्चा स्नेह और सहयोग देने को तैयार है?' महामात्य चाणक्य ने जीवसिद्धि के चेहरे को पढ़ते हुए कहा।

'हाँ गुरुदेव!' जीवसिद्धि बोला, 'किन्तु महानन्द की धूर्तता पर अवश्य ध्यान रखना होगा।'

'क्या कुछ ऐसा आभास हुआ है? महामात्य चाणक्य ने चौंकते हुए पूछा।

'उसकी प्रवत्ति ही ऐसी है, गुरुदेव !' जीवसिद्धि बोला, 'वह किसी न किसी प्रपच से सम्राट च द्रगुप्त मौर्य का वध करके पुन अपना राज्य पाने की योजना मे सलग्न है।'

शायद इसके लिए वह पर्वतक की भी मदद ले।' महामात्य चाणक्य के मुख से निकल गया।

'आप तो अन्तर्यामी हैं गुरुदेव !' जीवसिद्धि बोल पडा, महामात्य राक्षस ने पर्वतक के साथ षडयन्त्र किया है। उसे लोभ दिया है कि मगध का राजा उस ही बनाया जाएगा। और और ।

कहते-कहते रुक गया जीवसिद्धि। और शब्द उसके मुख से नही निकल पा रहे थे।

महामात्य चाणक्य उठ कर खडे हो गए, बोले, 'और और क्या जीवसिद्धि ?'

'और और महामात्य राक्षस ने निर्णय लिया है कि सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का अत करने के लिए विजयोत्सव के बाद रात्रि मे एक सुन्दर कन्या भेजी जाएगी। वह सुन्दरी विषकन्या होगी। उसके स्पर्श ही से सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का अन्त हो जाएगा।

महामात्य चाणक्य की भृकुटि तन गई। वे तेजी से अपनी कुटिया मे इधर उधर चक्कर लगाने लगे। एकाएक वे खडे होकर बोले, 'जीवसिद्धि! विजयोत्सव की समाप्ति पर सम्राट को मेरे पास भेज देना और उस कन्या को तुम विलासागार मे भेज देना। इसके बाद महाराज पर्वतक को चुपके से जाकर कहना कि आपके मगध के परम मित्र राक्षस ने आपके लिए एक सुन्दरी भेजी है।

जीवसिद्धि ने चौक कर कहा, पर्वतक के लिए! धन्य गुरुदेव!'

और सुनो।' महामात्य चाणक्य ने कहा 'विषकन्या नागो के बिना नही रह सकती। तुम स्वय ही विलासागार मे एक सदूक भी रखवा देना और उसमे बहुत से विषैले नाग भी । अब तुम जाओ। विजयोत्सव मे थोडा ही समय शेष रह गया है।'

जीवसिद्धि कुटिया के बाहर जाता हुआ बोला 'ऐसा ही होगा गुरुदेव !'

उनतालीस

विजयोत्सव का समय हो गया।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य और महारानी दुधरा विशेष सिंहासन पर बैठे। उनके समीप ही बैठे महाराज पर्वतक, मलयकेतु और छाया आदि अनेक आतिथ्य नरेश।

अन्य सभासद अपने-अपने स्थान पर विराजमान हुए। सम्राट के अनुरोध पर आचार्य चाणक्य ने महामात्य का सिंहासन सुशोभित किया।

बहुत से उपहार और एक सुन्दर नर्तकी को लेकर एक ब्राह्मण उपस्थित हुआ। उसने नतमस्तक होकर कहा, 'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य की जय। यह तुच्छ भेंट स्वीकार करें।'

महामात्य चाणक्य के संकेत से पालक ने आगे बढ़ कर वे उपहार ले लिए।

वह ब्राह्मण चला गया।

तभी सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के संकेत पर वाद्य बज उठे।

उस सुन्दरी के पग थिरकने लगे।
उसकी स्वर लहरी झंकृत हो उठी।
सारे सभासद विमुग्ध हो उठे।

और स्वयं सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य उसके रूप लावण्य को देखते ही रह गए।

गीत उसके पतले और सुन्दर अधरों से मुखरित हो उठा—

तू किसे याद कर जलता है?
जलने में कह क्या मिलता है?
क्या याद किसी की आती है?
जो उर में आग लगाती है॥
मत व्याकुल हो, जो होना है।
सो तो होकर ही रहता है॥

सुन्दरी का स्वर गूंज उठा।

घुघरुओ की झकार और उसके मादक लावण्य ने सब को मोह लिया।

महारानी दुधरा स्वय उसके मोहक लावण्य और सुरीली आवाज को चित्रित सी देखती सुनती रही।

सहसा उस सुन्दरी के थिरकते हुए पग रुक गए।

घुघरुओ की झकार बद हो गई।

वाह वाह और तालियो की गडगडाहट से विशाल मण्डप गूज उठा।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौय ने उसके नृत्य पर मुग्ध होकर एक रत्न-जडित हार भेंट किया।

उस हार से विभूषित होने पर उसका सौंदय द्विगुणित हो उठा।

वह सुदरी अभिवादन के बाद अपने गतव्य स्थान की ओर चली गई।

मनोरजन का कायक्रम चलता रहा।

सध्या समय विजयोत्सव समाप्त हुआ।

महामात्य चाणक्य पालक के साथ अपनी कुटिया की ओर बढ गए। महारानी दुधरा अपनी सखियो के साथ कानन विहार के लिए चली गई।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौय विशेष अतिथियो के साथ सजीवनी गृह मे पहुँच गए। सजीवनी का दौर चलता रहा।

रात्रि के प्रथम पहर मे जीवसिद्धि न सम्राट चन्द्रगुप्त मौय का महामात्य चाणक्य का सदेश दिया। वे उसी ओर को चल दिए। महाराज पवतक विजयोल्लास म सुरा मे ही डूबे रहे। उसी म व सुदर स्वप्न देख रहे थे मगध नरेश होन का।

चालीस

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रस्थान के बाद जीवसिद्धि भी उसी ओर को निकल गया जिस ओर सुन्दर नर्तकी गई थी।

आकाश में तारे छिटक आए थे। पूरा चाँद अपना प्रकाश फैला रहा था। उसी प्रकाश में जीवसिद्धि ने सरोवर पर उस नर्तकी को कमल से खेलते हुए देखा।

उसके पास पहुँच कर जीवसिद्धि ने कहा, 'तुम यहाँ।'

सुन्दर नर्तकी ने उसे घूर कर देखा पर बोली कुछ नहीं।

'महाराज विलासागार में पहुँचने ही वाले हैं।' जीवसिद्धि धीरे से बोला 'महामात्य राक्षस।'

सुन्दर नर्तकी ने जीवसिद्धि को बड़े ध्यान से देखा, बोली, 'मुझे प्यास लगी है।'

'प्यास!' जीवसिद्धि ने दुहराया, 'तुम मेरे साथ आओ।'

सुन्दर नर्तकी जीवसिद्धि के साथ विलासागार की ओर चल दी। कुछ ही देर में वे दोनों विलासागार में पहुँच गए।

वहाँ पहुँच कर सुन्दर नर्तकी ने कहा 'मुझे प्यास लगी है प्यास।'

जीवसिद्धि ने उस सुन्दर नर्तकी को दूर से ही बताते हुए कहा, 'प्यास बुझाने का सामान यहाँ पर बहुत है। यह मदिरा और यह विष। और इस संदूक में तुम्हारे जन्म जन्म के साथी नाग।'

उस सुन्दर नर्तकी ने आश्चर्य से जीवसिद्धि की ओर देख कर कहा 'तुम कौन हो तुम?'

'मैं महामात्य राक्षस का व्यक्ति हूँ।' जीवसिद्धि ने धीरे से कहा 'वे जानते थे कि इनके बिना तुम्हें कष्ट होगा।'

'ओ, धन्य महामात्य!' उस नर्तकी ने प्रसन्न होकर कहा। और फिर एक स्वर्ण पात्र में उसने विष को उड़ेला और पी गई। इसके बाद उसने संदूक का ढक्कन उठा दिया। कितने ही काले नाग फुफकार उठे। उस सुन्दरी ने एक एक नाग को उठाकर अपने अधरों और वक्षस्थल से लगाया।

कुछ ही देर मे सारे नाग उसकी कटि से चिपके हुए थे । उनकी जिह्वाएँ उसकी गोरी देह की ओर लपलपा रही थी ।

यह देख कर जीवसिद्धि बाहर निकल गया और महाराज पवतक से बोला, 'महाराज ! महामात्य राक्षस ने आपके लिए एक सुन्दरी भेजी है ।'

महाराज पवतक सुरा की मादकता मे काफी अधिक डूब चुके थे । उन्होने लडखडाते स्वर मे कहा, 'कहाँ है वह सुन्दरी ?'

जीवसिद्धि ने फिर धीरे से कहा, 'विलासागार मे आपकी प्रतीक्षा कर रही है ।'

'अच्छा, तुम चलो ।' महाराज पवतक ने कहा, 'हम आते हैं ।'

जीवसिद्धि विलासागार की ओर बढ गया । वहाँ पर पहुच कर बोला, 'विष कन्या ! महाराज आ रहे हैं । इन नागो का खेल बन्द करो ।'

इतना सुनते ही उस विष कन्या ने नागों को अपनी देह से उतार कर सदूक मे बद कर दिया और उस स्वण पात्र म मदिरा उडेल कर पीने लग गई ।

जीवसिद्धि ने प्रकाश मद्धम कर दिया और विलासागार से निकल गया ।

तभी महाराज पवतक ने विलासागार मे प्रवेश किया । उस सुन्दरी को देखते ही बोले, 'सुन्दर अति सुन्दर ।'

वह सुन्दरी दौड कर महाराज पवतक के चरणो मे गिर पडी । एक अनोखी श्रद्धा के साथ उसी अद्धनग्नावस्था मे उसने महाराज पवतक को नमस्कार किया ।

महाराज पवतक ने उसे उठा कर छाती से लगा लिया और उसके कमल की पखुडियो के समान पतले अधरो का रसास्वादन करने लगे । दूसरे ही क्षण वे लडखडा कर कालीन पर गिरे और नीले पड़ गए ।

उसी समय महामात्य कुछ सनिको को लेकर शीघ्रता से विलासागार म घुसे और चिल्ला कर बोले, इस नागिन को बदी बना लो, यह विष कन्या है। इसने ही महाराज पवतक की हत्या की है ।

सनिको ने आगे बढ कर विष कन्या को बदी बना लिया ।

महामात्य चाणक्य ने कहा, महाराज पर्वतक के शव को फूलों से ढँक दो। कल प्रातः सैनिक सम्मान के साथ इनका दाह संस्कार किया जाएगा।'

आदेश का पालन हुआ। जीवसिद्धि ने बाहर से पुष्प मँगाकर महाराज पर्वतक की देह पर डाल दिए।

इसके बाद यह दुःखद समाचार महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के पास पहुँचाया। वे धननन्द के इस कृत्य से बड़े दुःखी हुए और उनकी बुद्धि को सुधारने का प्रयास करने लग गए।

इकतालीस

अगले दिन महाराज पर्वतक का दाह संस्कार कर दिया गया। महामात्य चाणक्य ने उनकी शोक सभा में कहा 'आज देश का शुभ-चिन्तक उठ गया। उनकी हत्या का जिसने भी षड्यन्त्र रचा है, उसे अवश्य दण्ड दिया जाएगा। अब प्रभु से यही प्रार्थना है कि वह इनकी आत्मा को शांति प्रदान करें।'

इसके बाद शोक सभा विसर्जित हुई।

जब सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य अकेले रह गए, तो महामात्य चाणक्य ने कहा देश को विभाजित करने वाला तो गया वत्स! अब राज प्रासाद में कब प्रवेश करना चाहते हो?'

'जब आपका आदेश हो गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'मेरे विचार से तो मंगलवार का मुहूर्त ठीक रहेगा। महामात्य चाणक्य ने कहा।

शुभ-अशुभ के विषय में तो आप ही विचार कर सकते हैं, गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया।

ठीक है, वत्स! तुम महारानी दुधरा के साथ राज प्रासाद में प्रवेश

की पूर्ण तैयारी करो। तब तक मैं उसकी पूर्ण रूप से सफाई करवाता हूँ।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'सफाई तो उसी दिन हो गई थी जब धननंद ने वहां से प्रस्थान किया था।'

'मैं वैसी सफाई में विश्वास नहीं करता, वत्स !' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'संदेह का कारण, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'वत्स ! धननंद के प्रपंच को भूल गए।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'जो विष कन्या पर्वतक का काल बनी, वह तुम्हारे लिए भेजी गई थी।'

'मेरे लिए !' आश्चर्यचकित स्वर में चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'हाँ, वत्स !' महामात्य चाणक्य ने कहा पर्वतक भी शत्रु के षड्यंत्र में सम्मिलित था। वह मगध का राजा बनने का स्वप्न देख रहा था। और यह तभी सम्भव था, जब तुम उसकी राह से हट जाते। पर विधाता का विधान तो कुछ और ही लिखा था। पर्वतक को मगध का राज्य तो नहीं मिला, पर मृत्यु ने अपनी गोद में अवश्य सुला लिया।'

'धन्य हो, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य के मुख से निकल गया।

'शत्रु को कभी भी निर्बल नहीं समझो, वत्स !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'फिर घायल नाग तो प्रतिशोध लेकर ही छोड़ता है।'

क्या धननंद मेरी हत्या की सोच सकते हैं ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने प्रश्न किया।

'उसमें रक्त ही ऐसा है, वत्स !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'उसका पिता भी ऐसा ही क्रूर और अविवेकी था। उसने मेरे निर्दोष पिता चणक का वध करने में तनिक भी संकोच नहीं किया था, तो फिर इसे कैसा संकोच ?'

इतना कहकर उन्होंने पुकारा, 'विश्वकर्मा !'

'आज्ञा आर्य !' विश्वकर्मा ने पास आकर कहा।

'विश्वकर्मा !' महामात्य चाणक्य बोले 'कल मंगलवार है। सम्राट चन्द्रगुप्त महारानी दुधरा के साथ राज प्रासाद में प्रवेश करेंगे। उनके शुभागमन से पूर्व ही राज प्रासाद की पुनः जाँच पड़ताल हो जानी चाहिए।'

'आपकी आज्ञा शिरोधार्य, आर्य !' विश्वकर्मा ने कहा, 'आप भी यदि प्रासाद का यथाविधि निरीक्षण कर लें, तो ठीक रहेगा।'

'अवश्य ! कहकर महामात्य चाणक्य राजधानी की ओर चले गए।

विश्वकर्मा के आदेश से सफाई और जांच पड़ताल का कार्य आरम्भ हो गया।

राज प्रासाद में सेवक इधर-उधर दौड़ने लगे।

महामात्य चाणक्य ने एक एक कक्ष देखा। पर उन्हें संदेह की कोई वस्तु दिखाई नहीं दी।

तब प्रत्येक कक्ष के कोने सूक्ष्मता से देखे जाने लगे।

महामात्य चाणक्य ने विशेष कर पुन उस कक्ष का निरीक्षण किया जो सम्राट और महारानी के शयन के लिए चुना गया था।

उसके प्रत्येक कोने को ध्यानपूर्वक देखा गया। तभी महामात्य चाणक्य की दृष्टि पड़ी, एक कोने में से चीटियों का समूह चावल के कणों को लेकर जा रहा है। 'यहाँ चीटियां कहां से ?' उनके मुख से निकला, 'विश्वकर्मा !'

विश्वकर्मा तत्काल उपस्थित हुआ।

'देखो विश्वकर्मा ! ये चीटियां इस बात को सूचित करती हैं कि अब भी इस राज प्रासाद में प्राणियों का आवास है।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

प्राणियों का आवास यहां राज प्रासाद में ! आश्चर्य के साथ विश्वकर्मा ने दुहराया।

'हाँ विश्वकर्मा !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'मेरा सन्देह सत्य है।' पुन खोज आरम्भ हुई।

उस शयन कक्ष के समीप ही एक विशाल तलघर का पता लगा। उसमें पन्द्रह सशस्त्र वीर जीवित अवस्था में पाए गए।

बन्दी किए जाएँ। महामात्य चाणक्य ने आदेश दिया।

वे बन्दी बना लिए गए।

तुम्हारा नेता !' महामात्य चाणक्य ने पूछा।

'अवन्त ! सैनिकों में से एक ने उत्तर दिया।

'राजच्युत घननद का विश्वासपात्र सेवक अवन्त।' महामात्य चाणक्य गुस्से से चिल्लाये, 'वह नीच अब भी अपनी आदत से बाज नहीं आता।' फिर आज्ञा दी, 'इन्हें बदीगृह में डाल दो।'

बयालीस

विहान वेला मे चन्द्रगुप्त मौय गगा के तट पर घूम रहे थे। तभी किसी ने पास आकर कहा आय पुत्र की जय हो।'

चन्द्रगुप्त मौय ने मुड कर देखा। योगिनी वष मे राजकुमारी सुनन्दा उनके पास खडी हैं। कुछ दूरी पर उनकी प्रिय सखी पुष्प चुन रही है।

'आप, इस समय!' चन्द्रगुप्त मौय के मुख से निकला, 'मुझसे यह रूप देखा नही जाता।'

'यह जन कल्याण का रूप है, आय!' सुनन्दा ने कहा, 'मैं आपको बधाई देने आई हूँ। आज आप उस राज प्रासाद मे प्रवेश करेंगे जो आपका एक सपना था।

'सपना!' चन्द्रगुप्त मौय न कहा, 'आपने ठीक कहा, देवी! इसके अतिरिक्त भी मेरा एक सपना है।'

वह कौन सा?' सुनन्दा ने आश्चयचकित स्वर म पूछा।

प्रणय बधन का! चन्द्रगुप्त मौय ने उत्तर दिया!

'वह तो राजकुमारी दुधरा ने पूण कर दिया आय!' सुनन्दा ने कहा।

'मेरा आशय आपसे है, देवी।' चन्द्रगुप्त मौय भावुक होकर बोले, 'आप इसे त्याग कर मेरा प्रणय बधन स्वीकार करें।'

'असम्भव है, आय!' सुनन्दा देवी न कहा 'अब इस प्रणय सूत्र को दुर्धरा जी के साथ ही ' फिर कुछ रुक कर बोली, 'लगता है आप उस सौंदय की प्रतिमा के स्नेह से भी सतुष्ट नही।'

'ऐसी प्रियतमा को पाकर भला कौन असंतुष्ट रह सकता है, देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया ।

'तो फिर ।' सुनन्दा ने प्रश्न किया 'फिर मेरे प्रति ऐसे विचार क्या ?'

विचार जानना चाहती हो तो सुनो देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने खिन्न मन से कहा मेरी मूर्खता से एक कलि असमय ही मुरझा गई ।

'उसे भूल जाओ आर्य !' सुनन्दा ने कहा, 'मुरझाई हुई वस्तु कभी भी सजीव नहीं हो सकती है । फिर आपने तो उस कलि को ऐसी राह दिखा दी है जिस पर चल कर वह जगत के साथ साथ अपने पारिवारिक पापों का भी प्रायश्चित्त कर सकती है ।'

मैं भी प्रायश्चित्त किए बिना उसे नहीं भुला सकता हूँ, देवी ! चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, और मेरा वह प्रायश्चित्त उसे प्रणय बंधन में बाँधकर ही हो सकता है ।

विवाहित हो आर्य ! सुनन्दा ने कहा, 'अब आपको ऐसे शब्द शोभा नहीं देते हैं ।'

'यह आपकी भूल है, देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने उत्तर दिया, 'क्षत्रिय सम्राट धर्म शास्त्रों के अनुसार एक से अधिक विवाह कर सकता है ।'

आर्य ! आपकी यह इच्छा भी पूर्ण हो चुकी है ।' सुनन्दा ने खिन्न मन से कहा आपको इस समय भी दो और सुन्दरियाँ प्रणयी के रूप में मिली हैं ।'

'यह सत्य है, पाषाणी !' चन्द्रगुप्त मौर्य का स्वर अनुनय से भीगा हुआ था, 'किन्तु मेरी अन्तिम इच्छा की पूर्ति करके मेरी उर की पीड़ा को शान्त करो ।

'आर्य !' चीख उठी सुनन्दा, 'सम्राट मैं मेरा मुख काला करने का प्रयास मत कीजिए ।'

'ठीक है, आज इस विषय को यहीं पर छोड़ता हूँ ।' चन्द्रगुप्त उदास मन से बोले 'फिर कभी आपको समझाने का प्रयास करूँगा ।

थोड़ी देर तक दोनों के बीच शांति रही ।

भास्कर देव पूर्वोदय से स्वर्ण रश्मियाँ फेंकने लग गए थे । गंगा का पवित्र जल स्वर्णमय हो गया था ।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने भास्कर देव को नमस्कार किया।

'अच्छा, आर्य !' कहकर सुनन्दा ने चलने का उपक्रम किया।

'देवी !' सुनन्दा को जाता देख चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, आपके पिता-श्री ने मेरे वध के लिए दो बार प्रयास किया है। इस पर तथा अपने अपमान स्वरूप महामात्य चाणक्य उनसे रुष्ट हैं।'

'आर्य ! इसका मुझे हार्दिक दुख है।' सुनन्दा ने उत्तर दिया।

'युद्ध में उनके द्वारा आर्य शकटार और मेरे पूज्य पिताजी का वध हुआ !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने फिर कहा 'इस पर भी मैं उनके प्राणों की रक्षा कर रहा हूँ। किन्तु वे अपनी दुष्ट प्रकृति यदि ऐसा ही रहा, तो मैं राजनीतिक दाँव-पेंचों से उनकी रक्षा नहीं कर सकूँगा, देवी !'

'आर्य ! मेरी अवस्था इस समय राजनीतिक विषयों में रुचि लेने की नहीं रही।' सुनन्दा ने विरक्त मन से कहा।

'मानता हूँ, देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, आप पिताश्री को एक बार समझाकर देख लीजिए।'

'अच्छा ! प्रयास करूँगी।' सुनन्दा ने कहा। 'फिर भी आप स्वयं ही निर्णय कर लेते, तो ठीक रहता।'

'देवी ! मगध नरेश मेरा शत्रु था। मैंने उसका निर्णय कर लिया किन्तु पूज्य घननन्द मेरे शत्रु नहीं हैं। इसलिए यह काम आप को सौंप रहा हूँ।

'ऐसा क्यों ?' सुनन्दा ने पूछा।

'देवी ! क्षत्रिय अपना निर्णय तलवारों की छाया में किया करते हैं।' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, कोरी बातों से नहीं।'

'आर्य ! मैं पिताश्री से मिलना नहीं चाहती थी।' सुनन्दा बोली, 'किन्तु आपके कारण मिलना पड़ेगा।'

'महती कृपा होगी।' चन्द्रगुप्त मौर्य प्रसन्न मुद्रा में बोले।

'अब प्रस्थान करती हूँ, आर्य !' सुनन्दा ने कहा, 'अवसर मिलने पर फिर दर्शन करूँगी।'

'मेरी पलकें सदैव आपकी राह में बिछी रहेंगी।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

दोनों पुलकित होकर अपनी-अपनी राह पर लगे।

तैंतालीस

'वत्स ! आज सवेरे ही ।' महामात्य चाणक्य ने गंगा स्नान कर कुटिया में बैठे जीवसिद्धि को देखकर कहा, 'क्या कोई विशेष समाचार है ?'

'विजय गुरुदेव ।' जीवसिद्धि महामात्य चाणक्य को अभिवादन करने के बाद हर्षित स्वर में बोला ।

'जीवसिद्धि !' महामात्य चाणक्य अपने आसन पर विराजमान होते हुए बोले, 'शोक और हर्ष दोनों में स्वयं को भूल जाना गलती है । यह गलती मनुष्य को कर्तव्य से विमुख करती है । बैठो, शांति से कहो, क्या समाचार है ?'

महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य पाटलिपुत्र में प्रविष्ट होकर राज प्रासाद में पहुँच गए हैं ।' जीवसिद्धि ने कहा, पाटलिपुत्र खुशी से पागल हो रहा है, किन्तु इस खुशी में एक दुःख की बात है ।'

'दुःख ।' महामात्य चाणक्य गम्भीरता के साथ बोले, दुःख की बात क्या ?'

गुरुदेव !' जीवसिद्धि ने कहा, 'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य जब पाटलिपुत्र के मुख्य द्वार में प्रविष्ट हुए, तो वे अपने लाल घोड़े पर थे । अपने सैनिकों के साथ, उनकी श्वेत हथिनी पर थे, कुलूत राज और पारस के मेघाव । महाराज उनके पीछे थे । जैसे ही श्वेत हथिनी दोनों नरेशों को लेकर मुख्य द्वार पर पहुँची वैसे ही एक विस्फोटक पदार्थ ऊपर से गिरा । हथिनी धराशायी हो गई । महाराज मेघाव और कुलूतराज की धज्जियाँ उड़ गईं ।'

महामात्य चाणक्य गम्भीर होकर बोले 'जीवसिद्धि, मैं जानता था, ऐसा कुछ होगा । इसीलिए मैंने वृषल से कहा था कि वे प्रवेश के समय अपनी श्वेत हथिनी पर न बैठें । कोई बंदी बनाया गया अथवा नहीं ।'

हाँ गुरुदेव ।' जीवसिद्धि ने कहा, 'चित्र वर्म्मा नामक एक व्यक्ति पकड़ा गया है । उसने स्वीकार किया है कि महाराज पर्वतक के निधन का

समाचार सुनते ही महामात्य राक्षस और अन्य अमात्य पाटलिपुत्र से पलायन कर गए हैं। पलायन करते समय महामात्य राक्षस ने ही चित्र वर्म्मा को हथिनी पर यह विस्फोटक पदार्थ फेंकने का आदेश दिया था।'

'बहुत खूब।' महामात्य चाणक्य के मुख से निकला, 'पर्वतक गया, कुलूतराज गया, मेघाप गया और नवनंद गए, अब मेरा वृषल वास्तविक अर्थों मे भारत सम्राट है। यह तो अच्छा हुआ। किन्तु मलयकेतु कहाँ है मलयकेतु ?

'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ।' जीवसिद्धि ने कहा, 'पर्वतक की राजदुलारी छाया भी उनके साथ है। महाराज ने उन्हे अपने पास ही एक प्रासाद दिया है।'

'ठीक। तुम्हें आज से छुट्टी है, जीवसिद्धि।' महामात्य चाणक्य बोले, 'तुम साधु बनो और मलयकेतु के पास जाकर रहो। उसके हृदय में तीव्र वैराग्य उत्पन्न करो। आज से कुछ ही दिनो के भीतर मलयकेतु को साधु बनकर वनो म चला जाना चाहिए। अपनी इस नीति की सफलता के लिए मैं सबसे अधिक तुम्ही पर विश्वास कर रहा हूँ वत्स।'

'आपकी नीति सफल होगी, गुरुदेव!' जीवसिद्धि ने सिर झुकाकर कहा।

'और सुनो, महामात्य चाणक्य बोले, 'बाहर पालक होगा। उसे मेरे पास भेजते जाओ।'

जीवसिद्धि पालक को भेजकर चला गया।

'पालक!' महामात्य चाणक्य ने गम्भीर होकर कहा, 'तुम मेरे विश्वस्ततम व्यक्ति हो। पाटलिपुत्र मे मेरी कुटिया तैयार हो गई?'

'हा गुरुदेव!' पालक न कहा, 'गगा के तट पर राज प्रासाद से दूर आपकी कुटिया बनायी गई है।'

'वत्स! आज की सध्या से मैं उस कुटिया मे वास करूगा।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'अब तुम्ह छुट्टी है पालक! सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के प्रासाद में सात वैद्य हैं जो उनके आहार की जाच पडताल करते हैं। तुम्हें उन पर दृष्टि रखनी होगी और सम्राट् के अंगरक्षकों पर भी, वैसे वे सब विश्वस्त व्यक्ति हैं, किन्तु फिर भी सावधान रहना चाहिए।'

इसी समय बाहर कोलाहल सुनाई दिया।

'यह कोलाहल कैसा, पालक ?' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'बाहर जाकर देखो।'

पालक बाहर गया। फिर भीतर आकर बोला 'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य, कुमार मलयकेतु कुमारी छाया, सेनापति प्रसेनजित और पाटलिपुत्र के गणमान्य व्यक्ति रथों पर बैठकर इधर आ रहे हैं।'

अभी पालक की बात पूरी न हो पायी थी कि बाहर से कितने ही कण्ठों ने पुकार कर कहा, 'महामात्य चाणक्य की जय !'

महामात्य चाणक्य शीघ्रता से उठ, बोले, पालक ! मैं ही कुटिया से बाहर जाऊंगा। चन्द्रगुप्त मौर्य अब भारत के सम्राट हैं। मैं ही आगे बढ़-कर उनसे मिलूंगा। तुम मेरी इन पुस्तकों और भोजपत्रों को सम्भाल कर सदूक मे बन्द कर दो। राज प्रासाद मे जाने से पूर्व इन्हे मेरी नई कुटिया म पहुँचा देना होगा।'

और फिर महामात्य चाणक्य अपनी चादर ओढ कर बाहर चले गए।

कुटिया से कुछ दूरी पर रथ ही रथ खडे थे। सबसे आगे थे सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य। महामात्य चाणक्य को देखते ही वे रथ से उतरे और दौड कर उनके पास आए तथा चरणो मे झुक गए।

तभी कितने ही कण्ठो से एक साथ निकला, 'महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य की जय ! महामात्य चाणक्य की जय !'

महामात्य चाणक्य ने सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के सिर पर हाथ रखते हुए कहा 'भारत सम्राट् चिरजीवी हो, सब विजयी हों।

चन्द्रगुप्त मौर्य न रथ से राजमुकुट उठाकर कहा 'यह मुकुट मेरा नहीं है गुरुदेव ! यह आपका है। इस पर आपका ही अधिकार है।

इतना कहकर उन्होंने मुकुट को महामात्य चाणक्य के चरणो रख दिया।

महामात्य चाणक्य ने मुकुट उठाकर सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के सिर पर रखते हुए कहा, 'मैं ब्राह्मण हूं, सम्राट् ! मुझे राजमुकुट की इच्छा नहीं है। मैं इसे तुम्हारे शीश पर रखता हूं।'

चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ आये लोग चिल्ला उठे, 'महाराज चन्द्रगुप्त

मौर्य की जय !'

चन्द्रगुप्त मौर्य हाथ जोड़कर बोले, 'इस विशाल साम्राज्य के महामात्य से प्रार्थना करता हूँ कि वे पाटलिपुत्र के भीतर अपने प्रासाद में चलें।'

सुनकर महामात्य चाणक्य मुस्कराए, बोले, 'भारत सम्राट ! मैं तुम्हारा महामात्य अवश्य हूँ। तुम्हारे कथनानुसार पाटलिपुत्र में भी चलूँगा, किन्तु मेरा स्थान प्रासाद में नहीं, अपनी कुटिया के भीतर है। पाटलिपुत्र में मेरी नई कुटिया बन गई है।'

चन्द्रगुप्त मौर्य आश्चर्य से बोले, 'बाँस और फूस की वह कुटिया तो गंगा तट पर बनाई गई है। काम्पिल्य से कश्मीर तक और ताम्रलिप्ति से फारस तक फैले हुए साम्राज्य के महामात्य क्या उस कुटिया में रहेंगे ?'

'हाँ, सम्राट् !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'तुम्हारा महामात्य ब्राह्मण है। उसका यश, उसकी बुद्धि और सब कुछ उसकी देश सेवा में है, धन दौलत और प्रासाद में नहीं ! ऐश्वर्य और विलास राजाओं को शोभा देते हैं, अमात्यों को नहीं ! चलो, हम पाटलिपुत्र में चलें।'

चन्द्रगुप्त मौर्य हाथ जोड़कर अपने रथ के पास ले आए। सहारा देकर उन्हें रथ में बिठाया और सारथि को हटाकर स्वयं ही रथ हाँकने लगे।

शेष व्यक्ति भी रथों में बैठ गए और उच्च स्वर में बोले, 'महामात्य चाणक्य की जय !'

इस उच्चघोष के साथ ही रथ आगे बढ़े। महामात्य चाणक्य धीरे से बोले, 'वृषल ! सिकन्दर का उत्तराधिकारी सेल्यूकस बना है। वह कभी भी भारत पर फिर आक्रमण कर सकता है और दूसरे ... ?'

'और दूसरे क्या, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य चौंक उठे, 'राक्षस सुनन्दा के नाना विशालाक्ष से मिलकर तुम्हारे विरुद्ध कोई षडयन्त्र अवश्य रचेगा।'

'गुरुदेव ! इतनी बड़ी बात !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'मैं अब तक इससे अनभिज्ञ हूँ।'

'अब तो भिज्ञ हो गए, वृषल !' महामात्य चाणक्य गम्भीरता से

बोले, 'किंतु यह बात किसी और को न बताना। पाटलिपुत्र में स्वराज्य को सुगठित करके ही हम यूनानियों की ओर ध्यान देंगे। राक्षस की योजना को पहले विफल करेंगे। पाटलिपुत्र भारत का हृदय है। हृदय निर्बल हो तो राष्ट्र भी निर्बल होता है।'

'और तब तक शत्रु आगे बढ़ा तो...!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

शत्रु को और उसके आगे बढ़ने को देखना होगा, वृषल!' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'इस बार सेल्यूकस का सिंधु के तट से आगे बढ़ने दिया जाएगा। पर हां, आज हेलेन को एक प्रेम भरा पत्र लिखना होगा। मेरे गुप्तचर उस पत्र को हेलेन तक पहुंचा देंगे।'

हेलेन! सेल्यूकस की बेटी।' चन्द्रगुप्त मौर्य स्मरण शक्ति पर जोर देते हुए बोले।

हां, वही हेलेन!' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'सेल्यूकस के पास हमारा एक व्यक्ति रहने से लाभ ही हो सकता है और फिर मैंने सुना है वृषल हेलेन अद्वितीय सुंदरी और चतुर है। उससे यदि तुम्हारा विवाह...।

गुरुदेव! आप जानते हैं कि मेरा अनुराग जितना छाया के प्रति है, उतना हेलेन के प्रति नहीं।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'मैं तो छाया से...।

'छाया! मलयकेतु की भगिनी।' महामात्य चाणक्य ने गम्भीरता से कहा, 'मेरे हृदय में उस अभागी के लिए अपार श्रद्धा है।'

तभी पाटलिपुत्र का मुख्य द्वार आ गया। रथों का काफिला उनमें प्रवेश कर बढ़ गया था गंतव्य पथ की ओर।

चवालीस

वन में चिता जल रही है।

शोकातुर घननंद लौ की अंतिम ज्योति में खड़े हुए अपनी चिर-

संगिनी को विदा दे रहे हैं।

उनके समीप ही उनके विश्वस्त सेवक नतमस्तक खड़े हैं।

धननंद का हृदय विदीर्ण हो उठा। उनकी क्रूर आंखें अंगारों के स्थान पर अश्रु ढुलकाने लगीं। उनकी पाशविक प्रकृति द्रवित हो उठी। उनके पैरों में कम्पन सी उत्पन्न हुई और वे वहीं पर बैठ गए।

तभी उनका वेदना में डूबा हुआ स्वर निकला, 'देवी! आज तक अपना सर्वस्व खोकर, तेरे ही सहारे जीवन की शेष घड़ियां गिन रहा था। तू भी ऐसे समय में धोखा दे गई। तेरी प्यारी बेटी सुनन्दा, न जाने कहां भटक रही होगी? अब मेरा इस दुनिया में कौन रह गया है? बोल, मुझे उत्तर दे।'

उनका क्रन्दन सुनकर राजभक्त सेवक द्रवित हो उठे।

सहसा धननन्द के पैरों में शक्ति का संचार हुआ। वे खड़े हो गए। उनका मुरझाया हुआ चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। वे क्रोधावेश में बोले, 'चन्द्र! तूने ही मेरे परिवार का नाश किया है। तूने ही मेरी सुकुमार बच्ची के कोमल हृदय को ठुकराया है। तूने ही मुझे असीम पीड़ा देकर महारानी को आकस्मिक मृत्यु का आलिंगन करने के लिए विवश किया है। अब तू ही मेरा घोर शत्रु है। तेरा नाश ही मेरा संकल्प है।

कौन घोर शत्रु है, पिताजी?' योगिनी के वेश में सुनन्दा ने वहां पहुंचते हुए कहा, किसके नाश का संकल्प ले रहे हैं?'

धननन्द के साथ ही राजभक्त सेवकों की दृष्टि सुनन्दा की ओर उठ गई।

सुनन्दा!' मेरी प्यारी बेटी। धननंद के मुख से निकला और बेटी को गले लगा लिया।

'यह किस की चिता है, पिताजी?' सुनन्दा ने पिता से अलग होते हुए पूछा।

तुम्हारी स्नेहमयी माता की।' कहते कहते धननंद की आंखें छल-छला आई।

क्या, माताजी मुझसे बिना मिले ही चली गईं? सुनन्दा वेदना से पीड़ित होकर बोली।

'जाने वाली चली गई, बेटी !' धननद ने स्वय को सम्भालते हुए कहा, 'अपने को सम्भालो ।'

'सत्य है, पिताजी ! यह क्रन्दन मात्र तो मायावी जगत का ढकोसला है ।' सुनन्दा स्वय को सम्भालती हुई बोली ।

'ठीक कहती हो, बेटी ! धननद ने सुनन्दा के कथन का समर्थन किया, महर्षि कात्यायन कश्मीर के लिए क्या गए, मेरा तो सब कुछ ही बदल गया ।'

पिताजी ! अब इस मन की चचलता पर विजय प्राप्त कीजिए । इसके लिए अमोघ शस्त्र है वैराग्य ।' सुनन्दा बोली ।

वैराग्य ! धननद ने दुहराया फिर बोले, 'असम्भव, मैं तुम्हारी बात नही मान सकता । मुझे तो ।'

'मुझे तो क्या पिताजी ?' सुनन्दा बोली, 'मुझसे मन की बात कहकर उसे हल्का कर लीजिए ।'

'प्रतिशोध लेना है, सुनन्दा !' कहते कहते धननद का चेहरा तमतमा उठा ।

'प्रतिशोध !' सुनन्दा ने पूछा, 'मगर किससे ?'

'चन्द्रगुप्त से !' धननद ने गुस्से मे कहा ।

आर्यपुत्र ने आपका क्या बिगाडा है ?' सुनन्दा ने प्रश्न किया ।

यह तुम पूछ रही हो, बेटी !' धननद ने दाँत पीसते हुए कहा 'उसने मेरे परिवार का ही नाश नहीं किया बल्कि तेरे सुखो मे भी आग लगा दी।

यह आरोप मिथ्या है पिताजी !' सुनन्दा ने पिता को समझाने का प्रयास किया, वे तो अब भी विवाह के लिए तैयार हैं, किन्तु मैं स्वय ही प्रभु की शरण छोडकर अन्यत्र आना नही चाहती ।'

ऐसा होगा बेटी ! धननद बोले, 'पर उसने मेरे वश का तो नाश कर ही डाला ।'

'पिताजी ! आर्य पुत्र ऐसा न करके अभी तक आपके जीवन की रक्षा कर रहे हैं । सुनन्दा ने कहा 'पर आपने अवश्य उनकी हत्या का प्रयास करवाया ।'

यह काय मेरा नही, किसी मेरे भक्त का हो सकता है, सुनन्दा !'

धननद ने सफाई दी।

'चाहे वह किसी का भी हो, किन्तु नाम आपका ही बदनाम होगा।' सुनन्दा न उत्तर दिया, 'अब मेरी आपसे यही विनती है कि आप इन राजनतिक दाँवपेंचो को त्याग कर सुख शाति से जिन्दगी काटें।'

'अच्छा बेटी! यह सब तो हो जाएगा, किन्तु मेरी भी अब एक इच्छा है।' धननद बोले, 'तू मौर्य पुत्र से विवाह कर ले।'

'पिताजी! आपकी बेटी शायद इस इच्छा को पूर्ण न कर सके।' सुनन्दा न कहा 'योगिनी को गृहस्थ म आना ठीक नहीं।'

'जैसी तेरी इच्छा!' धननद न लम्बी सास भर कर कहा।

इसके बाद व दोनो विश्रामगृह की ओर बढ गए।

शय्या पर लेट कर भी धननद की आँखो से नीद कोसो दूर थी। आज वे एक का खाकर दूसरे का पा गए थे। उनका अन्त करण पुत्री के मिलन से खुश था।

फिर भी उनके हृदय मे कभी कभी शूल सा उठता था। वे उसे दूर करने का भरसक प्रयास कर रहे थे। इसी बीच आखें बोझिल हो उठी और स्वप्ननिद्रा म लीन हो गए।

पैंतालीस

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य महारानी दुर्धरा के साथ उपवन की सैर कर रहे थे। चन्द्र ज्योत्सना सवत्र छिटकी हुई थी। उन्होंने सरोवर के किनारे बैठते हुए कहा, 'प्रिये! चन्द्र तुम्हारे सौन्दय को देखकर लजा रहा है।'

'क्या कोई आज विशेष बात है?' महारानी दुधरा न सरोवर क जल से क्रीडा करते हुए कहा, 'जो आज मरे सौंदय का बयान किया जा रहा है।'

'क्या ऐसा हमने कभी नहीं किया?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने महारानी

दुधरा की ठोढी ऊपर उठाते हुए कहा, 'हमने तो सवस्व लुटा दिया इस पर।

'स्पष्ट कहो क्या चाहते हो ?' महारानी दुधरा ने तनिक दूर होते हुए कहा, 'यह प्रेमालाप शयन कक्ष तक ही ठीक है यहा नही।

सुनकर चन्द्रगुप्त मौय हस पडे। फिर कुछ क्षण बाद बोले, 'इस सुन्दर वातावरण म वीणा नही सुनाओगी।

अवश्य, आय !' महारानी दुधरा ने कहा, मैं सेविका को भेजकर केलि भवन से वीणा को मँगवाती हूँ।' इतना कह कर उन्होंने सेविका को सकेत किया।

सेविका महारानी के पास आकर बोली, 'आज्ञा, देवी।'

वीणा ले आओ !'

आज्ञा का तुरन्त पालन हुआ। कुछ देर बाद ही वीणा महारानी दुधरा के हाथो म थी।

अब वीणा के तार झकृत हो उठे।

महारानी दुधरा के कपोल रक्तरजित हो उठे।

उनके मधुर अधरो से स्वर लहरी फूट पडी।

जल थल के पक्षियो ने ध्यान से सुना और वे सभी उसके आनन्द म खो गए।

भूलो भूलो हे निर्मोही,
मेरा अनुपम प्रेम महान।
भूल सकते हो तो भूलो,
हृदय का आदान प्रदान॥

'अति सुन्दर !' चन्द्रगुप्त मौय के मुख से निकला।

वीणा पर थिरकती हुई उगलिया रुक गइ और गीत सुन्दरी दुधरा महाराज के बाहुपाश मे सिमट कर रह गई।

प्रिये ! आज बहुत प्रसन्न हो। चन्द्रगुप्त मौय ने पूछा।

हाँ, आय ! आज मेरे जीवन की साध जो पूर्ण हुई है।' महारानी दुधरा ने कहा।

'वह कैसे ?

'आय, जो मेरे साथ हैं।'

'हम तो सदैव ही रहे हैं, महारानी

'तब आप उलझे रहते थे।'

'किसमे ?'

'राजनीति के दाँव पेंचो मे।'

'और अब ।'

'मेरे स्नेह बधनो मे।'

'क्या यही सच्चा अनुराग है ?'

'जगत् तो इसी को मानता आया है।

देखो!' राजकुमारी सुनन्दा ने सवगुण सम्पन्न होते हुए भी इस जगत् से विरक्ति ले ली है।'

'हाँ आय! उस देवी ने अपना सवस्व न्योछावर करके आपको सुखी बनाया है।'

'इसमे तो कोई दो राय नही हो सकती, महारानी!' चन्द्रगुप्त मौम ने थोडा मुद्रा को बदलते हुए कहा, 'आज हम एक बात और कहना चाहते हैं।'

'कौन सी बात ?'

'राजनीतिक परिस्थितियो के कारण हमे बाध्य होना पड रहा है।'

'आय! मैं आपका आशय समझी नही। आप स्पष्ट कीजिए।'

'उसकी स्पष्टता से कही तुम ?'

'ऐसा नही होगा, आय!'

'तो सुना देवी! हम यूनान की राजकुमारी हेलेन से विवाह करना होगा, ऐसा गुरुदेव का आदेश है। इसी मे हमारे देश का हित है।' चन्द्रगुप्त मौर्य एक सास मे कह गए।

'आय! आपका हित ही मेरा जीवन है। महारानी दुधरा न कहा, 'इस जीवन मे आपही मेरे सवस्व हैं। मुझे केवल आपका सच्चा अनुराग चाहिए।'

विश्वास करो, देवी! यह तुम्हे मिला ही रहेगा।' चन्द्रगुप्त मौय ने महारानी दुर्धरा के कुन्तलो से खेलते हुए कहा, 'फिर हम उस हृदये-

श्वरी को कैसे भुला सकते हैं जिसने हमे युवराज और सुकुमार बेटा दिया है और तुम्हारे पिता की शक्ति पर ही तो आज इतना बडा साम्राज्य पा सके हैं। इन सबकी तुम्ही स्वामिनी हो, हम तो केवल प्रबन्धक मात्र हैं।'

'मुझे इस विशाल साम्राज्य की आवश्यकता नही।' महारानी दुधरा ने कहा, 'केवल आपका सच्चा अनुराग चाहिए।'

'हमारा सर्वस्व देवी के चरणो मे न्योछावर रहेगा, इसका हम विश्वास दिलाते हैं।

सच, आर्य !' महारानी दुधरा ने पुलकित होकर कहा।

'और कोई इच्छा हो तो !'

आप मे ही मेरी सब इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं, आर्य !'

'इन दिनो हम राज्य सम्बन्धी कार्यों मे इतना उलझे रहे कि तुम्हारे मनोरंजन की ओर विशेष ध्यान नही दे सके, देवी !

आर्य ! अभी तक हमारा जीवन संकटो मे फँसा हुआ है। इसलिए मनोरंजन की बात कैसे सोची जा सकती है ?

'गुरुदेव के कारण हम निश्चिन्त हैं, देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'वे सब देखभाल रखते हैं। उनकी महती कृपा से ही तुम्हारे सुहाग की रक्षा हो सकी है।

तब एक इच्छा और पूर्ण कीजिए, आर्य !' महारानी दुधरा ने कहा, 'इस बार वसन्तोत्सव ।

निश्चिन्त रहो देवी। तुम्हारी यह इच्छा अवश्य पूर्ण होगी। इस बार वसन्तोत्सव बडी धूम धाम से मनेगा।' इतना कह चन्द्रगुप्त मौर्य ने पुकारा, 'कोई है ?

आज्ञा कीजिए महाराज !' कंचुकी ने पास पहुँचकर कहा।

'पाटलिपुत्र मे वसन्तोत्सव मनाने की तैयारी की जाए।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने आदेश दिया, इस बात की राजधानी मे घोषणा करा दी जाए।

'अभी कीजिए अन्नदाता !' इतना कहकर कंचुकी चला गया।

इतने मे युवराज परिचारिका के साथ उपवन मे आया। उसके गले मे छोटी-सी तलवार पड़ी हुई थी।

राजकुमार किलकारी मारता हुआ चन्द्रगुप्त मौर्य की ओर बढ़ गया। वे उसे गोदी म बैठाकर प्यार करने लग गए।

छयालीस

वसन्त पचमी आ गई। पाटलिपुत्र मे कही भी वसन्तोत्सव की तैयारियाँ दिखाई नही दी। प्रकृति ने अवश्य उपवन की शोभा को द्विगुणित कर दिया। प्रासाद की छत पर से यह देख महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य ने पुकारा, 'कचुकी!'

'आज्ञा, महाराज!' कचुकी ने महाराज के पास पहुँच कर अभिवादन के बाद कहा।

'हमारी आज्ञा का उल्लघन!' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कुपित स्वर मे कहा 'आज वसन्तोत्सव का कोई भी चिह्न दृष्टिगोचर नही हो रहा है।'

'देव!' कचुकी न नतमस्तक होकर कहा इस प्रश्न का उत्तर यदि आप किसी और से ।'

'तुम घबरा क्या रहे हो कचुकी?' चन्द्रगुप्त मौर्य न कचुकी को थर थर काँपते हुए देख कर कहा, 'साधारण सी बात का बताने मे डर कैसा?'

'महाराज! कचुकी न कहा, 'मुझ छोटे से अनुचर के लिए राजाज्ञा भग छोटी सी बात नही है?'

'तुम्हारी बात गोपनीय रहेगी कचुकी!'

फिर भी कचुकी का मुख नही खुला।

चन्द्रगुप्त मौर्य इस बात को सहन न कर सके। वह क्रोधावेश मे बरस उठे वसन्तोत्सव किसने रोका?'

कचुकी भयभीत हो उठा।

इससे पूर्व उसने महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य का क्रोध कभी नही देखा

था। उसके मुख से निकल गया, 'महामात्य चाणक्य !'

'हमारे छोटे छोटे आदेश भी रोक दिये जाएँगे, ऐसा हमने स्वप्न म भी नही सोचा था।' चन्द्रगुप्त मौय उसी कुपित मुद्रा मे बोले, 'हम यह सहन नही कर सकते कचुकी। तुम यथाशीघ्र महामात्य के पास जाओ और कहो कि यदि कोई विशेष काय न हो, तो वे इसी समय हम दशन देकर कृताथ करें।'

'जो आज्ञा देव !' कचुकी यथाविधि अभिवादन करने के बाद महामात्य चाणक्य के पास चला गया। वहाँ पहुच कर भी वह मुख से कुछ न कह सका। वह अभिवादन के बाद चुपचाप खडा रहा।

महामात्य चाणक्य ने उसके चेहरे का पढते हुए पूछा, 'कैसे आए, कचुकी ?'

देव ! राज प्रासाद की छत पर आपके दशनो के लिए इच्छुक हैं।' कचुकी ने कहा, 'यह समाचार लेकर आपके सामने उपस्थित हुआ हूँ।'

इस समय दशनो का कारण। महामात्य चाणक्य ने पूछा।

'इस सम्बन्ध मे यह सेवक क्या निवेदन कर सकता है ?' कचुकी ने उत्तर दिया।

उन्ह राज प्रासाद की छत पर किसने भेजा ? 'महामात्य चाणक्य ने पूछा।

किसी ने नही, आय ?' कचुकी ने कहा, 'महाराज स्वय ही महारानी के साथ वहा पहुच गए।

तुम्हारे से कोई बातचीत हुई ? महामात्य चाणक्य ने प्रश्न किया।

आय ने मुझ से केवल वसतोत्सव के रुकने का कारण मात्र पूछा था। कचुकी ने सिर झुकाए उत्तर दिया।

'फिर तुमने क्या उत्तर दिया ? महामात्य चाणक्य ने पूछा।

आय ! मैं तो उत्तर देना ही नही चाहता था, किन्तु देवाज्ञा से विवश होकर मेरे मुख से निकल पडा।'

क्या निकल पडा ?

'आप का नाम।

ठीक है, मैं चलता हूँ। कह कर महामात्य चाणक्य सुसज्जित रथ

मे बैठ गए। वह उन्हे लेकर राज प्रासाद की ओर बढ गया।

राज प्रासाद मे पहुच कर रथ से उतरे और कचुकी के साथ उसकी छत पर महाराज के सामने पहुच गए।

सम्राट और सम्राज्ञी ने उठ कर गुरुदेव को नमस्कार किया तथा उन्हे सम्मान से बैठाकर, अपने-अपने आसनो पर विराज गए।

वृषल! आज असमय स्मरण कैसा?' महामात्य चाणक्य ने पूछा।

'गुरुदेव के दर्शनार्थ ही कारण हो सकता है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने विनम्रता से कहा।

'अच्छा। व्यवहार मात्र को त्याग कर वास्तविकता पर आओ, वृषल!' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'सम्राट किसी का समय व्यर्थ मे नष्ट नही करते है?'

'वसन्तोत्सव न होने मात्र का कारण जानने की इच्छा थी, गुरुदेव!'

'वृषल! आज प्रथम बार उपालम्भ के लिए आमन्त्रित किया गया हूँ।'

'यह बात नही है, गुरुदेव! दर्शनार्थ ही ।'

'शत्रु के चौथे वार को रोकने के लिए ही यह वसन्तोत्सव नही होने दिया।'

यह उत्तर तो कुछ युक्ति सगत सा प्रतीत नही होता, गुरुदेव।

'केवल कारण शेष है वृषल!'

'गुरुदेव! उत्सवो के अतिरिक्त शत्रु प्रहार का भय तो हर समय ही ।'

'वृषल! यदि हमारा हस्तक्षेप पसन्द नही है, तो हमे मत रखिए और स्वेच्छा से राजकार्य चलाइए।

गुरुदेव, रुष्ट न हो। महामात्य को हस्तक्षेप की अपेक्षा मन्त्रणा देनी चाहिए। मानना या न मानना राजा का अधिकार है।'

'राजा की अनुपस्थिति म यह अधिकार किस का रह जाता है, वृषल!'

'महामात्य का।'

'और अब।

'राजा की उपस्थिति मे महामात्य को आज्ञा देने का कोई अधिकार नही।'

'भूलते हो वृषल ! महामात्य के कधे पर राज्य का सारा भार होता है।

आप की बात मान सकता हूँ, गुरुदेव ! किन्तु आज्ञाएँ हमारी ही चलेगी।

'अनुचित आज्ञाएँ राजा की नही चल सकेंगी।

'उचित-अनुचित का निर्णय कौन करेगा ?'

'मन्त्रि मडल, जिसका राजा सदस्य होता है।

'राजाज्ञा महामात्य या अमात्य पर बाधित नही।'

'नही ! उनको चलाना अन्य का काम है।'

'उस पर दायित्व तो है।'

'अवश्य !'

'गुरुदेव ! हम आज से स्वय राज्य भार उठाने के लिए उद्यत हैं।'

मैं इस भार से मुक्त होता हूँ।' महामात्य चाणक्य ने कमर मे लटकी हुई तलवार को एक ओर रखते हुए कहा, 'वृषल ! अपना अन्य महामात्य नियुक्त कर लीजिए।

'गुरुदेव ! आप उस समय तक अपना कार्यभार सम्भाले रखें, जब तक हमे कोई योग्य व्यक्ति इस पद के लिए न मिल जाए।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने तलवार उठाकर महामात्य चाणक्य को देते हुए कहा।

मेरे अब रहने मात्र से आपका प्रबन्ध बिगड सकता है। महामात्य ने तलवार लेते हुए कहा, अत अन्य महामात्य का प्रबन्ध यथाशीघ्र करो।

अपने प्रति गुरुदेव से 'आप शब्द सुनकर चन्द्रगुप्त मौर्य असमजस मे पड गए। फिर कुछ क्षण बाद बोले 'प्रयत्न किया जाएगा, गुरुदेव !'

'प्रभु ही रक्षक !

इतना कह कर महामात्य चाणक्य क्रोधावेश मे राज प्रासाद की छत से नीचे उतर गए और रथ म बैठकर अपनी कुटिया की ओर चल दिए।

सैंतालीस

पाटलिपुत्र का राज दरबार लगा हुआ था।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य राजसी पोशाक मे सम्राज्ञी दुधरा के साथ सिंहासन पर विराजमान थे।

महामात्य तथा अन्य अमात्य अपने अपने आसनो पर विराजमान थे और सभासद अपने।

तभी बन्दी धननन्द को उपस्थित करने का आदेश हुआ।

कुछ ही देर बाद सशस्त्र सैनिको के बीच धननद को उपस्थित कर दिया गया। उसने चन्द्रगुप्त मौर्य की ओर देख कर कहा 'हमारा अपराध, राजन ?'

'आप स्वयं जानते हैं।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'फिर भी दण्ड देने से पूर्व अपराधी को उसका अपराध बताया जाता है, महामात्य !' धननद ने कहा, फिर हम तो साधारण अपराधी नही।'

'आपने कई अपराध किए हैं जिनके अभियोग आप पर लगाए गए हैं।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'आपने राजकोष से मणि मुक्तादि नियम विरुद्ध लिए और अन्त मे शयनागार मे सशस्त्र सैनिक भेजे। इन सब बातो से आपका तात्पर्य।

'हम बतलाने के लिये तैयार नही।'

'यह मैं पहले ही जानता था धननद।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'मैंने अपना प्रण तो आपको पदच्युत करके ही पूरा कर लिया था। आप के अभियोगो को अब महादण्डनायक जी के समक्ष प्रस्तुत किया है।'

'धननद जी ! आप जो कहना चाहते हैं, वह कहे। मैं इस समय धर्मासन पर विराजमान हूँ, इसलिये न्याय ही होगा। आप पर राजकोष से मणि मुक्तादि निकालने का आरोप लगाया गया है। क्या यह सत्य है ?' महादण्डनायक जी ने पूछा।

'बिल्कुल सत्य है।' धननद ने उत्तर दिया।

'विष कन्या आप द्वारा ही पालित थी और आपकी इच्छा से ही वह

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का अन्त करने के लिए विलासागार में भेजी गई थी।'

'इसका प्रमाण।

'स्वयं बन्दीगृह में विषकन्या।'

'तब हम इस प्रश्न का उत्तर देना नहीं चाहते।'

'आपने दो बार सशस्त्र सैनिकों द्वारा सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य का वध कराने का प्रयास किया।'

'अवश्य।'

'अब आपके सभी अभियोग प्रमाणित हो चुके हैं। इनके उपलक्ष्य में आप मृत्यु दण्ड के अधिकारी हैं।'

'यह हम पहले ही जानते थे।'

'वृषल ने आपके साथ सदा ही दया का व्यवहार रखा है परन्तु आपने अपनी कुटिलता को नहीं त्यागा। अब मैं चाहता हूँ कि आप मेरे साथ खड्ग युद्ध करें।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'लगता है, ब्राह्मण। तुम्हें मृत्यु ने धक्का दिया है जो आज एक क्षत्रिय को खड्ग युद्ध के लिए ललकार रहा है। धननंद ने कहा, किन्तु अंतिम समय में हम ब्रह्म हत्या का पाप अपने सिर नहीं लेना चाहते। यदि युद्ध ही करना है तो अपने परम शिष्य चन्द्रगुप्त को भेज।'

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य धननंद के उत्तेजनात्मक शब्दों को सहन न कर सके। वे महामात्य चाणक्य की ओर देखने लगे।

'सम्राट! खड्ग उठाइए। आपका शत्रु युद्ध के लिए ललकार रहा है।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'हम तैयार हैं, गुरुदेव!' चन्द्रगुप्त मौर्य इतना कह कर तलवार उठाकर मैदान में उतर आए।

'धननंद को भी तलवार दीजिए।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

आदेश का तत्काल पालन हुआ।

तलवार लेकर धननंद युद्ध के लिए सम्राट के सामने आ गया।

दोनों के बीच खड्ग युद्ध आरम्भ हो गया।

खड्गों की खनखनाहट उपस्थितजनों के कानों में पड़ने लगी।

तभी सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य ने कस कर वार किया। दूसरे ही क्षण मे घननद का सिर धरती पर लोटने लगा। धरती रक्त रंजित हो उठी।

तभी महामात्य चाणक्य ने उठकर चन्द्रगुप्त मौर्य को वक्षस्थल से लगाते हुए कहा, 'वृषल ! तुम जैसा निडर शिष्य पाकर मैं धन्य हुआ। अब हम दोनो के बीच कोई कलह नही है, वत्स ! आज मैं तुम्हे आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारा राज्य कश्मीर से कन्याकुमारी तक विस्तृत रहे और एकच्छत्र राज्य करते रहो।'

'गुरुदेव की कृपा शिरोधार्य !' सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'किन्तु ।'

'किन्तु क्या, वृषल ?'

'गुरुदेव ! धननद जी का दाह सस्कार यथाविधि करा दीजिएगा और इन की चल सम्पत्ति योगिनी सुनन्दा को दे दीजिएगा। यदि वे उसे लेने मे आपत्ति करें, तो उसे राजकोश मे जमा करा दीजिएगा।'

'ऐसा ही होगा, वृषल !'

इतना कह कर महामात्य चाणक्य धननद के अन्तिम सस्कार के प्रबन्ध के लिए चले गए।

सभा विसर्जित कर दी गई।

अडतालीस

लौहित्य नगर के सघन वन मे एक सिद्धहस्त सन्यासी अपने कुछ शिष्यो के साथ धूनी रमाए हुए हैं। उनके दर्शनो के लिए सैंकडो लोगो का जमघट लगा रहता है। हर छोटे बडे की कामना पूर्ण करते हैं। उनका आशीर्वाद सभी को खूब फल फूल रहा है।

एक दिन पाटलिपुत्र के भूतपूर्व महासेनापति भद्रशाल भी छिपते-छिपाते उन सिद्धहस्त सन्यासी के दर्शनार्थ पहुँच गए।

उन्होंने उस सिद्धहस्त सन्यासी के रूप में महर्षि कात्यायन जी को देखा। उनकी दाढ़ी और केश बिल्कुल साफ थे। उन्होंने गहए वस्त्र धारण किए हुए थे। भद्रशाल भीड़ छँटने की राह देखने लगे।

रात्रि को आठ बजे उन्हें एकान्त वातावरण मिला। उन्होंने महर्षि कात्यायन के चरणों में सिर झुका दिया।

महर्षि कात्यायन महासेनापति भद्रशाल से मिलकर अति प्रसन्न हुए और उन्हें लेकर अपने विश्राम गृह में आए।

वहाँ कुशासन पर बैठ कर दोनों में वार्तालाप हुआ।

आर्य ! अब क्या होगा ?' भद्रशाल ने शोकातुर वाणी में कहा, आप सम्पूर्ण साम्राज्य की रक्षा का भार मुझ पर छोड़ कर गए, किन्तु मैं नदवंश और उनके विशाल साम्राज्य की रक्षा न कर सका। मैं इसी क्षोभ की ज्वाला में भस्म हुआ जा रहा हूँ।'

'इसमें तुम्हारा क्या दोष है, भद्र ?' महर्षि कात्यायन ने कहा, मैं ही अष्टाध्यायी की कारिका में ऐसा लीन हुआ कि अपने इष्टदेव का खो बैठा। उन्होंने मुझ पर पूर्ण विश्वास किया, किन्तु मैं उस विश्वास की रक्षा न कर सका। मैंने एक व्याकरण शास्त्र के लिए अपने देव का निधन करा दिया। अब क्या किया जाए ? उनकी दिवंगत आत्मा को किस प्रकार शांति पहुँचायी जाए यह समझ में नहीं आता।'

'आर्य ! शत्रु को दण्ड देने मात्र से महाराज धननंद की आत्मा को शांति मिल जाएगी।' भद्रशाल ने कहा।

तुमने उचित परामर्श दिया भद्र !' महर्षि कात्यायन ने भद्रशाल के कथन का समर्थन करते हुए कहा।

इसके लिए आपको यह वेशभूषा त्यागनी होगी आर्य !' भद्रशाल ने कहा 'लौहित्य नरेश विशालाक्ष जी से भेंट करनी होगी।'

'भद्र ! आज तक तो यही वेशभूषा अन्न-जल देती रही और इन्होंने ही मेरे प्राणों की रक्षा की।' महर्षि कात्यायन ने कहा 'यदि मैं वास्तविक रूप में इधर आता, तो चाणक्य के कोप से नहीं बच सकता था।'

वह तो आपने ठीक ही किया आर्य !' भद्रशाल ने कहा, 'मैं भी महाराज धननंद के पराजित होने के बाद गुप्त रूप से उनकी सहायता

करता रहा । विष कन्या, सशस्त्र वीरो के गुप्त प्रयोग और विस्फोटक पदार्थ द्वारा चन्द्रगुप्त मौर्य की हत्या का षडयन्त्र राक्षस से मिल कर रचा, किन्तु चाणक्य ने उन सब को असफल बना डाला । महाराज को भी सचेत रहने के लिए कहलवाया, किन्तु वे अपनी शत्रुता को न भुला सके । अत मे चन्द्रगुप्त के द्वारा उनका शरीरान्त हुआ ।'

'भद्र ! महाराज धननन्द का जीवन असमय ही काल का ग्रास बन गया ।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'यदि मैं उन्हे समझाता, तो वह अवश्य मान जाते । फिर इसके आगे क्या हुआ ?'

'आर्य ! आधे से अधिक सैनिक मौर्य कुमार चन्द्रगुप्त के स्वामिभक्त हो गए और शेष मेरे साथ ही वनो मे भटकते फिर रहे हैं ।' भद्रशाल बोले ।

'भद्र ! आप लौहित्य नरेश तक हमारा सदेशा पहुँचा दें ।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'नन्दवश का हित चाहने वाले वे ही अकेले नरेश हैं ।'

'जो आज्ञा, आर्य !' भद्रशाल ने कहा और फिर वे महर्षि कात्यायन को नमस्कार करके रात्रि के अधकार मे खो गए ।

महर्षि कात्यायन सब दैनिक कृत्यो से निवृत्त होकर विश्राम करने लग गए । किन्तु मानसिक द्वन्द्वो ने उन्हे विश्राम न करने दिया । वे उठ कर बैठ गए और मन को एकाग्र करने का प्रयास करने लग गए ।

उनचास

लौहित्य नरेश विशालाक्ष जिस समय एक विश्वस्त व्यक्ति द्वारा सूचना पाकर मगध के भूतपूर्व महामात्य महर्षि कात्यायन से मिलने के लिए पहुँचे, उस समय वे उद्विग्नावस्था मे अपने विश्राम स्थल पर इधर से उधर चक्कर काट रहे थे । महाराज विशालाक्ष को देखते ही उनके चेहरे

पर खुशी की झलक दिखाई दी और बाहर बैठी भीड को फिर आने का आदेश दिलवा दिया।

कुछ ही देर मे भीड छट गई।

इसके बाद महर्षि कात्यायन ने महाराज को यथोचित सम्मान के साथ बैठाते हुए कहा, 'महाराज ! आप ही नद वश के शुभचिन्तक हैं। मुझ से इस वश का अहित देखा नही जा रहा है। इसके हित का कोई उपाय कीजिए।'

'महर्षि ! आपने ठीक ही कहा—' लौहित्य नरेश विशालाक्ष बोले, 'आपकी लम्बी अनुपस्थिति मे ही मगध का राज्य समाप्त हो गया। अभी हमारी बेटी की चिता की राख भी ठडी न होने पायी थी कि दामाद घननद के कत्ल का समाचार मिला। पिता के होते हुए पुत्री के परिवार को शत्रु विनष्ट कर दे, इससे बढ कर और हमारा अपमान क्या हो सकता है ?'

कहते कहते महाराज विशालाक्ष की आँखें भर आइ।

'सयम और धैय से काम लीजिए, महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा, तभी आप शत्रु से अपन आत्मीयो का प्रतिशोध ले सकेंगे। इसके लिए धन और जन की आवश्यकता पडेगी।'

महर्षि जी ! आपने जो मगध का कोष धरोहर रूप मे हमारे पास रखा था वह पूणतया सुरक्षित है। लौहित्य नरेश विशालाक्ष ने कहा, 'इसके अतिरिक्त हमारा सारा कोष आपका ही है। इसकी मदद से सैन्य शक्ति बढाइए और शत्रु को कुचल डालिए। हमारी तो बस एक ही इच्छा है कि हम शत्रु के मुण्ड को ठोकर मार कर हृदय मे धधकी हुई अग्नि को शात कर लें।

'आय ! महाराज की बात को सुन कर भद्रशाल ने कहा 'पच्चीस सहस्र सैनिक तो इस समय लौहित्य दुर्ग म तैयार हैं। पाँच सहस्र भेस बदल कर इधर उधर मारे मारे फिर रहे हैं। इनके अलावा इस कोष से एक लाख नए सैनिक तैयार किए जा सकते हैं।'

'भद्र ! तुम्हारा कथन सत्य है।' महर्षि कात्यायन न कहा 'किन्तु सैन्य सगठित करने से पूव हमे यह विचार लेना चाहिए कि युद्ध की

आधारशिला क्या हो?"

'राजकुमारी सुनन्दा के लिए ही युद्ध होगा।' लौहित्य नरेश विशालाक्ष बोल पड़े।

'महाराज! सुनन्दा ने राजसी वैभव को त्याग कर योगिनी वेशभूषा को अपनाया है। इसलिए अब उसका शस्त्र हिंसा न होकर अहिंसा है।'

'महर्षि जी! वह अभी नादान है।' लौहित्य नरेश विशालाक्ष ने कहा, 'हमारे समझाने-बुझाने से वह योगिनी की वेशभूषा त्याग देगी।'

'यदि ऐसा है तो उन्हें लौहित्य दुर्ग में बुलाने का प्रबन्ध किया जाए।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'मैं भी इस भेस को त्याग कर दुर्ग की ओर प्रस्थान करूँगा।'

तभी भद्रशाल ने एक विश्वस्त व्यक्ति को सुनन्दा को बुलाने के लिए भेज दिया।

महर्षि कात्यायन ने लौहित्य दुर्ग में महाराज विशालाक्ष का आतिथ्य ग्रहण किया।

उधर सुनन्दा मातामह की सूचना पाकर लौहित्य नगर पहुँच गई। उन्होंने दुर्ग में आतिथ्य ग्रहण न करके नगर के एक आश्रम में ठहरना उचित समझा।

सन्ध्या समय वे मातामह महाराज विशालाक्ष से भेंट करने के लिए दुर्ग में गई। वहाँ पर महामात्य महर्षि कात्यायन को देख कर अचम्भित रह गई।

महर्षि कात्यायन ने सुनन्दा के भावों को पढ़ते हुए कहा, 'बेटी! नन्द-वंश की दुर्दशा तो तुम्हारे से छिपी नहीं है। सम्राट और सम्राज्ञी तथा नौ भ्राता काल के ग्रास हो चुके हैं और तुमने इस राज्य से विमुख होकर यह भेस धारण कर लिया है जिसे देख कर मेरे कलेजे के टुकड़े हुए जा रहे हैं।'

सुनन्दा चुपचाप बैठी हुई महर्षि कात्यायन के शब्दों को सुनती रही। वे कहते गए, 'बेटी! इस वंश का अन्य कोई आधार होता तो मैं कभी भी तुम्हारे व्रत को तोड़ने के लिए न कहता किन्तु अब देख रहा हूँ कि तुम्हें अपने इस व्रत को त्यागना ही होगा। यदि तुमने भी हमारी इच्छाओं

को ठुकरा दिया, तो शत्रु से अपने महाराज की हत्या का प्रतिशोध न ले सकेंगे।'

इस पर भी सुनन्दा की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

कुछ क्षण रुक कर पुन महर्षि कात्यायन बोले, बेटी ! ऐसी स्थिति में इस धर्म को त्यागना कोई पाप नहीं है। तुम मेरी ओर ही देखो। मैं भी अवकाश ग्रहण करने के अभिप्राय से कश्मीर चला गया था, किन्तु मगध साम्राज्य के चले जाने का समाचार सुन कर, मुझे धर्म का साथ छोड़ कर पुन शस्त्र को अपने हाथ में उठाना पड़ा है।

सुनन्दा अब अधिक देर चुप न रह सकी। उन्होंने कहा, 'ऋषिवर ! आप पूर्ण रूप से संन्यासी नहीं बन थे। आपने तो इस रूप को केवल प्राणों की रक्षा के लिए ही अपनाया था, किन्तु मैं इस धर्म का कई वर्षों से पालन करती आ रही हूँ। मैंने स्वर्गीय पिताश्री के कहने पर भी इसे नहीं छोड़ा था फिर अब मैं इसे कैसे छोड़ सकती हूँ।'

'समय बड़ा बलवान होता है, बेटी !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'वह मनुष्य से सब कुछ करा देता है।'

'क्या मुझे भी समय के अधीन रहना पड़ेगा ?' सुनन्दा का अन्त करण चीख उठा।

इस समय अधीनता का प्रश्न नहीं है, बेटी !' महर्षि कात्यायन बोले, अब तो नवनंद वंश को जीवित रखने का प्रश्न है।'

उसके जीवित अजीवित से मेरा क्या प्रयोजन, ऋषिवर ? सुनन्दा ने विरक्त भाव से कहा।

'प्रयोजन तो स्पष्ट है बेटी ! महर्षि कात्यायन ने कहा, 'अब तुम्हारे सिवा इस राज्य का कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है ? यदि तुमने भी इस ओर से मुख मोड़ लिया तो ।'

'तो क्या हो जाएगा ?' सुनन्दा ने पूछा।

'अनाधिकारी वंश सम्राट बन जाएगा।'

'बन जाने दीजिएगा।'

'ऐसा कदापि नहीं हो सकता। हमारे जीवित रहते हुए शत्रु के पग इस ओर कदापि नहीं आ सकते हैं, सुनन्दा !' लौहित्य नरेश बोले।

'आप जैसा उचित समझें, करें नानाजी !' सुनन्दा ने उत्तर दिया, 'मैं अब किसी से शत्रुता मोल लेना नहीं चाहती ।'

इसमें तुम्हारी शत्रुता क्या है, बेटी ! तुम्हारे नाम के पीछे हमारी शक्ति काम करेगी । इसलिए शत्रुता का पाप हमें लगेगा । तनिक इस बात को तो सोचो । इस वंश की अस्सी वर्ष की साख को अनाधिकारी मिटाने में लीन है । तुम्हारे स्वर्गीय पिताश्री ने मगध साम्राज्य का सम्पूर्ण भार मुझ पर छोड़ा था, किन्तु मैंने दो वर्ष का समय व्याकरण शास्त्र के सृजन में लगा दिया, जिसके कारण इतना प्राचीन वंश अराजकता की गोद में सोना चाहता है । बेटी ! तनिक मेरी वृद्धावस्था की ओर भी ध्यान दो । यदि तुमने अपना हठ नहीं छोड़ा, तो उस पर कलंक लग जाएगा ।' महर्षि कात्यायन ने सुनन्दा को समझाने का फिर प्रयास किया ।

'दादाजी !' सुनन्दा इस बार आत्मीयता के स्वर में बोली, 'आपकी मानसिक वेदना से मैं पूर्णतया परिचित हूँ । अब मैं नहीं चाहती कि आप को मेरे कारण और भी कष्ट पहुँचे । किन्तु मेरे लिए इस पथ से विचलित होना मृत्यु के समान है । अतः आप ऐसी कोई राह निकालें, जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे ।'

सुनन्दा के इन शब्दों ने महर्षि कात्यायन को असमंजस में डाल दिया । उन्हें स्वप्न में भी ऐसी आशा न थी कि सुनन्दा उन की बात को ठुकरा देगी । वे तो उसे पौत्री के समान ही समझते आए थे । कभी मगध नरेश धननंद ने भी उनकी बात को ठुकराने का दुस्साहस नहीं किया था, किन्तु आज उनकी गोदी में पली कन्या सारी आशाओं पर तुषारापात कर रही है ।

महर्षि कात्यायन को चिंतित देख कर सुनन्दा ने पूछा, 'किस सोच में पड़ गए दादाजी ।'

'सोच रहा हूँ बेटी !' महर्षि कात्यायन बोले, 'राजनीति का ऊँट किस करवट बैठता है ?'

आप इस विषय को लेकर इतने चिन्तित क्यों हो रहे हैं, नानाजी सुनन्दा ने कहा, 'मेरे स्थान पर चचेरे भाई सबननन्द को उत्तराधिका।

मानकर अपनी इच्छा की पूर्ति करें।'

सुनन्दा के मुख से सबलनन्द का नाम सुनकर महर्षि कात्यायन की बूढ़ी आँखें चमक उठीं। उन्होंने महाराज विशालाक्ष की ओर देखा।

महाराज विशालाक्ष ने महर्षि कात्यायन के आशय को समझते हुए कहा, 'आर्य ! जब बेटी सुनन्दा अपना हठ नहीं छोड़ना चाहती, तो कार्य-सिद्धि के लिए सबलनन्द को ही उत्तराधिकारी बनाना होगा।'

महाराज विशालाक्ष का समर्थन पाकर महर्षि कात्यायन बोले, 'अच्छा, बेटी ! तेरी इच्छा। किन्तु इन सब बातों को गोपनीय रखना होगा।'

'मेरी ओर से आप निश्चिन्त रहिए दादाजी !' सुनन्दा ने उठते हुए कहा। फिर वे अपनी सखी के साथ आश्रम में लौट गई।

पचास

लौहित्य नरेश विशालाक्ष अपने वार्ता कक्ष में बैठे हुए किसी समस्या का समाधान खोज रहे थे। उनके समीप ही महर्षि कात्यायन और भद्रशाल सोच की मुद्रा में बैठे थे। तभी महर्षि कात्यायन ने निस्तब्धता को भंग करते हुए कहा 'महाराज ! उत्तराधिकारी के रूप में सबलनंद वैसे तो ठीक ही है, किन्तु उन्हें रणकौशल की शिक्षा को पूर्णतया ग्रहण करना होगा।

आपने ठीक कहा है। वह अब तक इस कौशल से विमुख ही रहा है।' महाराज विशालाक्ष ने कहा 'इसका कारण यही था कि उसे इस जीवन में सम्राट् बनने की आशा न थी।'

अब तो बिल्ली के भागों छींका टूट गया है महाराज !' महासेनापति भद्रशाल ने हँसते हुए कहा। इतने में ही द्वारपाल ने राजसी अभिवादन करते हुए कहा कुमार पधारे हैं, अन्नदाता !'

'उन्हें सम्मानपूर्वक यहाँ ले आओ'—महाराज विशालाक्ष ने आदेश दिया।

महाराज का आदेश पाकर द्वारपाल कुमार को लेने चला गया।

कुछ ही देर बाद कुमार द्वारपाल के साथ उनके पास पहुँचे और सब को अभिवादन करके खड़े हो गए।

'आओ, वत्स ! यहां बैठो।' महाराज विशालाक्ष ने कुमार को अपने पास बैठाते हुए कहा।

महर्षि कात्यायन की बूढ़ी आँखों ने सामने बैठे हुए चौबीस वर्षीय बलिष्ठ नवयुवक का निरीक्षण किया। उसके मुख मण्डल पर विशेष आभा थी। कुछ क्षण के बाद बोले, 'कुमार ! नंद वंश की शोचनीय स्थिति तो तुमसे छिपी हुई नहीं है।'

'हाँ देव !' कुमार ने कहा, 'मैं उससे भलीभाँति परिचित हूँ। उसकी हीनावस्था के कारण मुख उठाते हुए भी लज्जा का आभास होता है।'

'तुम्हारा कथन सत्य है, कुमार ! घायल की गति घायल ही जान सकता है। तुम्हारे समान हम भी मगध साम्राज्य का अध:पतन देख कर दु:खी हैं।

'जानता हूँ, देव ! स्वर्गीय चाचाजी का आप पर पूर्ण विश्वास था। सम्पूर्ण साम्राज्य की बागडोर आपके हाथ में रहती थी। यह बात भी मुझसे छिपी हुई नहीं है कि आपकी अनुपस्थिति के कारण ही साम्राज्य की ऐसी दशा हुई है।' कुमार ने गम्भीर होकर कहा, 'यदि आपका अवकाश के लिए प्रस्थान न होता, तो मौर्य कुमार की क्या ताकत थी कि वह इस ओर आँख उठाकर भी देखता। किन्तु विधाता को तो कुछ और ही स्वीकार था।'

'वत्स ! अब तो हम उस कालिख को धोना चाहते हैं।' महर्षि कात्यायन ने कुमार की आन्तरिक वेदना को महसूस करते हुए कहा, 'इसीलिए हम सब मिलकर शत्रु से प्रतिशोध लेना चाहते हैं।

'इसके लिए मुझे क्या आज्ञा है, देव !' कुमार ने कहा।

कुमार की बात का उत्तर महर्षि कात्यायन तो न दे सके, किन्तु महाराज विशालाक्ष ने कहा, 'अब तुम्हें इस साम्राज्य का उत्तराधिकारी

बनना होगा, कुमार !'

'नानाजी ! इस उच्च पद के लिए मैंने स्वप्न म भी विचार नहीं किया था।' कुमार बोले मेरे लिए तो यह सब कुछ विचित्र सा लग रहा है। क्या मैं इस विशाल पद की गरिमा को सम्भालने मे सक्षम हू ?'

'वत्स ! विवशता का ही दूसरा नाम सन्तोष है।' महाराज विशालाक्ष ने लम्बी साँस भरते हुए कहा 'सक्षमता या अक्षमता को विचारने की घडी नही रही। अब तो इस गुरु पद को सम्भालना ही होगा। हम लोग तुम्हारे साथ हैं।'

'महासेनापति जी ! आप भी कुछ कहिए।' कुमार ने भद्रशाल को सम्बोधित कर कहा।

कुमार ! मैंने जीवन मे सघर्ष को ही अपना सच्चा साथी माना है।' भद्रशाल ने कहा, 'अब पुन इस साम्राज्य को हस्तगत करने के लिए युद्ध करना होगा। इसके लिए हम सक्षम हैं। हमारे पास विशाल सेना है। आप इस पद की गरिमा को रख सकेंगे ऐसा हम सबका विश्वास है।

'मैं अपना सवस्व आपकी सेवा म अर्पित करता हूँ।' कुमार ने महासेनापति भद्रशाल की बात सुनकर कहा।

वत्स ! हम तुम्हारे से ऐसी ही आशा थी।' महाराज विशालाक्ष ने हर्षित स्वर मे कहा।

क्या मैं सै य शक्ति के विषय मे कुछ जान सकता हूँ ? कुमार ने पूछा।

'क्यो नही कुमार !' महर्षि कात्यायन बोले, मौय कुमार ने आय चाणक्य की सहायता से पदातियो, रथो अश्वारोहियो और हाथी आदि की सैन्य शक्ति हमारी पहली मगध की सैन्य शक्ति के समान ही तयार की है। इस समय हमारी सै य शक्ति मौयकुमार की स य शक्ति की तीन चौथाई है। उसकी सहायता स हम बग पर आकस्मिक आक्रमण करके मौय शक्ति को वहाँ स क्षीण कर सकते हैं। ऐसा हो जाने से हमारे पास धन और बल दोनो हो जाएँगे। तत्पश्चात हम नेपाल कलिंग और रीवा को भी अपन अधीन करने म सक्षम होंगे। इन देशो क आ जान से हमारी सैन्य शक्ति मौय कुमार की सैन्य शक्ति से बढ जाएगी।'

'देव ! मुझे रण कौशल की शिक्षा भी दिलानी होगी ।' कुमार ने कुछ सोच कर कहा ।

अवश्य, कुमार ! किन्तु यहाँ का वार्तालाप हम चारों के बीच ही रहना चाहिए ।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'अन्यथा सफलता हमारे से कोसों दूर चली जाएगी ।'

नानाजी ! सैन्य संगठन का स्थान निर्धारित कीजिए ।' कुमार ने फिर कहा ।

कुमार का कथन उचित लगा । उसे सुनकर महाराज विशालाक्ष बोले, 'मेरा प्रदेश पहाड़ी है । इसलिए यहा पर पच्चीस सहस्र सैनिक एकत्रित करने के लिए कई स्थान सुगमता से मिल सकते हैं । उन स्थानों का यातायात बंद कर दिया जाएगा ताकि बाहरी लोग वहाँ तक न पहुँच सकें । इससे शत्रु भी अनजान बना रह सकेगा ।'

महाराज विशालाक्ष के कथन को सुनकर महासेनापति भद्रशाल ने कहा महर्षि कात्यायन और मैं इसी प्रकार गुप्त जीवन व्यतीत करेंगे, महाराज ! कुमार आपके आतिथ्य में रहकर सब काम कर सकेंगे ।'

ऐसा ही होगा महासेनापति ।'

महाराज विशालाक्ष की बात को सुनकर महर्षि कात्यायन ने विचार प्रगट किए, 'इधर सैन्य संगठन का कार्य यथाशीघ्र होना चाहिए, उधर भद्रशाल कुमार को रण-कौशल में निपुण करें ।'

यदि इसी कार्यक्रम पर चला गया, तो कुछ ही वर्षों में मगध साम्राज्य पर पुनः हमारा अधिकार हो जाएगा ।' महाराज विशालाक्ष ने कहा ।

इसके बाद महाराज की अनुमति से यह बैठक विसर्जित की गई ।

सब लोग अपने अपने स्थानों को चले गए । अगले ही दिन से योजना के अनुसार कार्य होने लग गया । कुमार मवलनंद रण कौशल की यथाविधि शिक्षा ग्रहण करने लग गए ।

समय का चक्र चलता रहा ।

और महर्षि कात्यायन स्वप्न में ही विजय की धूमिल रेखा देखने लग गए ।

इकयावन

'महर्षि जी ! सामने देखिए कुमार कितने प्रयास से रण कौशल की कमी को पूर्ण कर रहे हैं ?' महाराज विशालाक्ष ने कुमार सबलनद की ओर संकेत करते हुए कहा।

'महाराज ! मैं भी इनके पूर्ण उत्साह को देख रहा हूँ। यह तो कितने सौभाग्य की बात है, जो इतना अच्छा उत्तराधिकारी बिना प्रयास के ही मिल गया। मेरे विचार में राजकुमारी कमलाक्षी के लिए इससे योग्य वर कहीं नहीं मिल सकेगा।'

'आपका कथन सत्य है, ऋषिवर !' महाराज विशालाक्ष ने कहा, 'हम भी कुमार की योग्यता नम्रता और कार्यकुशलता पर मुग्ध हैं, किंतु अपने मुख से इस सम्बन्ध के लिए कुछ कह नहीं सकते।'

'अच्छा तो यह रहेगा, महाराज ! कुमार और कमलाक्षी का एक-दूसरे के प्रति अनुराग बढ़े।'

'पर यह कैसे सम्भव हो सकता है ?'

'दोनों का एक साथ ही शिक्षण का प्रबन्ध कर दीजिए।' महर्षि कात्यायन ने परामर्श दिया, इस तरह दोनों को एक दूसरे को समझने का अवसर मिलेगा। अनुराग बढ़ेगा और आपकी पौत्री के विवाह की समस्या भी हल हो जाएगी।'

अभी महर्षि कात्यायन कमलाक्षी के विषय में कह ही रहे थे कि वह सामने से आती हुई दिखाई दी। उन्होंने इस समय कुमार से उसका परिचय कराना उचित समझा।

इनसे कुछ दूरी पर कुमार सबलनद महासेनापति भद्रशाल से रण कौशल की शिक्षा ले रहे थे। उनका ध्यान इस ओर नहीं था। वे अपनी धुन में लीन थे।

तभी कुमार को महाराज विशालाक्ष का संदेश मिला। वे अभ्यास को छोड़ कर तत्काल संदेशवाहक के साथ उस स्थान पर पहुँच गए, जहाँ पर महाराज विशालाक्ष, कमलाक्षी और महर्षि कात्यायन खड़े थे।

कुमार सबलनंद ने महाराज को अभिवादन किया और चोरी-चोरी उन्नीस वर्षीया सुन्दरी के रूप-लावण्य का रसास्वादन करने लगा।

कुमार को लौहित्य नरेश के आतिथ्य मे रहते हुए काफी दिन बीत गए थे, किन्तु आज से पूर्व उसने इस कमलाक्षी को कभी नही देखा था। उसके नेत्र इस गौर वर्ण सुडौल युवती के अंगो का निरीक्षण कर रहे थे। उसका मन इस सुन्दरी का परिचय पाने के लिए आतुर हो उठा था। परन्तु स्वयं पूछने मे वह लज्जा का अनुभव कर रहा था। तभी लौहित्य नरेश ने शांति को भंग करते हुए कहा, 'कुमार ! यह हमारी पौत्री कमलाक्षी है। हम चाहते हैं कि यह भी तुम्हारे साथ रह अस्त्र शस्त्र संचालन सीखे।'

'यह तो मेरा अहोभाग्य है, महाराज !'

कुमार की बात सुन कर महाराज विशालाक्ष गदगद हो उठे। उन्होंने कमलाक्षी को कुमार के साथ प्रमद वन मे घूमने की अनुमति दे दी।

उधर कमलाक्षी भी इतने अल्प परिचय से ही कुमार सबलनंद पर मुग्ध हो गई थी। उसकी इच्छा भी कुमार को और अधिक जानने की थी, किन्तु नारी स्वभाव और लज्जावश वह अपनी इच्छा को पितामह के सामने प्रगट नही कर सकती थी। इस समय उसे बिना मांगे ही एकांत मे घूमने की अनुमति मिल गई थी। इस कारण से उसकी हृदय कली खिल उठी थी। उसका मन मयूर नृत्य कर उठा था। वह कुमार को लेकर प्रमद-वन म पहुँची। यह लौहित्य नरेश ने अपने परिवार के भ्रमण हेतु बनवाया था। उसमे हर प्रकार के फल फूलादि के वृक्ष थे। उसके अन्दर कितने ही सुंदर कुंज बने हुए थे। छोटे छोटे जलाशयो मे हंस दम्पती तैर रहे थे। रंग बिरंगी मछलियाँ जल की तरंगो से क्रीडा कर रही थी।

कुमार की दृष्टि सुंदर मछलियो की क्रीडा में उलझ कर रह गई।

कुमार का मछलियो म खोया हुआ देखकर कमलाक्षी ने धीरे से उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'कहा खो गए ?'

कुमार सबलनंद को स्वप्न मे भी आशा न थी कि सुन्दरी कमलाक्षी इतनी शीघ्र खुल जायगी। वह तो स्वयं ही उससे बातें करने की युक्ति सोच रहा था। कमलाक्षी के इन शब्दो ने उसकी दुविधा को दूर कर दिया। उसने उसके कोमल हाथो को अपने हाथो मे लेते हुए कहा, 'काश !

इतनी सुन्दर मछलियाँ मेरे मन सरोवर मे भी विलोलें किया करती ।'

'अच्छा तो आप कवि भी हैं ।' कमलाक्षी ने कहा, 'इस बात का पता तो अभी चला कि तलवार का धनी कलम को भी पकड सकता है ।'

'क्यो नही । वैसे इन दोनो का क्षेत्र तो भिन्न भिन्न है न ।'

'मैं आपका आशय नही समझी, कवि महोदय !'

'एक का क्षेत्र कर है तो दूसरी का क्षेत्र मन ।'

'तुलना तो अत्युत्तम है ।' इतना कहकर कमलाक्षी अट्टहास कर उठी।

इस अट्टहास मे कुमार ने भी उसका साथ दिया ।

सुरभि घुल बयार बह रही थी । दोनो उसका रसास्वादन करते हुए बढे जा रहे थे । इतने थोडे समय के मिलन मे ही वे एक दूसरे के समीप पहुँच गए थे । दोनो का अगाध स्नेह नेत्रो की भाषा पढता हुआ बढता जा रहा था । और जिह्वा मूक बनी हुई थी इस प्रणय गाथा मे ।

तभी कुमार ने एक कुज के समीप सगमरमर के सुन्दर चबूतरे पर बैठते हुए कहा, 'क्या मैं कुछ निवेदन कर सकता हूँ ?'

कमलाक्षी ने मादक नेत्रो से कुमार की ओर देखा । मानो उसके कण कुमार का निवेदन सुनने के लिए व्याकुल हो रहे थे ।

'क्या आप मेरा प्रणय स्वीकार करेंगी ?' कुमार के मुख से निकल गया ।

कमलाक्षी इतनी देर से इसी को सुनने के लिए आतुर थी, पर वह नारी सुलभ स्वभाव के कारण यह प्रस्ताव स्वय कुमार के सामने नही रख सकी थी । उसने आन्तरिक आह्लाद को छिपाते हुए कहा, यदि ऐसा मेरा सौभाग्य हो जाए तो ।'

'सच, देवि !'

हा कुमार !' कमलाक्षी ने निसकोच कहा, 'इसके विषय मे पिता-मह से बात करनी होगी ।

इसके पूर्व आपकी सम्मति भी तो जाननी आवश्यक थी ।'

वह तो अब मिल चुकी है कुमार !' कमलाक्षी इतना ही कह पायी थी कि उसकी प्रिय सखी वहाँ पर पहुच गई । उसे देख कर भेद खुल जाने की आशका से वह सकुचा गई ।

कमलाक्षी को सकुचाते हुए देख कर सखी ने कुमार से पूछा, 'कुमार जी ! आज तो बहुत देर तक बातें होती रही हैं।'

'हां।'

'क्या मैं भी जान सकती हूं ?'

'क्यो नही ?'

'तो बताइए !'

'आपकी प्रिय सखी शस्त्र और शास्त्र म तुलना पूछ रही थी ।'

'तो आपने तुलना कर दी।'

'हां, जितनी आवश्यक समझी।'

'इसस क्या मेरी प्यारी सखी की सतुष्टि हो गई ?'

इस विषय मे तो आपकी सखी ही बतला सकती हैं।'

तभी एक सदेशवाहक ने एक पत्र कुमार के हाथ मे दे दिया और उत्तर की प्रतीक्षा मे थाडी दूर पर खडा हा गया।

कुमार ने पत्र पढा और सदेशवाहक से बोला अभी चलता हूँ।'

इतना कह कर कुमार न कमलाक्षी स जान की अनुमति मांगी। वह उस मिल गई।

कुमार सदेशवाहक के साथ चला गया।

उसके जाने के बाद कमलाक्षी भी अपनी प्रिय सखी के साथ अ त पुर की ओर लौट गई।

उधर कुमार जब महर्षि कात्यायन के पास पहुँचा, तो वे अध्ययन म लीन थे। कुमार को देखते ही उन्होने ग्रथ को बद करके एक ओर रख दिया और उसे अपने समीप ही बैठाते हुए बोले 'कुमार ! किसी प्रकार की यहाँ असुविधा तो नही है।'

'आपकी महती कृपा के होत हुए मुझे क्या असुविधा हो सकती है, ऋषिवर !' कुमार ने हर्षित स्वर मे कहा, 'पर तु मेरा आपसे एक निवेदन और है।

'शीघ्र कहो, वत्स !' महर्षि कात्यायन न कहा।

'मेरा विचार है कि मगध पर आक्रमण से पूव विवाह ।'

कुमार पूरी बात भी न कह पाए थे कि महर्षि कात्यायन ने पूछ लिया,

'क्या कमलाक्षी इसके लिए तैयार है ?'

महर्षि कात्यायन के शब्द सुन कर कुमार की वही दशा हुई जो किसी चोर की थानेदार के सामने चोरी का माल पकड़े जाने पर हुआ करती है। उसने उत्साहित होकर कहा, 'ऋषिवर ! वे सहमत हैं, किन्तु पिता मह की अनुमति से ही विवाह करना चाहती हैं। अतः आप मेरी ओर से महाराज से निवेदन करें।'

'अविलम्ब था, कुमार !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'भावी मगध नरेश की खुशी मे ही हमारी खुशी है।'

इतना कह कर महर्षि कात्यायन ने एक पत्र महाराज के नाम लिखा और विश्वस्त कर्मचारी के द्वारा पहुँचवा दिया।

महर्षि कात्यायन का पत्र पढ़ कर लौहित्य नरेश अति प्रसन्न हुए और तत्काल ही महर्षि कात्यायन के दर्शनार्थ उनके स्थान पर पहुच गए। वहीं पर कुमार को उपस्थित देख कर उन्होंने कहा, 'वत्स ! हम तुम्हारे निर्वाचन से सतुष्ट है और आज रात्रि को ही इस भार को अपने कधों से हल्का करना चाहते हैं।'

इतना कह कर महाराज ने अपने सेवकों को विवाह की तैयारियाँ करने का आदेश दे दिया।

आदेश मिलते ही लौहित्य दुर्ग दीप मालाओं मे जगमगा उठा।

शहनाइयां बजने लगी।

मगल गान की ध्वनि गुजित हो गई।

सुन्दरी कमलाक्षी की कोमल देह रत्नालकारो से जकड़ दी गई। उन बहुमूल्य अलकारों से उसका सौंदर्य द्विगुणित हो उठा।

विवाह मण्डप फूलो से सजाया गया।

महर्षि कात्यायन ने कुमार और कमलाक्षी का विवाह संस्कार कराया।

आत्मीयजनो न इस युगल को अपने आशीर्वाद से विभूषित किया।

इसके बाद मधुर यामिनी ने इस दम्पती को अपने आवरण मे ढक लिया।

'कौन ? देवी सुनन्दा !'

चन्द्रगुप्त मौर्य ने पाटलिपुत्र के राज प्रासाद के एक भाग में देवी सुनन्दा को देख कर कहा।

'हाँ, आर्य ! मैं ही अभागी अपनी हीनावस्था को भुलाने के लिए यहाँ चली आई थी।'

'ऐसा न कहो, देवी ! मुझ पापी ने ही आपके हृदय में अशांति की ज्वाला जलायी है और इस तरह भटकने के लिए इस मायावी जगत् में छोड़ दिया है।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने दुःखी मन से कहा, 'काश ! मेरे हाथों आपके पिताश्री का अमंगल न होता।'

'इसमें आपका क्या दोष है, आर्य ?' सुनन्दा ने कहा 'यह तो भाग्य का खेल है। जो कोई किसी का अहित चाहता है, तो प्रभु उसका अहित पहले कर देते हैं ? पिताश्री ने मदान्ध होकर आपके राज्य को छीन कर मृत्यु की गोद में सुलाना चाहा, किन्तु उसका परिणाम बिल्कुल ही विपरीत निकला। यदि वे ऐसा कदम न उठाते, तो उनका कुछ भी नहीं बिगड़ता।'

आपके विचार तो बहुत ही उच्च हैं, देवी ! फिर भी मैं अपने कृत्य की क्षमा माँगता हूँ।'

'आर्य ! यदि आप क्षमा को ही जीवन का मूल समझ बैठे हैं, तो यह मैं सहर्ष देती हूँ।'

सच !' कह कर चन्द्रगुप्त मौर्य ने सुनन्दा के करों को पकड़ने का प्रयास किया।

'आर्य ! भावावेश में न आइए। सुनन्दा ने पीछे हटते हुए कहा। 'अब मैं राजकुमारी सुनन्दा नहीं ! मुझ योगिनी के प्रति ऐसा कोई कृत्य न कीजिए, जिससे मेरे धर्म पर आघात पहुँचे।

'आघात !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने दुहराया, देवी ! आपको मेरे प्रति मिथ्या भ्रम है। जब आपने मुझे क्षमा दान दे ही दिया है तो सम्राज्ञी पद

के सम्भालने की स्वीकृति दे दीजिए।'

आर्य! आपकी सुनन्दा अब जगतमाता बन चुकी है। उसके प्रति ऐसी बातें अशोभनीय हैं।'

सुनन्दा के इन शब्दों ने चन्द्रगुप्त को सोच में डाल दिया। इससे पूर्व उन्हें विश्वास था कि वे भेंट होने पर योगिनी सुनन्दा को सम्राज्ञी पद सम्भालने के लिए सहमत कर लेंगे, किन्तु आज की बातों ने उस आशा को जला कर राख कर दिया। अन्त में सोच कर बोले, 'देवी! इस पद को सम्भालो अथवा न सम्भालो, किन्तु साम्राज्य का भार आज से ही आपको उठाना होगा। मैं इन झंझटों से मुक्ति चाहता हूँ।'

'मैं दूसरे की वस्तु नहीं सम्भाल सकती, आर्य!'

'दूसरे की! यह आप क्या कह रही हैं?'

'यह सब कुछ तो आपके ही प्रभुत्व का है।'

'ऐसा असत्य भाषण आर्य को शोभा नहीं देता।' सुनन्दा ने कहा, 'यह प्रभु सत्ता आपकी है। आप ही इसके स्वामी हैं और आपके ही द्वारा पाटलिपुत्र की जनता का कल्याण हो सकता है।'

देवी! आप साम्राज्य को त्याग रही हैं तो उसके लिए मैं विवश नहीं करूँगा किन्तु मेरी प्रेम की भिक्षा...।

'आर्य! प्रेम के स्थान पर माता सुनन्दा आपको वात्सल्य की भिक्षा दे सकती है।' कहते कहते सुनन्दा का स्वर तीव्र हो उठा।

चन्द्रगुप्त मौर्य इससे आगे कुछ न कह सके।

इसी बीच सन्ध्या अपने परिधानों सहित सृष्टि के सिंहासन पर विराजमान हो गई।

दीप दान जल उठे।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने वक्ष की छत की ओर निहारा। कदाचित् वे सुनन्दा को आकर्षित करने के लिए कोई युक्ति सोच रहे हों? कुछ देर बाद बोले, 'देवी! मेरी छोटी सी भूल का इतना कठोर दण्ड। मैं तुम्हारे बिना सुखी नहीं रह सकूँगा।'

इतना कह कर उनकी आँखें भर आईं।

आर्य की आँखों में आँसू! सुनन्दा ने कहा, 'ये तो अबला के हृदय

की शोभा हैं। इन्हें आप अपनी शोभा मत बनाइए वरना प्रलय आ जाएगी।'

मेरी प्रीति अटूट है सुनन्दा ! इसका सम्बन्ध अब भी तुमसे है।'

मैं इसका सम्मान करती हूँ आर्य !' सुनन्दा ने कहा, इसी प्रीति के पीछे मैंने यवन देश की यात्रा की। आपके कल्याण के लिए मैंने हेलेन के आगे प्रीति का आंचल पसारा। राजकुमारी दुधरा की प्रेम ग्रंथि को जोड़ कर स्वयं का अपमानित किया। आपके हित साधन के लिए पिताश्री के शत्रु शकटार और गुरुदेव चाणक्य के प्रति प्रेम का भाव दर्शाया। इस पर भी आप संतुष्ट नहीं ।'

'ऐसा कृतघ्न मत समझो देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'आपकी महत्ता और अगाध श्रद्धा के लिए मुक्त कंठ से धन्यवाद करता हूँ, किन्तु आप अपने मार्ग को त्याग कर मेरा निवेदन स्वीकार कर लें।'

'ऐसा कदापि नहीं हो सकता आर्य !' सुनन्दा ने कहा, 'एक माता अपने पुत्र से कदापि वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित नहीं करती।'

'ये विचार मिथ्या हैं, देवी। चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, आप मेरी जन्मदायिनी नहीं।'

'केवल जन्म देने वाली ही माता नहीं कहलाती, आर्य !'

'तो फिर !'

कोई योगिनी भी मातृत्व का ही स्नेह दे सकती है। फिर आप उस उस स्नेह को क्यों ठुकराते हैं ?

'ठुकराया नहीं अपितु सहधर्मिणी प्रेम की भिक्षा माँगी है।'

'यह भिक्षा इस जीवन में तो नहीं मिल सकेगी।'

'तो यह अन्याय होगा, देवी !'

'मैं इस अन्याय का सामना करूँगी।

इस तरह आप अपनी आकांक्षाओं का खून कर रही हैं।'

इन्हीं आकांक्षाओं की बलिवेदी पर जनहित का प्रासाद खड़ा हुआ है। उसकी रक्षा के लिए मेरे रक्त की एक एक बूंद न्योछावर है।

'यदि मगध सम्राट जबरदस्ती पर उतर आया तो ।'

'वह इतना भ्रष्ट और दुराचारी नहीं हो सकता।'

'एक सम्राट् के लिए सब कुछ ।'

'बस बस, मैं और कुछ सुनना नहीं चाहती, आर्य !' सुनन्दा ने क्षुब्ध होकर कहा, 'अब आप इस हठधर्मी को त्याग कर मन को किसी दूसरी ओर केन्द्रित कीजिए ।'

आप ही अपनी हठधर्मी को त्याग दें ।'

इस समय मेरे हठ त्यागने से समाज मुझ पर थूकेगा ।' सुनन्दा ने कहा मैं पाप की भागिन बन कर जीवित नहीं रह सकूंगी ।'

'देवी ! यह कोरा भ्रम है ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'समाज सम्राट के आगे सिर नहीं उठा सकता है ।'

आप जैसे आर्यपुत्र को यह बात शोभा नहीं देती ।' सुनन्दा ने कहा, 'आपकी सर्वत्र निन्दा होगी ।'

मैं अपने सात्विक प्रेम के लिए लोक निन्दा को सहन कर सकता हूँ ।'

पर मैं आपको इस पंक सरोवर में नहीं धकेल सकती ।' सुनन्दा ने दृढ़ स्वर में कहा, 'फिर भी आपके हठ को देखते हुए मैं आपसे आत्मीय सम्बन्ध अवश्य रखूंगी, किन्तु यह सम्बन्ध मन तक ही केन्द्रित रहेगा, शारीरिक नहीं ।'

इससे आपकी मुक्ति न हो सकेगी देवी !

'इसकी आप चिन्ता न करें, आर्य ! मेरी मुक्ति मेरे हृदय से ही जाएगी ।'

'अच्छा मेरी अंतिम विनती तो मान लीजिए ।'

मानने योग्य हुई तो अवश्य मानूंगी, आर्य ! सुनन्दा ने कहा 'आप उसे कहने का कष्ट करें ।

'देवी ! आप ऐसे स्थान पर रहें, जहां मैं नित्य प्रातः आपके दर्शन कर सकूं ।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने विनम्रता के साथ कहा, 'यदि कहीं पर जाना आवश्यक हो जाए तो वहां अनुचरों को लेकर जाया करें ।'

आर्य ! एक योगिनी के लिए यह भी अनुचित है । सुनन्दा ने कहा, फिर भी मैं इसे अस्वीकार करके आपको और दुःखी नहीं करना चाहती । अब आपको भी मेरी एक बात माननी होगी ।'

'अवश्य, देवी !'

हेलेन कई वर्षों से आपकी स्मृति की घड़ियाँ गिन रही है।' सुनन्दा ने कहा, फिर आपके जीवन पर उसका अधिकार भी है।'

'मानता हूँ, देवी ! यदि वह सहायता न करती, तो मैं जीवित अपने देश नहीं लौट सकता था।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, पर अब मैं विवाहित हूँ। एक विदेशी ललना इस स्थिति को स्वीकार नहीं करेगी।'

आर्य ! शास्त्रों के अनुसार सम्राट कितने ही विवाह रचा सकता है।' सुनन्दा ने कहा 'हमारे पूर्वज राजा दशरथ के भी तीन रानियाँ थीं। धनुर्धारी अर्जुन ने भी कई विवाह किए थे। महाराज धृतराष्ट्र और योगीराज कृष्ण के दृष्टान्त भी आप के समक्ष हैं। अब रही विदेशी ललना हेलेन की बात। वह मुझ पर छोड़िए ।'

'गुरुदेव भी ऐसा ही चाहते हैं।'

'तब तो सोने में सुहागा है, आर्य !' सुनन्दा ने कहा, 'अब आज्ञा दीजिए।

'एक बात और है, देवी !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

'पूछिए !'

'कल ही गुरुदेव ने मुझे बताया है कि महर्षि कात्यायन लौहित्य नगर में छद्म वेष में रह रहे हैं और आप भी वहीं से लौट कर आ रही हैं। क्या आपने उन्हें वहाँ देखा था ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने इतना कह कर सुनन्दा के चेहरे के भावों को पढ़ने का प्रयास किया।

सुनन्दा को ऐसे प्रश्न की सम्भावना नहीं थी। उसे सुन कर वह कुछ घबड़ा सी गई। उसके सुन्दर और तेज युक्त चेहरे पर पसीने की बूँदें चमक आईं। उसने पसीना अपने आँचल से पोंछ कर और आन्तरिक भावों को छिपाते हुए कहा, 'आर्य ! मुझ योगिनी से राजनैतिक विषय पर विवाद न करें।'

जमी आपकी इच्छा !' चन्द्रगुप्त मौर्य इतना कह कर चुप हो गए और गुरुदेव से भेंट की तैयारी करने लग गए। सुनन्दा अपनी सखी के साथ राज प्रासाद से चली गई।

त्रेपन

लोहित्य नगर मे नद सेना एकत्रित हो गई। उस सेना की सख्या एक लाख तक पहुँच [गई थी। सैनिको म विशेष उत्साह था। उनके चेहरे उल्लास से दमक रहे थे। महासेनापति भद्रशाल ने अपनी सेना का एक बार निरीक्षण किया। सभी की भुजाएँ प्रतिशोध के लिए बेचन थी। तभी भद्रशाल का स्वर उभरा, 'अब समय आ गया है प्रतिशोध लेने का साथियो! अपने अपमान का बदला लेने के लिए भवानी मा पुकार रही है। उनका आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।'

इसके साथ ही कूच का आदेश हुआ।

'हर हर महादेव!' उद्घोष के साथ ही महासेनापति भद्रशाल उस विशाल सना का लेकर बग की ओर बढे।

बग मे मौर्य सेना निश्चिन्त थी। उन्हे किसी आक्रमण की आशा न थी। इस विशाल सना को देख कर घबरा उठी। फिर उसने शत्रु की सेना का डट कर मुकाबला किया। दोनो के बीच घमासान युद्ध हुआ।

इस युद्ध मे महासनापति भद्रशाल को विजय हाथ लगी। वहाँ के दुग पर नद वश की पताका फहरा दी गई। इस विजय स नद वश की सेना का उत्साह बढ गया।

तत्पश्चात महर्षि कात्यायन न अपने सधि विग्रहिक के द्वारा आगल देश का भी अपन अधीन कर लिया। फिर कलिग राज्य मे अपना आधिपत्य जमाने क अभिप्राय स उन्होन महासेनापति भद्रशाल को राजदूत बना कर वहाँ भेजा।

कलिग की राजधानी म राजदूत भद्रशाल का महाराज महाबल की ओर से भव्य स्वागत हुआ। वे उन्हें अपन साथ ही अन्तपुर म ले गए। वहाँ पर यथोचित आवभगत के बाद महाराज महाबेल न कहा, भद्रशाल जी! हम यह सुन कर अति प्रसन्नता हुई कि महर्षि कात्यायन न अपनी बुद्धिमत्ता से बग को पराजित कर दिया। अब भविष्य क लिए क्या आदेश है, स्पष्ट करें?

'देव !' भद्रशाल बोले, 'यह सब आपकी कृपा का फल है। वर इस समय हमारे पास सवा लाख सैनिक हैं। पाटलिपुत्र विजय के लिए यह संख्या थोड़ी पड़ रही है। दूसरे हमें उसके लिए दुगुनी सेना की आवश्यकता है। हमारी तो भवानी से यही प्रार्थना है कि वह हमारे महाराज के प्रण को पूरा करे। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए महर्षि कात्यायन ने आपके पास भेजा है।'

'आपके महाराज ने क्या प्रण लिया है ?' महाराज महाबेल ने पूछा।

'देव ! हमारे महाराज ने प्रण लिया है कि जब तक भूतपूर्व महाराज धननंद की हत्या का प्रतिशोध और उनका पूर्ण साम्राज्य नहीं ले लेंगे, तब तक शांति से नहीं बैठेंगे।' भद्रशाल ने कहा।

'महासेनापति !' महाराज महाबेल बोले, 'क्या आप हमारी और अपनी शक्ति के बल पर पाटलिपुत्र पर विजय पा सकते हैं ?'

'मेरा विचार तो ऐसा ही है, देव !' भद्रशाल ने उत्तर दिया।

'महासेनापति ! इस सहायता के उपलक्ष्य में हमें क्या मिलेगा ?' महाराज महाबेल ने पूछा 'इस पर भी कुछ प्रकाश डालिए।'

देव ! आपका हित तो स्पष्ट है।' भद्रशाल बोले 'दक्षिणात्य शत्रुओं पर विजय पाने के लिए हमारी ओर से पूरी सहायता मिलेगी।

'ठीक है !' महाराज महाबल ने कहा, 'आपके महाराज के प्रण को पूरा करने के लिए हम पचास सहस्र सैनिक दे सकते हैं, महासेनापति !

देव ! इस सहायता के लिए मैं महाराज सर्वानंद, महर्षि कात्यायन और अपनी ओर से धन्यवाद करता हूँ।' भद्रशाल ने प्रसन्न होकर कहा, 'अब हमारी विजय निश्चित है।'

प्रभु आपकी मनोकामना शीघ्र पूर्ण करें।' महाराज महाबेल ने कहा।

इस वार्ता के बाद महाराज महाबेल ने भद्रशाल को इक्कीस जोड़े वस्त्र अश्व और 500 दीनारों की भेंट देकर सम्मान सहित विदा किया।

भद्रशाल प्रसन्न मुद्रा में लौहित्य देश पहुँचे और बिना विश्राम किए ही सुखद समाचार महर्षि कात्यायन तथा अन्यों को सुनाया।

इस सुखद समाचार को सुनकर सबके चेहरे खिल उठे। उन्हें पाटलि-

पुत्र विजय की पूर्ण आशा बंध गई।

'महासेनापति !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'जांगल नरेश ने भी पच्चीस सहस्र सैनिक देने का वचन दिया है। अब इन दोनों नरेशों की सहायता से वह दिन दूर नहीं जबकि पाटलिपुत्र के दुर्ग पर हमारी विजय पताका फहरायेगी। मौर्य कुमार और महामात्य चाणक्य को उनके कर्मों का दण्ड मिलेगा।'

'हाँ, ऋषिवर !' भद्रशाल ने कहा, 'मैं भी आपके विचारों से पूर्णतया सहमत हूँ। ऐसा होने पर ही लौहित्य नरेश विशालाक्ष के हृदय में शान्ति आ सकती है, अन्यथा वे बेचारे व्यथा की ज्वाला में ही झुलसते रहेंगे।'

'अब देर किस बात की है, महासेनापति !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'अभी से युद्ध की तैयारी करो।'

'जो आज्ञा !' कह कर महासेनापति भद्रशाल सेना निरीक्षण के लिए चले गए।

लौहित्य देश उस रात्रि को घृत दीपकों के प्रकाश से जगमगा उठा।

बंग विजय का विजयोत्सव मनाया गया।

वाद्यों से सम्पूर्ण लौहित्य देश गूंज उठा।

लौहित्य नरेश ने सब कुछ देखा-सुना और उनका चेहरा खुशी से दमक उठा। अब वे पाटलिपुत्र पर पुनः नंद वंश की पताका फहरा कर महाराज धननंद की आत्मा को शांति पहुँचा सकेंगे, ऐसा उन्हें विश्वास होने लग गया था।

छब्बन

'महाराज !' द्वारपाल ने चन्द्रगुप्त मौर्य को राजसी अभिवादन के बाद सम्बोधित किया।

चन्द्रगुप्त मौर्य किसी सोच में बैठे हुए थे। उन्होंने द्वारपाल की

ओर देख कर पूछा, 'कैसे आना हुआ ?'

'महाराज !' द्वारपाल ने नतमस्तक होकर कहा, 'महामात्य आपसे भेंट करना चाहते हैं।'

गुरुदेव को आज्ञा की क्या आवश्यकता थी, द्वारपाल ?' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा 'उनके लिए तो प्रासाद के द्वार हर समय खुले है।'

द्वारपाल महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य की बातें सुन कर शात खडा होकर आदेश की प्रतीक्षा करता रहा।

गुरुदेव को सम्मानपूर्वक ले आओ। महाराज का आदेश मिला।

द्वारपाल आदेश पाकर चला गया।

कुछ क्षण बाद ही महामात्य चाणक्य ने द्वारपाल के साथ सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के कक्ष मे प्रवेश किया।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने उठकर गुरुदेव का स्वागत किया और रत्नजडित सिंहासन पर विराजने का आग्रह किया।

'चपल ! यह समय सत्कार का नही है। महामात्य चाणक्य ने सिंहासन पर बैठते हुए कहा, इस समय मैं विशेष मत्रणा के लिए आया हूँ।'

'आज्ञा कीजिए, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य न उनके सामने बैठते हुए कहा।

'वत्स ! अब पाटलिपुत्र पर सकट के मेघ छाने लग गए हैं।' महामात्य चाणक्य न चिन्तित स्वर मे कहा, 'अब युद्धका समय आ गया है।

युद्ध ! चन्द्रगुप्त मौर्य के मुख से निकला, 'किसके साथ, गुरुदेव ?'

'पाटलिपुत्र के शत्रु के साथ, चपल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, बग पराभव से हमे सचेत होना चाहिए। शत्रु का उत्साह बढ गया है। उसका दमन नही किया गया, तो वह इस ओर भी बढेगा।'

'गुरुदेव ! आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा।

यह तो मैं समझता हू चपल !' महामात्य चाणक्य बोले आज गुप्तचर अधिकारी स मत्रणा करने के बाद भी मेरा मन अशात है। मुझे यह विषय कुछ कठिन-सा प्रतीत हो रहा है। यदि महर्षि कात्यायन दो वर्ष

के अवकाश के लिए कश्मीर न चले गए होते, तो उस समय मगध विजय इतनी सुगमता से नही हो सकती थी।'

'हाँ, गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले।

'जानते हो, वृषल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, महर्षि कात्यायन छद्मवेश मे घननन्द की पराजय के एक मास बाद यहा आए थे और सब समाचारो से अवगत होकर लौहित्य देश की ओर चले गए थे। यह समाचार मुझे कुछ दिन पूर्व ही मिला है। काश ! मैं यही पर उन्हे बन्दी बना पाता, तो आज किसी तरह का खतरा हमारे सामने न आता।'

'गुरुदेव ! आपको इतना चिन्तित होने की आवश्यकता नही।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, वे हमारी विशाल सेना का सामना करने के लिए सैन्य शक्ति कहाँ से जुटा पायेंगे ?'

ऐसा सोचना ही भारी भूल है वृषल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'महर्षि कात्यायन ने लौहित्य देश मे पहुच कर वहाँ के महाराज की सहायता से विशाल सेना तैयार कर ली है।

आपने कैसे जाना।' चन्द्रगुप्त मौर्य ने पूछा।

'वृषल ! यदि उनकी शक्ति प्रबल न हुई होती तो वे वग की ओर ध्यान न देते।' महामात्य चाणक्य ने कहा अब उन्होंने सोये हुए शेर को छेड़ा है। इसका फल उन्हें शीघ्र ही मिल जाएगा।

'यह फल किन को मिलेगा गुरुदेव !

'लौहित्य नरेश और उसके साथियो को जो चन्द्रगुप्त मौर्य को पराजित करने का स्वप्न देख रहे हैं।' कहते-कहते महामात्य चाणक्य का चेहरा तमतमा उठा।

गुरुदेव !' चन्द्रगुप्त मौर्य ने कहा, 'इससे तो महर्षि कात्यायन के अमगल का भी भय है।'

साधना तो इसी बात का है वृषल ! महामात्य चाणक्य ने खिन्न स्वर मे कहा मैं स्वयं भी एेसे त्यागी, परोपकारी, व्याकरणाचार्य और स्वामिभक्त का अमगल नही सोच सकता। मैं तो उन्हें तुम्हारा हितैषी बनाना चाहता हूँ।'

'हितैषी !' चौक कर बोले चन्द्रगुप्त मौर्य, 'क्या वे बन सकेंगे,

गुरुदेव !'

'महामात्य के रूप मे ।'

यह पद तो ।' फिर कुछ सोच कर चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'क्या उनकी स्वीकृति मिल जायगी ।'

यह स्वीकृति उन्हे देनी होगी, वृषल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, राजनीति म कुछ भी मागने से नही मिलता वह लेना पडता है अपनी शक्ति से ।

'इसकी युक्ति तो आप ही सोच सकते हैं ।' चन्द्रगुप्त मौर्य बोले, 'यहा तो आदेश की प्रतीक्षा रहेगी ।'

यह तो मैं पहले से ही जानता था, वृषल !' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'अब प्रस्थान करता हू ।'

इतना कह कर महामात्य चाणक्य महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के कक्ष से चले गए । वहा से वे अपनी कुटिया मे पहुचे । चिन्ता की रेखाए उनके मस्तक पर अब भी स्पष्ट थी ।

उनका प्रिय शिष्य जीवसिद्धि कुटिया मे बैठा प्रतीक्षा कर रहा था । उसने गुरुदेव को आता हुआ देख कर यथोचित अभिवादन किया और गुरु के मुखारविन्द से आदेश सुनने के लिए शात खडा रहा ।

महामात्य चाणक्य ने उसका अभिवादन स्वीकार करके पूछा, वत्स ! चन्दनदासजी को लिवा लाए ।'

हा, गुरुदेव ! वे कुटिया से कुछ दूरी पर बैठे हुए आपके बुलाने की प्रतीक्षा कर रहे हैं ।'

'कितनी देर से आए हुए हैं ?'

'थोडी ही देर हुई है, गुरुदेव !'

'ठीक है, सेठ चन्दनदास को यहाँ भेज दो ।'

'जो आज्ञा, गुरुदेव !' कह कर जीवसिद्धि सेठ चन्दनदास को बुलाने के लिए चला गया ।

थोडी देर बाद सेठ जी ने महामात्य चाणक्य के सामने पहुचते हुए कहा, 'नमस्कार, गुरुदेव !

'आयुष्मान भव !' चाणक्य के मुख से निकला ।

गुरुदेव का आशीर्वाद पाकर सेठ चन्दनदास ने पूछा, मेरे लिए क्या आज्ञा है, गुरुदेव !'

'सेठ जी ! कुछ राजकीय कार्यों के कारण आपको कष्ट दिया है ।' महामात्य चाणक्य ने सेठ चदनदास के भावो को पढते हुए कहा ।

'आज्ञा कीजिए, गुरुदेव !

'क्या भूतपूर्व महामात्य की आप पर विशेष कृपा थी ।'

'गुरुदेव ! आप की महती कृपा से मैं जगत सेठ बना चला आ रहा हूँ । नवनद साम्राज्य मे भी मुझे यही पद प्राप्त था । आप के समान भूतपूर्व महामात्य की मुझ पर कृपा रही है ।'

'तब तो आपको इस बात का अवश्य पता होगा कि कश्मीर यात्रा के समय उन्होने अपना परिवार कहाँ छोडा था ?'

'गुरुदेव ! यह तो जगत प्रसिद्ध है कि उनका परिवार मेरी सरक्षकता मे मेरे घर पर रहा ।

'ठीक, बिल्कुल ठीक । सेठ जी राजधानी पर मौर्य कुमार का अधिकार हो जाने पर भी वह परिवार की सरक्षकता मे रहा होगा ।'

ऐसा ही था गुरुदेव !

तब उनका परिवार अब भी आपके यहा ही होगा ।

'नही कृपानिधि ! वह अब मेरे पास नही है ।'

'फिर कहा चला गया ?'

लौहित्य देश मे ।'

किस के साथ ?

मेरे अनुचरो के साथ !

किस की आज्ञा से ?

महामात्य चाणक्य के इस प्रश्न को सुन कर सेठ चदनदास का हृदय भावी आशका से काप उठा । उन्होने स्वय को सम्भालते हुए कहा, 'गुरुदेव ! मेरी अनभिज्ञता से ऐसा हो गया ।'

'मुझे सूचित क्यो नही किया गया ?

गुरुदेव ! मुझे इस का अनुभव नही था ।'

'क्या आपको यह भी अनुभव नहीं था कि यह राजद्रोह का काय है ?'

'गुरुदेव ! वे मौर्य कुमार के अधिकार से पूर्व ही जा चुके थे।' सेठ चन्दनदास ने कहा 'इस पर राजद्रोह का आरोप कैसा ? फिर मेरे जैसा सज्जन व्यक्ति ऐसा कुकृत्य कैसे कर सकता है ?'

सेठ जी ! मुझे आपकी सज्जनता से कोई प्रयोजन नहीं है।' महामात्य चाणक्य ने कहा 'जगत सेठ के नाते आप इस राज्य के सेवक हैं। अत राजद्रोह आपकी मर्यादा के विरुद्ध है। यदि महर्षि कात्यायन इस साम्राज्य म आ जाते तो लाखों मानवों का नरसंहार होने से बच जाता। अब यह भार आपके कधो पर आ पड़ा है।'

'कैसे ?'

इसके भागी आप हैं ।

'क्षमा प्रदान करें गुरुदेव !' सेठ चन्दनदास ने कहा, आपको उस समय आज्ञा देनी चाहिए थी, जिस समय महर्षि का परिवार निसकोच मेरे घर पर रहता था। अब झूठा आरोप मुझ पर लगाना, आपको शोभा नहीं देता ।'

सेठ जी ! मेरी भूल आपके राजद्रोह के कलक को नहीं धो सकती।'

'आप साम्राज्याधिकारी के नाते मुझ पर कोई भी दोष लगा सकते हैं।' सेठ चदनदास ने कहा, मैं सत्य कह कर अपना धर्म का पालन कर चुका हूँ। आप न्याय सगत दण्ड दे दीजिए।'

'आप महर्षि कात्यायन के अहित के लिए तैयार नहीं।'

कदापि नहीं गुरुदेव !' सेठ चदनदास ने कहा, 'मैं द्रोह नहीं कर सकूँगा।'

'अभी समय है, सोच कर उत्तर दीजिए।'

'सोच विचार कर ही कह रहा हूँ।'

'आप का निश्चय अटल है।'

गुरुदेव ! आप इतनी छोटी-सी भूल को इतना तूल क्या दे रहे हैं ?' सेठ चदनदास ने कहा, मैंने तो मित्र द्रोह के पाप से बचने के लिए ही

यह सब कुछ किया था। उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।'

'सेठ जी ! इस भूल का महत्त्व किसी ऐसे षडयन्त्र से कम नहीं जो कि किसी के साम्राज्य को पलटने के लिए रचा जाता हो।'

गुरुदेव ! मुझे स्वप्न में भी इसकी आशा न थी कि मित्र की रक्षा करना भी षडयन्त्र हो सकता है।' सेठ चदनदास ने कहा यदि आप मुझे इसके लिए दण्ड का भागी समझते हैं, तो मैं दण्ड पाने के लिए सहर्ष तैयार हूँ, किन्तु आप महर्षि के परिवार को नहीं पा सकते।

'सेठ चदनदास ! सोच समझ कर शब्द मुख से निकालो। जानते नहीं मेरा नाम कौटिल्य है।' महामात्य चाणक्य ने कुपित मुद्रा में कहा, मैं जिसके अहित के लिए तुल जाता हूँ उसे मिट्टी में मिला कर ही चैन की साँस लेता हूँ। अच्छे-अच्छे सम्राट मेरे सामने पानी भरते हैं फिर तुम किस खेत की मूली हो ? अच्छा है कि अपनी दर्पपूर्ण बातों से मेरी क्रोधाग्नि को न बढ़ाओ।

इतना कहते ही उनकी आँखें आग बरसाने लग गई। उन्होंने उसी मुद्रा में फिर कहा सेठ चदनदास ! वृषल तुम्हारे मित्र कात्यायन जैसे सैकड़ों शत्रुओं को क्षण भर में पददलित कर डालने में सक्षम हैं। फिर आपने ऐसे वचन क्या सोच कर निकाले हैं ?

'गुरुदेव ! मैंने ऐसे कोई शब्द नहीं कहे जिनसे आपका अपमान हो अथवा अन्तःस्थल में जाकर चुभें। सेठ चदनदास ने कातर स्वर में कहा 'फिर मैं तो आपका सेवक हूँ। सेवक कभी भी स्वामी के समक्ष सिर नहीं उठा सकता है।'

तुम सरीखे राजद्रोही सेवकों से इस साम्राज्य को भय है।'

गुरुदेव ! यदि इतना विशाल साम्राज्य भी हम से भय खा सकता है, तो वह शीघ्र ही नष्ट हो सकता है।

'इससे प्रतीत होता है कि आप राजद्रोह के लिए तैयार हैं, सेठ !' महामात्य चाणक्य ने गुस्से से कहा 'आप मेरी प्रकृति को नहीं जानते।

बहुत अच्छी तरह जानता हूँ आपको भी और आपकी प्रकृति को भी। सेठ चदनदास के मुख से निकला कल का पथ का भिक्षुक और आज निर्दोष का घातक ! जो कुछ इस देह का करना चाहते हो, कर

सकते हो। मुझ जैसा वणिक पुत्र, आप जैसो की गीदड भभकियो मे आने वाला नही।'

इतना दुस्साहस ठीक नही सेठ!'

यह दुस्साहस मेरा नही आपका है।' सेठ चदनदास ने कहा, 'जो व्यक्ति कल तक हमारे विद्यालय का अध्यापक मात्र रहा हो, वही आज अपनी कुटिलता के कारण महामात्य बन बैठा है। इसी कारण से उसका मन आकाश की ओर देखता है। मै आप जैसे आततताइयो के द्वारा उस पवित्रात्मा की रक्षार्थ प्राण देना भी कीर्तिकर समझता हूँ।'

'आपका मित्र प्रेम और साहस धन्य है सेठ!' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'कि तु यह भिक्षुक भी एक राजद्रोही को बिना दण्ड दिये नही रह सकता है।

'फिर दण्ड की आज्ञा दीजिए।'

'आज से आप का सर्वस्व हमारी देखरेख मे रहेगा।'

बस। इसके साथ ही सेठ चदनदास का अट्टहास महामात्य की कुटिया मे गूज उठा।

अभी वास्तविक दण्ड देना तो शेष ही है।' महामात्य चाणक्य ने कहा।

'वह भी दीजिए आर्य!'

आपके साथ ही आपका परिवार बन्दीगृह मे रहेगा।'

दण्ड दे दिया गया।'

'नही। यह तो मेरा सुझाव मात्र ही है। इसका निर्णय तो सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य करेंगे।

'आर्य! मैं आपके अधिकार म हूँ। मैंने महर्षि जी के परिवार की जानबूझ कर रक्षा और पोषण किया था।'

'फिर उसका दण्ड भोग लीजिए।'

'मित्र हित के लिए प्राण देना भी मेरे लिए सुख की शय्या है।'

अरे, कोई है?' महामात्य ने तेज स्वर मे पुकारा। फिर सेठ चदन दास की ओर देखकर बोले, आपकी उग्रता को देखकर मुझे ही दण्ड की आज्ञा सुनानी पड रही है।'

तभी प्रहरी ने प्रवेश करके अभिवादन किया।

उसे देख महामात्य चाणक्य ने कहा, 'दडपायशाधिकरण को भेज दो।'

'जो आज्ञा!' कहकर प्रहरी आदेश पालन हेतु चला गया।

कुछ ही देर बाद दडपायशाधिकरण ने वहा पर पहुच कर महामात्य चाणक्य की जय जयकार की और फिर आदेश पाने के लिए एक ओर खडा हो गया।

'दडपायशाधिकरण! महामात्य चाणक्य ने कहा, सेठजी तुम्हारे सामने विराजमान हैं। इनका परिवार भी यथाशीघ्र यहाँ पहुँचा जाता है। इसके बाद इन्हे बदीगृह मे पूण प्रबन्ध के साथ रखना होगा। पर एक बात का ध्यान रहे कि इन्हे या परिवार के किसी भी सदस्य को किसी बात का कष्ट न होने पाए। वहाँ पर इनकी इच्छित सामग्री भी विद्यमान रहनी चाहिए। इनका सारा व्यापार अब से राजकीय निरीक्षण मे रहेगा। तत्पश्चात इनका निणय स्वय सम्राट करेंगे।'

'जो आज्ञा, आय!' सेठ चदनदास के मुख से निकला और स्वय ही दडपायशाधिकरण के साथ चले गए।

सेठ चदनदास के जाने के बाद महामात्य चाणक्य के मुख स निकला कि चदनदास! तुम वास्तव मे इस युग के रत्न हो। तुमने तुच्छ मैत्री भाव के पीछे धन और प्राण का बलिदान कर दिया किन्तु अपन पथ से विचलित नही हुए। ऐसी परोपकारी आत्मा इस नश्वर जगत मे खोजने पर भी बडी कठिनाई से मिलती है।

सहसा महामात्य चाणक्य के मुख पर मुस्कान खिल गई। उसी मुद्रा मे उनके मुख से निकला कि चदनदास! तुम्हारे रूप मे मुझे महर्षि कात्यायन मिल गए। वे तुम्हें छुडाने का अवश्य प्रयास करेंगे और तब वे मेरे बदी बन सकेंगे। कौटिल्य की सतकता के आगे चिडिया भी पख नही मार सकती है। तुम धन्य हो सेठ!

तभी उनका स्वर तीखा पड गया, कोई है?

आवाज को सुनते ही प्रतिहारी ने प्रवेश किया।

मेरे सहयोगी अमात्य को भेज दो।' आदेश मिला।

आदेश का तत्काल पालन हुआ ।

अमात्य ने गुरुदेव के समक्ष पहुँच कर अभिवादन किया ।

'मुझे सुन्दर अक्षरों में एक पत्र लिखवाना है ।' महामात्य चाणक्य ने अमात्य से कहा, 'क्या तुम ऐसे व्यक्ति का नाम बता सकते हो, जिसकी लिखावट अति सुन्दर हो ।'

'हाँ, आर्य !'

वह कौन है ?' महामात्य चाणक्य ने उत्सुकता से पूछा ।

'शकटदास !' अमात्य ने कहा, 'उससे अच्छा लिखने वाला पाटलिपुत्र भर में नहीं है ।'

'ठीक है । फिर उसी से मेरे आदेशानुसार यह पत्र लिखवाकर भिजवा दो'—

' जब तक दीर्घकालीन पद पुनः प्राप्त न हो जाएगा, तब तक मन अशान्त ही रहेगा और साम्राज्य भी दृढ़तापूर्वक नहीं जम पाएगा । वैसे तो इसके कितने ही कारण हो सकते हैं, किन्तु वास्तविकता को केवल प्रवीण नरेश ही पा सकते हैं । अतिशीघ्रता के कारण प्रबन्ध न हो सकने से राज्य परिवर्तन असम्भव नहीं, विश्वास हेतु अपने नाम की मुद्रा इसी के साथ भेजी जाती है । सावधान ! ध्यान रखिए । चातुर्य जहाँ सौ दुःखों का निवारण कर सकती है, वहाँ तुच्छ सी भूल सहस्रों को निमन्त्रित कर देती है ।'

अमात्य पत्र का विषय लेकर चले गए । उनके जाने के बाद स्वयं ही महामात्य चाणक्य बुदबुदाये कि देखता हूँ, अब कौन बच सकता है ? यही पत्र मेरी जीत का कारण होगा ।

'कोई है ?' फिर उनके मुख से निकला ।

प्रहरी ने प्रवेश किया ।

'महाबलाधिकृत को इधर भेज दो ।'

आदेश को सुनकर प्रहरी चला गया ।

कुछ ही देर बाद महाबलाधिकृत ने कुटिया में प्रवेश किया । उन्हें देखकर महामात्य चाणक्य बोले, 'इस भद्रासन पर विराजिए ।'

महामात्य चाणक्य के संकेतानुसार महाबलाधिकृत उस आसन पर

विराज गए। फिर पूछा 'क्या आज्ञा है, आर्य ?'

'आजकल युद्ध की क्या गति है आर्य ?'

'देव ! महर्षि कात्यायन ने उग्रता स्वरूप दो ओर से हमारे साम्राज्य पर आक्रमण किया है। दोनों ओर से घमासान युद्ध हो रहा है। सहस्रों योद्धाओं से पृथ्वी खाली हो रही है। इस पर भी यह युद्ध दाव पेंचों का खेल बना हुआ है। महाबलाधिकृत ने कहा।

'आर्य ! इसी कारण एक विशेष मन्त्रणा हेतु आपको यहां कष्ट दिया है। महामात्य चाणक्य ने कहा इस युद्ध को जितनी देर खींच सको, उतनी देर तक खींचते रहो।

इससे क्या प्रयोजन सिद्ध होगा आर्य ?'

'जन विनाश के द्वारा ही हमारे साम्राज्य की नींव पक्की हो सकती है महाबलाधिकृत !' महामात्य चाणक्य ने कहा, वैसे मैं ऐसी युक्ति सोच रहा हूं जिससे बिना युद्ध किए ही सारे कार्य सिद्ध हो जाएँ।'

'आपका आशय नहीं समझा देव !'

'मेरा आशय इस युद्ध में किसी प्रकार भी महर्षि कात्यायन को क्षति पहुँचाना नहीं है। महामात्य चाणक्य ने गंभीर होकर कहा वे विद्वत्ता की प्रतिमा हैं और प्रचण्ड युद्धकर्ता। अत उनकी मृत्यु मेरे और सम्राट के लिए दु खकर होगी। यदि सम्भव हो सके, तो इन सब पदाधिकारियों को बन्दी बनाने का प्रयास करो।

देव ! शत्रु पर इतनी दया का कारण समझ में नहीं आया।'

उन्हें शत्रु समझना ही तो आपकी भूल है, महाबलाधिकृत !'

फिर उन्हें क्या समझा जाए !'

आत्मविस्मृत बंधु ! महामात्य चाणक्य ने कहा युद्ध तो विदेशियों से करना चाहिए अपने बंधुओं से नहीं। मैं उनको समझा कर ठीक राह पर ले आऊंगा महाबलाधिकृत !

आपका यह विचार तो बहुत ही उच्च है, देव !'

इसलिए मैं सबलनद को अज्ञात रूप में अपने यहाँ देखना चाहता हूँ। महामात्य चाणक्य ने कहा, इस आदेश का पालन अत्यन्त गोपनीय ढंग पर होना चाहिए।

'जा आज्ञा देव !' कहकर महाबलाधिकृत चले गए।

उनके जाने के कुछ देर बाद प्रहरी ने सहयोगी अमात्य के आगमन की सूचना दी।

अन्दर भेज दो।

देव ! शकटदास द्वारा लिखित पत्र है। सहयोगी अमात्य ने कुटिया मे प्रवेश कर शिष्टाचार के बाद कहा।

अति सुन्दर !' पत्र को हाथ मे लेकर महामात्य चाणक्य बोले, 'मैं शकटदास से मिलना चाहता हूँ।

वे बाहर ही हैं देव ! सहयोगी अमात्य ने कहा, 'मैं अभी आपके पास भेजता हूँ।'

इतना कहकर सहयोगी अमात्य ने शकटदास को महामात्य चाणक्य के पास भेज दिया।

शकटदास ने कुटिया मे प्रवेश करके महामात्य चाणक्य को अभिवादन किया और आज्ञा पाने के लिए एक ओर खडे हो गए।

'आसन को अलकृत कीजिए, शकटदास जी !'

शकटदास ने आसन पर बैठते हुए कहा, आर्य ! यह मेरा अहोभाग्य है, जो आपके दर्शन इतनी सुगमता से हो गए।

शकटदास जी !' महामात्य चाणक्य ने मुद्रा को गम्भीर करते हुए कहा, आपकी राजभक्ति इस साम्राज्य से न होकर नवनद साम्राज्य से क्यो है ? इसने आपका क्या अपकार किया है ?

'कोई भी अपकार नही, देव !'

फिर आपने महर्षि कात्यायन के परिवार को लौहित्य देश भिजवाने मे क्यो मदद की ?'

'आर्य ! इस विषय मे तो आप बहुत से प्रमाण सगठित कर चुके हैं।' शकटदास ने कहा, फिर मेरी इकारी की बात आप कैसे मान सकते हैं ?

मेरे मानने की बात पीछे रह जाती है, शकटदास जी !' महामात्य चाणक्य बोले, 'अब आप स्वय ही दोष का स्वीकार अथवा अस्वीकार करें।'

'आपका कथन सत्य है, आर्य !' शकटदास ने कहा, 'मैंने तो यह

आज्ञा-पालन रूप मे ही किया है।'

यह आज्ञा पालन नही अपितु विद्रोह के लिए जीता जागता निमत्रण है।'

'मैंने विद्रोहात्मक कोई काय नही किया, आय !'

शकटदास ने कहा, 'यदि महर्षि के परिवार को बदी बनाने की आज्ञा होती, तो मैं उसका अवश्य पालन करता। फिर वे तो इस नगर मे प्रकट रूप मे रहते थे।'

'फिर छिपकर जाने का माग क्यो अपनाया गया ?'

'भय के कारण !'

'कैसा भय ?

'राजकीय अवरोध का भय, आय !'

'तब तो यह काय राज्य के प्रतिकूल हुआ।'

हाँ, आय !'

तभी महामात्य चाणक्य ने पुकारा 'कोई है ?'

प्रहरी न प्रवेश कर अभिवादन किया।

दण्डापयशाधिकरण से कहो कि शकटदास को उस समय तक बदीगृह मे रखें जब तक और कोई विशेष आदश न मिले।' फिर शकटदास को सम्बोधित कर बोले 'आप भी इसके साथ यहाँ से प्रस्थान करें।'

'जो आज्ञा !' कहकर शकटदास प्रहरी के साथ चले गए।

उनके जाने के बाद महामात्य चाणक्य अपनी धुन मे लीन हो गए। राजनैतिक समस्याएँ उनके मस्तिष्क को मथने लग गई थी।

पचपन

'महर्षि जी ! आपका परिवार तो लौहित्य देश मे सकुशल पहुँच गया परन्तु । महाराज विरालाक्ष कहते-कहते रुक गए।

परन्तु क्या, महाराज ?'

'आपके परिवार का आश्रयदाता इस समय सकट मे है।'

कौन, चन्दनदास ?' महर्षि कात्यायन न पूछा, 'आपको यह समाचार कहाँ से मिला ?

विश्वस्त गुप्तचर के द्वारा।'

ठीक है ! यह सब आय चाणक्य के द्वारा ही हुआ। उसी न मेरी मुद्रा अपने गुप्तचर के द्वारा मगवा ली थी।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'इस बात का विश्वास मुझे आज हो रहा है, महाराज कि वह कितने घृणित कार्यों का करने के लिए आतुर हो उठा ?

चिन्ता की कोई आवश्यकता नही है, महर्षि जी !' महाराज विशालाक्ष न कहा, 'अब हमे उसकी नीति को कुचलना होगा।'

इतने म द्वारपाल ने आकर कहा, 'महाराज ! शकटदास जी बाहर उपस्थित हैं।'

उन्हे तो मृत्युदण्ड मिल चुका था।' महर्षि कात्यायन बोले, 'वे कदापि नही हो सकते। तुम्हारे नत्रो ने उन्ह पहचानन मे भूल की है।

'नही, आय ! वे बाहर उपस्थित हैं।'

यदि ऐसा ही है, तो उन्हे सम्मानपूवक यहाँ ले आओ।

द्वारपाल आज्ञा पाकर शकटदास को अन्दर ले आया। उन्हें देख महर्षि कात्यायन का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। उन्होन शकटदास को आलिंगनबद्ध करते हुए कहा 'मित्र ! तुम्हे सकुशल देखकर मुझे अपार हप हो रहा है। मुझे तो कुछ क्षण पूव तक ऐसा आभास था कि अब कभी आपके दशन न हो सकेंगे पर प्रभु ने अच्छा ही किया। अब मेरे पास बैठकर बताओ कि चाणक्य के विकराल करो से तुम्हारे प्राणो की रक्षा कसे हुई ?

'इसे विडम्बना ही समझिए, ऋषिवर !'

विडम्बना !'

'हाँ, ऋषिवर ! सिद्धगुप्त जी मुझे सूली पर से छुड़ा कर यहाँ पहुँचा गए हैं।'

'सिद्धगुप्त ने ऐसा क्यो किया ?

यह तो मैं भी नही समझ सका, ऋषिवर !'

'अच्छा तो तुम यहा पर किस मार्ग से पहुच ?'

साधारण मार्ग से !'

'शत्रु ने तुम्हे रोका नही !'

'नही, ऋषिवर !'

'तब तो इसमे भी चाणक्य की कोई चाल है, शकटदास !' महर्षि कात्यायन ने कहा, वह कूटनीतिज्ञ है। सिद्धगुप्त के द्वारा हमारी गुप्त बातो को जानना चाहता है।' फिर उन्होंने पुकारा 'कोई है ?'

द्वारपाल तत्काल प्रवेश करके खडा हो गया।

'सिद्धगुप्त जी को सम्मानपूर्वक ले आओ।

आदेश का पालन हुआ।

सिद्धगुप्त ने वहा पहुँचकर सबको यथोचित अभिवादन करते हुए कहा, 'यह मेरा अहोभाग्य है कि मैं शकटदास जी को यहाँ सकुशल पहुँचा सका हूँ।'

'इसके लिए हम आभारी हैं।' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'आप यहाँ कब तक ठहरेंगे ?

ऋषिवर ! पाटलिपुत्र मे तो अब मेरे लिए कोई स्थान नही है।' सिद्धगुप्त ने कहा 'यदि अनुमति मिल जाए तो शेष दिन मैं आपकी सेवा मे ही अर्पित कर दू।'

आपके अन्य साथी कहा पर हैं ?'

'पाटलिपुत्र मे, ऋषिवर !'

'उन्हे कोई भय नही है !'

'नही ऋषिवर ! उन्हें वहाँ कोई नही पहचानता है।'

चाणक्य का प्रबन्ध कोई कच्चा धागा नही, सिद्धगुप्त !' महर्षि कात्यायन ने कहा, वह हर क्षण आँख-कान खुले रखते हैं। शका मात्र से ही हर प्रकार की खोज तत्काल करा लेते हैं। फिर आपकी बातें भी कुछ सदेहजनक हैं। अत मैं शत्रु का गुप्तचर मान कर आपको बदी बनाता हूँ। दण्ड का निश्चय बाद मे किया जाएगा।

उपकार का फल बदी जीवन है ऋषिवर !'

'आप जैसे व्यक्तियों के लिए यही उपयुक्त है, सिद्धगुप्त !'

महर्षि कात्यायन के शब्दों को सुनकर सिद्धगुप्त और कुछ न कह सका। वह नतमस्तक स्थिति में बैठा रहा।

तभी महर्षि कात्यायन ने द्वारपाल को बुलाकर कहा, 'दो दण्डपाशिकों को तत्काल यहां भेज दो।'

कुछ ही देर में दो दण्डपाशिक वहाँ उपस्थित हो गए।

'इन्हें बन्दीगृह में विशेष प्रबन्ध में रखो। ये शत्रु के गुप्तचर हैं।' महर्षि कात्यायन ने आदेश दिया।

दण्डपाशिक सिद्धगुप्त को लेकर चले गए।

उनके जाते ही महाराज विशालाक्ष बोले, 'ऋषिवर ! चाणक्य आपकी मुद्रा का सम्भवतः यहाँ भी प्रयोग करे।'

'आपने ठीक सोचा है महाराज !' महर्षि कात्यायन ने कहा, 'वह ऐसा कर सकते हैं।' फिर शकटदास जी को सम्बोधित करके बोले, 'आपसे तो कोई पत्र नहीं लिखवाया गया।'

'बिना सरनामे के एक पत्र लिखवाया गया है, ऋषिवर !'

'उसका विषय कुछ याद है ?'

महर्षि कात्यायन के पूछने पर शकटदास ने पत्र का आशय उन्हें बता दिया।

उसे सुनते ही वे चौंक उठे। बोले, 'महाराज ! चाणक्य कोई विशेष चाल चलने वाले हैं।'

'ऋषिवर ! ऐसा ही हम सोच रहे हैं।'

तभी द्वारपाल ने प्रवेश किया। कहा, 'महाराज ! आर्य कात्यायन की मुद्रा के साथ एक पत्र पत्रवाहक के साथ पकड़ा गया है।'

'पत्रवाहक और पत्र !' आश्चर्यचकित होकर महर्षि कात्यायन ने कहा।

'हाँ, आर्य !'

'पत्रवाहक को यहीं ले आओ।'

द्वारपाल पत्रवाहक को लेकर उपस्थित हो गया।

पत्रवाहक ने उन सबको यथोचित नमस्कार किया और आदेश पाने

के लिए चुपचाप खड़ा हो गया।

'तुम्हारे पास यह पत्र और मुद्रा कहाँ से आई ?' कुपित होकर महर्षि कात्यायन ने पूछा।

देव ! आपके आदेश से ही' तो मैं इस पत्र को लेकर आचार्य चाणक्य के पास जा रहा था।' पत्रवाहक ने विनम्रता से उत्तर दिया।

'महर्षि जी से तुम्हारी भेंट कब और कहाँ हुई थी ? महाराज विशालाक्ष प्रश्न कर उठे।

महाराज ! मेरी भेंट तो महर्षि से नहीं हुई थी।' पत्रवाहक बोला 'इनके विश्वासपात्र सिद्धगुप्त ने इनके सदेश के साथ ही यह पत्र और मुद्रा मुझे दी थी।

'कब !' महाराज विशालाक्ष ने फिर प्रश्न किया।

'महाराज ! कुछ देर पूर्व ही ? पत्रवाहक का उत्तर था।

'देव ! इसने भी मेरे प्राण बचाने में सहायता की थी।' शकटदास ने पत्रवाहक को ध्यान से देखते हुए कहा।

'तब तो यह भी शत्रु का गुप्तचर है।' महर्षि कात्यायन ने आदेश दिया, इसे भी सिद्धगुप्त के समान ही बदीगृह में डाल दो।

आदेश का पालन हुआ।

सैनिक पत्रवाहक को बदी बनाकर ले गए।

'चाणक्य की यह चाल तो असफल हो गई, महाराज ! महर्षि कात्यायन ने कहा, 'किन्तु वह हम बदी बनाने का प्रयास अवश्य करेगा। अत हम उसकी चालो से सजग रहना चाहिए। इस बात से कुमार को भी सचेत कर देना चाहिए।'

'हम आपके विचारो से सहमत हैं ऋषिवर !' महाराज विशालाक्ष ने कहा कुमार का समझाने का प्रयास करेंगे।

इतना कहकर महाराज अत पुर की ओर प्रस्थान कर गए। महर्षि कात्यायन भी शकटदास के लिए भोजनादि के प्रबन्ध में लग गए।

छप्पन

'आर्य ! सारा कार्य तो गुरुदेव के कंधों पर है, फिर आप चिन्तित क्यों रहते हैं ?' महारानी दुधरा ने सम्राट चन्द्रगुप्त के निकट आते हुए कहा।

'प्रिय ! तुम्हारे लिए ये विचार उचित नहीं।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने गम्भीर मुद्रा में उत्तर दिया, 'शत्रु मगध को हम से छीन लेना चाहता है। इसके लिए उसने कुमार को मोहरा बनाया है। देखना है जीत किसकी होती है ?'

'क्या इस युद्ध में कुछ शंका है, आर्य ?' महारानी दुधरा ने चिन्तित स्वर में पूछा।

'नहीं, प्रिये ! गुरुदेव के होते हुए हम कोई आशंका नहीं।' सम्राट् चन्द्रगुप्त ने कहा 'उनकी रणनीति के आगे शत्रु को झुकना ही होगा। फिर भी युद्ध युद्ध ही होता है। इसमें किसी-न किसी पक्ष की हार तो निश्चित होती है।'

अभी सम्राट् चन्द्रगुप्त इतना ही कह पाए थे कि कंचुकी ने प्रवेश कर कहा 'महाराज ! गुरुदेव बाहर के कक्ष में आपकी प्रतीक्षा में बैठे हैं।'

'उन्हें सम्मानपूर्वक यहीं ले आओ।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने आदेश दिया।

कंचुकी आदेश पाकर चला गया।

कुछ देर बाद आचार्य चाणक्य ने प्रवेश किया।

सम्राट चन्द्रगुप्त और महारानी दुधरा ने गुरुदेव का यथोचित सम्मान किया और पधारने के लिए आग्रह किया।

आचार्य चाणक्य आशीर्वाद देकर आसन पर बैठ गए।

'गुरुदेव ! आपकी शकटदास वाली युक्ति तो असफल रही।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने सकोच के स्वर में कहा।

'हाँ, चपल ! पर इसमें चिन्ता की कोई बात नहीं।' आचार्य चाणक्य गम्भीर मुद्रा में बोले, 'मेरे पाश से महर्षि *कात्यायन* स्वयं को नहीं बचा

पायेंगे।'

'गुरुदेव ! युद्ध भी कुछ ।' महारानी दुधरा इतना ही कह सकी।

'इसके पीछे भी एक कारण है, बेटी !' आचाय चाणक्य बोले, यह गृहयुद्ध है। अपनी ही तलवारें आत्माओं पर उठ रही हैं। इस युद्ध मे दोनो ओर से भारतीयो का ही रक्त बह रहा है। इसलिए मैं ।'

'गुरुदेव ! युद्ध छिडा है तो निणय करना ही होगा। महारानी दुधरा ने कहा।

'उस निणय से अवगत कराने के लिए ही तो यहा आया हूँ बेटी !' आचाय चाणक्य बोले, शत्रु की तलवार टूट चुकी है। उसका मोहरा गिर चुका है। यह बाजी हम जीत चुके हैं ऐसा समझो।'

'क्या कुमार सबलनद ?' सम्राट च द्रगुप्त ने कहा।

कुमार सबलनद आपके बदीगह मे है, वषल !' आचाय चाणक्य ने कहा, मैं अब लौहित्य नरेश और महर्षि कात्यायन से निश्चित स्थानो पर मिलने के लिए जा रहा हू।'

'और मगध का प्रबध, गुरुदेव।' सम्राट च द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

'गहयुद्ध का निणय तो हो गया है, वृषल ! इस ओर से कोई भय नही रह गया है। आचाय चाणक्य बोले फिर भी इस खतरे को हमेशा के लिए दूर करने हेतु ही उनसे भेंट करना आवश्यक है।'

महर्षि कात्यायन जी के समक्ष क्या प्रस्ताव रखेंगे ?' सम्राट च द्रगुप्त ने प्रश्न किया।

महामात्य पद का। आचाय चाणक्य ने प्रसन्न होकर कहा।

'गुरुदेव ! हम आपको किसी के अधीन नही देख सकते।' सम्राट च द्रगुप्त ने स्पष्ट स्वर म कहा।

वृषल ! उन जसे योगी और नीतिज्ञ के अधीन रहने मे अपना सौभाग्य समझूगा।' आचाय चाणक्य ने उत्तर दिया। इतना कह कर आचाय चाणक्य आसन पर स उठ गए। महारानी दुधरा और महाराज च द्रगुप्त मौय कक्ष म द्वार तक उन्हे छोडने के लिए गए।

आचाय चाणक्य के प्रस्थान के बाद महारानी दुधरा न कहा आय ! युद्ध के मेघ तो छट गए।'

'पूर्ण रूप से नहीं, प्रिये !' सम्राट चन्द्रगुप्त ने कहा, 'कुमार के बंदी हो जाने से लौहित्य नरेश का उत्साह अवश्य ढीला पड़ गया होगा। सम्भव है कि अपनी पौत्री का सुहाग बचाने के लिए वे गुरुदेव का प्रस्ताव स्वीकार कर लें।'

'क्या आप को इसमें कोई आशंका है ?' महारानी दुधरा ने प्रश्न किया।

'कहीं महर्षि का अहं न आगे आ जाए।' सम्राट् चन्द्रगुप्त ने महारानी दुधरा को बाहुपाश में लेते हुए कहा, 'कुछ क्षणों के लिए इस राजनीति की सौत को पीछे छोड़ दो, प्रिये !'

'अच्छा जी। यह लांछन भी हम पर ।' इतना कह कर महारानी दुधरा महाराज के पाश में फँसती चली गईं।

सत्तावन

युद्धभूमि से दो कोस दूर, लौहित्य नरेश अपने शिविर में व्यग्रता के साथ चहलकदमी कर रहे थे। उनके चेहरे पर चिन्ता की रेखाएँ झलक रही थीं। रह रह कर उनका हाथ तलवार की मूठ पर चला जाता था। ऐसा लगता था कि उनके अन्तर का ज्वालामुखी फटने ही वाला है। तभी प्रहरी ने शिविर में प्रवेश कर राजसी अभिवादन के बाद कहा, 'देव ! मगध के महामात्य और सेनापति आपके दर्शनों के इच्छुक हैं। आज्ञा हो तो ।'

प्रहरी के शब्द सुन कर लौहित्य नरेश कुछ सोच में पड़ गए। अकस्मात आचार्य चाणक्य का सेनापति के साथ आगमन उनकी चिन्ता का विषय बन गया था। भेंट न करना भी तो... कुछ सोच कर उन्होंने कहा, 'सम्मानपूर्वक उन्हें ले आओ।'

आज्ञा पाकर प्रहरी ने आचार्य चाणक्य और सेनापति को महाराज

के शिविर मे पहुँचा दिया।

लौहित्य नरेश ने उन्हें यथोचित सम्मान देकर बिठाया। पूछा, 'आय चाणक्य शत्रु के शिविर मे।

'चाणक्य ने लौहित्य नरेश को कभी शत्रु नही समझा।' आय चाणक्य ने गम्भीर स्वर मे कहा।

'फिर यह युद्ध।' लौहित्य नरेश के मुख से निकला, 'इसका दोष भी हम पर मढना चाहते हो, कौटिल्य!'

'आय! इस युद्ध का दोषी न मैं आप को मानता हूँ और न मौय कुमार को।' आचाय चाणक्य ने कहा, 'मेरी तो इच्छा थी कि शक्ति का प्रदशन यवनो के प्रति ही होता।'

होना तो ऐसा ही चाहिए था, पर आपके उठाये हुए गलत कदमों ने हुमे शक्ति प्रदशन के लिए विवश कर दिया था।' लौहित्य नरश रोप म भर कर बोले।

'गलत कदम।' आचाय चाणक्य ने दुहराया।

'हाँ। लौहित्य नरेश न दढता के साथ कहा आपने अस्सी वप से स्थापित नद साम्राज्य का अत कर दिया। इसलिए अब भी इस युद्ध का दोषी सिफ आपको मानता हूँ। मौय कुमार आपके हाथो की कठपुतली मात्र हैं।

देव! मौय कुमार न अपने राज्य के छिन जाने पर और स्वय की रक्षा के लिए शस्त्र उठाया था। यदि नद साम्राज्य की ओर से ऐसा अनुचित कदम न उठाया जाता, तो ऐसा कदापि न होता।' आचाय चाणक्य न कहा।

'यदि मौय कुमार राजकुमारी सुनन्दा के प्रणय को न ठुकराते, तो वे कभी भी एसा कदम उठान के लिए तयार न थे। लौहित्य नरेश ने कहा, 'उसकी ओर से क्रोध का जन्म दिया गया जिसके कारण यह सब कुछ हुआ।

एसा समझना ही तो भूल है देव! आचाय चाणक्य ने कहा।

यह कैसे? लौहित्य नरेश ने आश्चयचकित स्वर म पूछा।

'मौय कुमार न राजकुमारी सुनन्दा क प्रणय को कभी भी नही ठुक-

राया।' आय चाणक्य ने कहा, 'वास्तव मे सकोचवश वे उसके प्रणय को न समझ सके थे। इसके बाद तो उन्होंने कितनी ही बार सुनन्दा के सामने विवाह का प्रस्ताव रखा, पर राजकुमारी की ओर से हर बार ठुकरा दिया गया। उसने तो मेरे समझाने पर भी अपना हठ नही छोड़ा। फिर इसमे वपल का क्या दोष ?'

यदि ऐसा है तो युद्ध के दोष को हम स्वीकार करते हैं।' लौहित्य नरेश ने दुखी मन से कहा।

देव ! मेरे कथन की पुष्टि राजकुमारी सुनन्दा से हो सकती है।' आचाय चाणक्य ने गरम लोहे पर चोट करते हुए कहा।

अब इसकी आवश्यकता नहीं रही आय ! लौहित्य नरेश ने कहा, 'आपने कुमार को बंदी बना कर भी तो अच्छा नहीं किया।'

'यह ठीक ही हुआ है, देव !' आचाय चाणक्य के स्वर म दृढता थी, 'कुमार राजद्रोह के दण्ड क भागी हैं। उन्हें दडित करने के लिए ही बंदीगृह म डाला गया है।'

'वह निर्दोष है, आय ! लौहित्य नरेश बोले, 'उस बेचारे ने तो हमारे कहने से ही युद्ध किया था।

ठीक है देव ! यदि आप से सधि न हो सकी, तो कुमार के जीवन का निणय दडनायक के द्वारा होगा।' आचाय चाणक्य ने कहा, 'हा, इतना स्मरण रखिए कि राजद्रोह का दण्ड मत्यु है।'

आचाय चाणक्य की बातो को सुन कर लौहित्य नरेश सोच मे पड गए।

उन्हें चिन्तित मुद्रा मे देख कर आचाय चाणक्य ने कहा 'देव ! आपकी पौत्री कमलाक्षी का विवाह कुमार के साथ हो जाने के कारण ही मैं इस सधि के लिए यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। मैं नही चाहता कि वह अल्पायु मे ही वैधव्य जीवन बिताये। अब मेरे प्रस्ताव पर विचार करना आपका काम है। इस विषय मे आप महर्षि कात्यायन से भी परामश कर लें।'

लौहित्य नरेश के मस्तक पर चिन्ता की रेखाएँ गहरी हो गइ। इस समय उनकी स्थिति साँप छछूदर जैसी थी।

आचार्य चाणक्य ने लौहित्य नरेश की स्थिति को भांपते हुए कहा, 'देव ! मैं चाहता हूँ कि दोनो कुल फले फूलें । अब पौत्री का सुख और राजवश वचाना आपके हाथ मे है मेरे नही ।'

कुछ देर तक सोचने के बाद लौहित्य नरेश ने कहा, 'आय ! आप की वातो को सुन कर तो हमारा कलेजा ऊपर को आ रहा है। समझ मे नही आता कि आपको क्या जवाब दें ?'

ठीक है, दव ! आप ही मुझे कोई राह सुझाएँ।' आचाय चाणक्य ने कहा ।

'हमारी समझ तो जवाब दे चुकी है, आय !' लौहित्य नरेश बोले, 'हम क्या आपको राह सुझा सकते हैं ?'

यदि आप लौहित्य राज्य मात्र पर सतुष्ट रह और महर्षि कात्यायन तथा भद्रशाल अपने अपन पदो को पुन सम्भालन के लिए उद्यत हो, तो मैं आपकी ओर से सम्राट च द्रगुप्त से क्षमादान के लिए प्राथना कर सकता हूँ । आचाय चाणक्य ने कहा मैं इस बात का विश्वास दिलाता हू कि फिर आप उनक क्रोध का भाजन नही बनेंगे ।'

लौहित्य नरश चुपचाप सुनते रहे और आचाय चाणक्य कहत गए, 'आप पाटलिपुत्र की धरोहर को हमारे पास भेज दें। तब हम कुमार सबलनद का सम्मानपूवक आपके पास पहुँचा देंगे। आप अपने पास पच्चीस सहस्र सैनिक रख सकेंग और शेष सनिको को हमारी सेना म स्थान मिल जाएगा ।

आय ! आप यह कहना चाहते हैं कि हम अपनी पराजय को अभी से स्वीकार कर लें ।' लौहित्य नरेश ने कहा ।

'इसके अतिरिक्त और कोई चारा नही है, दव ! आचाय चाणक्य के स्वर मे दढता थी ।

'क्यो ? लौहित्य नरेश ने प्रश्न किया ।

देव ! इसलिए कि नवनद वश के साम्राज्य को सम्भालन के लिए आपके पास कोई उत्तराधिकारी भी नहीं है । आचाय चाणक्य ने कहा, किसी ग़ैर को खोजन से तो अच्छा है कि च द्रगुप्त को ही उत्तराधिकारी समझ लीजिएगा ।

'आर्य ! आपकी प्रवीणता के आगे हम कुछ नहीं कह सकते हैं।' लौहित्य नरेश ने निराशा भरे स्वर में कहा, 'यदि आप उचित समझें, तो हम महर्षि कात्यायन जी से परामर्श करने के बाद ही उत्तर दें।'

'अवश्य देव !' आचार्य चाणक्य बोले, 'आप उनसे परामर्श कीजिए, फिर मैं भी उनसे भेंट करूँगा।'

आचार्य चाणक्य इतना कह कर लौट गए।

उनके जाने के बाद लौहित्य नरेश ने महर्षि कात्यायन और भद्रशाल को विचार विनिमय के लिए बुलवाया।

उनके आगमन पर लौहित्य नरेश ने आचार्य चाणक्य का प्रस्ताव उनके समक्ष रख दिया और मन्तव्य माँगा।

उस प्रस्ताव को सुन कर महर्षि कात्यायन ने आचार्य चाणक्य से भेंट करना ही ठीक समझा। उसी क्षण दूत को भेज कर उन्हें शिविर में बुलवा लिया गया।

सब के आसन ग्रहण कर लेने के बाद महर्षि कात्यायन ने आचार्य चाणक्य को सम्बोधित करते हुए कहा, 'आर्य ! आपके दर्शन करके यह जीवन कृतार्थ हुआ।'

'मैं आपके चरणों में प्रणाम करता हूँ, ऋषिवर।' आचार्य चाणक्य ने महर्षि कात्यायन के चरणों को स्पर्श करके कहा।

'आयुष्मान भव !' महर्षि कात्यायन के मुख से निकला।

'ऋषिवर ! सम्राट चन्द्रगुप्त आपके आशीर्वाद की इच्छा रखते हैं।' आचार्य चाणक्य बोले।

'शत्रु से आशीर्वाद की इच्छा।' महर्षि कात्यायन बोले, 'यह कौन-सी रीति है आचार्य चाणक्य !'

'स्नेहीजन कभी शत्रु नहीं होते ऋषिवर !' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'इसी कारण तो आशीर्वाद के लिए निवेदन किया है।'

'मैं सम्राट चन्द्रगुप्त को चित्त से आशीर्वाद देता हूँ, आर्य !' महर्षि कात्यायन ने खुश होकर कहा, 'अब आप अपना प्रयोजन स्पष्ट करें, जिसके लिए आपने यहाँ आने का कष्ट उठाया है।'

'मेरा प्रयोजन तो केवल पारस्परिक कलह को मिटाना है, ऋषिवर !'

आचाय चाणक्य ने गम्भीर होकर कहा, 'यदि ऐसा न होकर युद्ध चलता ही रहा, तो कई वश मिट जायेंगे और लाखो भारतीय मत्यु की गोद मे सो जाएँगे ?'

'यदि आपका यह प्रयोजन मान भी लिया जाए, तो आप हम दोनो को मौय सम्राट के अधीन होने के लिए क्यो विवश कर रहे हैं ?' महर्षि कात्यायन ने कहा।

'इसमे भी मेरा स्वाथ है, ऋषिवर !' आचाय चाणक्य ने कहा, 'मैं चाहता हूँ कि मगध का राज दरबार सदा योग्य पुरुषो स भरा रह। ऐसा होने पर कोई भी विदेशी शक्ति हम भारतीयो की ओर आख न उठा सकेगी।

'आय ! आपके रहते हुए भारतीयो के लिए ऐसा दिन कभी नही आएगा।' महर्षि कात्यायन ने उत्तर दिया।

'मुझ तुच्छ व्यक्ति को इतना महत्त्व न दें ऋषिवर !' आचार्य चाणक्य ने कृतज्ञ भाव से कहा।

फिर भी मतभेद हो सकता है, आय !' महर्षि कात्यायन कहते कहते गम्भीर हो गए।

'उस मतभेद को सधि की धारा समझ कर दूर कर लीजियेगा, ऋषि वर ! आचाय चाणक्य बोले।

यदि इस सधि के लिए मेरी अस्वीकृति हो तो।' महर्षि कात्यायन ने कहा।

मुझ आपसे ऐसी आशा नही है ऋषिवर !' आचाय चाणक्य ने शान्त मुद्रा म ही कहा।

'विवश न करा आचाय चाणक्य !' महर्षि कात्यायन का स्वर अनु रोध भरा था।

विवश करने की मुझ म सामर्थ्य कहा है ऋषिवर ! आचाय चाणक्य बोले 'मैं तो चरण स्पश कर याचना माँग रहा हूँ। अ त मे मैं इतना ही निवेदन और करूँगा कि आपके शस्त्र धारण किए बिना चन्दन दास और कुमार का जीवन सकट मे पड जाएगा।'

'अच्छा तो आप हमसे क्या काय लेना चाहते हैं। महर्षि कात्यायन

ने प्रश्न किया ।

'भद्रशाल जी महासेनापति और आप महामात्य के कार्यभार को सम्भालें ।' आचार्य चाणक्य ने कहा ।

महर्षि कात्यायन ने आचार्य चाणक्य की बातों को सुनकर लौहित्य नरेश और भद्रशाल की ओर देखा । फिर उनकी मौन स्वीकृति को समझ कर बोले, 'आर्य चाणक्य ! भद्रशाल जी अपना पद को स्वीकार कर लेंगे । मुझे कोई मंत्रिपद देने की कृपा न करें ।'

'यह कैसे सम्भव है, ऋषिवर कि आप जैसे पुरुष मेरे अधीन रहें ।' आचार्य चाणक्य ने उत्तर दिया ।

'आपका कथन औचित्यपूर्ण है, आर्य चाणक्य !' महर्षि कात्यायन बोले, 'परन्तु मेरा पद ग्रहण करना पाप पूर्ण होगा । फिर भला मैं ऐसा क्यों करना चाहूंगा ?'

'यदि आप इसे पाप समझते हैं, तो इतनी अनुनय अवश्य स्वीकार करें, सम्राट चन्द्रगुप्त का उनके कार्यों में उचित परामर्श दे दिया करें ।' आचार्य चाणक्य के शब्दों में आग्रह की झलक थी ।

यह मुझे स्वीकार है, आर्य चाणक्य !' महर्षि कात्यायन ने अपनी स्वीकृति दे दी ।

इसके बाद संधि पत्र तैयार कर दिया गया । दोनों पक्षों की ओर से यह स्वीकृत हुआ । हस्ताक्षरों के बाद सवलनन्द और चदनदास जी मुक्त कर दिये गए । सम्राट चन्द्रगुप्त ने महर्षि कात्यायन और भद्रशाल जी को सम्मानपूर्वक पद दिए और आचार्य चाणक्य महामात्य ही बने रहे ।

अट्ठावन

सम्राट चन्द्रगुप्त के स्नेह के आगे सभी शत्रुओं ने सिर झुका दिए । एक बार पुनः भारत संगठित राज्य में सुशोभित हो गया । सुख और चन

की वशी बजने लगी। कुकृत्य और बर्बरता की भावनाएँ लोगों के मन से जाती रहीं।

महामात्य चाणक्य और भद्रशाल जी ने सारे राज्य का दौरा करके साम्राज्य की नींव को पक्का कर दिया और उसकी सीमा निर्धारित कर दी गई। हर स्थान पर समाचार प्रेषकों को नियत कर दिया गया। उपद्रव शांत कर दिये गए।

सैन्य विभाग दृढ़ कर दिया गया। उसमें छह सहस्र हाथी, तीन सहस्र घुड़सवार और छह लक्ष पैदल सैनिकों की व्यवस्था की गई। इसके अलावा राजपथ, पशु पथ रथ पथ आदि सुंदर बनवाये गए। व्यापार की ओर विशेष ध्यान दिया गया। दासता की भावना का अन्त कर दिया गया।

इस प्रकार मौर्य साम्राज्य सुचारु रूप से चलने लगा।

एक दिन सन्ध्या को सम्राट चन्द्रगुप्त महामात्य चाणक्य के साथ देश की सीमा की ओर निकले थे। पाटलिपुत्र से निकलने के बाद महामात्य चाणक्य ने धीरे स्वर में कहा, 'वृषल ! एक समाचार है।'

'कहिए, गुरुदेव !' सम्राट चन्द्रगुप्त बोले।

सैल्यूकस ने हमारे देश पर आक्रमण कर दिया है। महामात्य चाणक्य ने तनिक गम्भीर होकर कहा।

गुरुदेव !' सम्राट चन्द्रगुप्त चौंक कर बोले, 'इतनी बड़ी बात हो गई और हमें अभी तक पता नहीं लगा।'

अब तो लग गया वृषल ! महामात्य चाणक्य ने गम्भीर स्वर में कहा पर किसी और को इसकी हवा भी नहीं लगनी चाहिए। पाटलिपुत्र में अपने राज्य को और सुव्यवस्थित करना है। जो कुछ भद्रशाल जी ने इसके लिए किया है मैं उससे पूर्णतया सतुष्ट नहीं हूँ।

तो फिर।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने पूछा।

'पाटलिपुत्र भारत का हृदय है वृषल !' महामात्य चाणक्य इसी स्वर में बोले, हृदय निर्बल हो तो देह भी निर्बल होती है। अतः राज्य की सुव्यवस्था के बाद ही यूनानियों की ओर ध्यान देंगे।'

गुरुदेव ! तब तक यदि सैल्यूकस आगे बढ़ आया तो ?' सम्राट

चन्द्रगुप्त ने आशंका व्यक्त की।

'मैं जानता हूँ, वृषल!' महामात्य चाणक्य ने उत्तर दिया, 'कहाँ सैल्यूकस का सामना करना होगा? कहाँ तक उसे आगे बढ़ने देना होगा। सिंधु के तट तक उससे आगे नहीं। हेलेन को अपनी ओर करना होगा। इसके लिए राजकुमारी सुनन्दा भी प्रयत्नशील हैं। मैं चाहता हूँ कि यूनान की सुन्दरी का विवाह ।'

सम्राट चन्द्रगुप्त शीघ्रता से बोले, गुरुदेव! आप जानते हैं कि हम सैल्यूकस की बेटी से प्रेम नहीं करते। हम तो छाया ।'

छाया।' महामात्य चाणक्य बोले, 'मेरे हृदय में भी उसके लिए भारी श्रद्धा है वृषल!'

तभी एक घुड़सवार दौड़ता हुआ रथ के पास आया और घोड़े पर चढ़ा ही चढ़ा बोला, 'महाराज की जय हो! महामात्य के लिए एक पत्र।'

महामात्य चाणक्य ने हाथ बढ़ा कर कहा, 'लाओ। और दूर हट जाओ।'

घुड़सवार ने महामात्य को पत्र पकड़ाने के बाद ऐसा ही किया।

महामात्य चाणक्य ने सांकेतिक भाषा में लिखे पत्र को पढ़ने के बाद कहा वृषल! सैल्यूकस की सेना ने सारा पारस देश विजय कर लिया है। गांधार में स्थित सेना भी शस्त्र डालने की सोच रही है।'

यह तो अशुभ समाचार है, गुरुदेव!' सम्राट चन्द्रगुप्त कह गए।

'इतना अशुभ भी नहीं।' महामात्य चाणक्य कुछ सोच कर बोले, वृषल! जैसा मैंने विचारा था, वैसा ही हो रहा है। अभी सिंधु में स्थित सेना भी शस्त्र डालेगी। दम्भी सैल्यूकस सिंधु को पार करके अपनी सारी सेना तक्षशिला प्रान्त में ले आएगा, तब तब ।'

'तब क्या गुरुदेव!' सम्राट् चन्द्रगुप्त ने सरल भाव से पूछा।

'वृषल! प्रसेनजित को आज ही तक्षशिला भेज देना होगा और अगले सप्ताह आप भी मेरे साथ जायेंगे।' महामात्य चाणक्य ने उत्तर दिया, 'अब लौट चलो। आज आगे नहीं जायेंगे।'

रथ पाटलिपुत्र नगर की ओर बढ़ गया।

उनसठ

और दो सप्ताह के बाद।

सम्राट चन्द्रगुप्त सिंधु तट से लगभग एक कोस की दूरी पर पहाड़ियों पर बने गुप्त दुर्गों में स्वयं देखभाल कर रहे थे। ये छोटे छोटे दुर्ग थे, जिनमें दस दस सहस्र सैनिक थे। इनके लिए भरपूर खाद्य सामग्री का प्रबन्ध था। बाहर से उनका कुछ भी प्रतीत नहीं होता था। ये छोटे दुर्ग संख्या में भी काफी थे। घोड़े पर चढ़े हुए सम्राट चन्द्रगुप्त प्रसेनजित के साथ-साथ हर एक दुर्ग में जाते थे। वहाँ की व्यवस्था को देखकर चकित हो जाते थे।

प्रसेनजित ने पहाड़ियों के आगे के मैदान की ओर संकेत करते हुए कहा, 'महाराज! सैल्यूक्स की जो सेना सिंधु के उस पार इकट्ठी हो रही है, सिंधु को पार करने के बाद यहाँ ही डेरा जमाएगी। जब सारी यूनानी सेना इस मैदान में इकट्ठी हो जाएगी, तभी हमारे सैनिक इन पहाड़ियों से उतर कर उस पर आक्रमण करेंगे। साथ ही इन दुर्गों में बैठे सैनिक पूरे वेग से तीरों की वर्षा करेंगे। सामने वाले मैदान में जगह जगह विस्फोटक दबा दिये गए हैं। घोड़ों और सैनिकों का दबाव पड़ते ही, वे फट जाएँगे। यूनानी सेना में भगदड़ मच जाएगी। पीछे सिंधु नदी होगी आगे हमारी सेना यूनानी सेना का सर्वनाश निश्चित है।'

सम्राट चन्द्रगुप्त आह्लाद और आश्चर्य के साथ बोले 'धन्य प्रसेनजित! सैल्यूक्स का पराजय निश्चित है, किंतु तुम इतना कुछ सोच सकते हो यह तो हमने पहले कभी नहीं समझा था।

महाराज! अब भी न समझें, तो अच्छा होगा। प्रसेनजित ने प्रसन्न होकर कहा यह सब कुछ मैंने नहीं सोचा, सोचा था महामात्य चाणक्य ने मैंने तो केवल उनकी आज्ञा का ही पालन किया है।

धन्य गुरुदेव!' सम्राट चन्द्रगुप्त सिर झुका कर बोले, कितनी दूरदर्शिता कितना विचार, किन्तु प्रसेनजित हमने प्रात काल से उन्हें देखा नहीं। कहाँ मिलेंगे, गुरुदेव!

प्रसेनजित ने तत्काल एक दुर्ग के द्वार पर सांकेतिक थपथपाहट करते हुए कहा, महाराज ! वे तक्षशिला लौट गए हैं।' जाती बार कह गए थे, 'अब युद्ध होगा। अब सम्राट का काम है महामात्य का नहीं।'

दुर्ग का द्वार खुल गया। सम्राट चन्द्रगुप्त उसमें प्रवेश करते हुए बोले, 'महामात्य की जय होगी, प्रसेनजित !'

अगले दिन विहान बेला में यूनानी सेना सिंधु के इस पार थी। गुप्त दुर्गों वाली पहाड़ियों के सामने मैदान में उसने शिविर लगा दिए थे। यूनान का एक भी सैनिक सिंधु के उस पार नहीं था।

गुप्त दुर्ग में से देखते हुए सम्राट चन्द्रगुप्त ने प्रसेनजित से कहा 'यूनानी सेना आगे बढ़ने की तैयारी कर रही है, प्रसेनजित ! हमारा आक्रमण अभी होगा या ठहर कर ?'

'ठहर कर, महाराज !' प्रसेनजित ने कहा, 'महामात्य चाणक्य की ऐसी ही आज्ञा है। यूनानी सेना जब विस्फोटक भूमि पर पहुँचेगी तभी हमारे सैनिक आँधी की तरह ऊपर से नीचे उतरेंगे, किन्तु यूनानी सेना को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक है कि हमारे काफी सैनिक उन्हें पहाड़ी पर दिखाई दें। यह सोचकर मैंने आदेश दे दिया है।'

और देखते ही देखते यूनानी सेना में तुरहियाँ बज उठीं। सैल्यूकस ने पहाड़ी पर खड़े भारतीय सैनिकों को देखा और अपने वीरों को ललकारते हुए कहा, 'आगे बढ़ो। यूनानी बहादुरो ! सामने की पहाड़ी दुश्मन से छीन लो।'

यूनानी घुड़सवार पूरे वेग से आगे बढ़े। उनके हाथी भी, रथ भी और पैदल सैनिक भी, किन्तु विस्फोटक भूमि पर पहुँचते ही एकाएक छिन्न-भिन्न ही धमाके हो उठे। यूनानी सैनिकों में खलबली मच गई, जो आगे थे वे पीछे हटे, जो पीछे थे वे आगे बढ़े।

इसी समय सम्राट चन्द्रगुप्त ने पहाड़ी पर खड़े होकर शंख ध्वनि की और अपनी नंगी तलवार को हिलाते हुए ललकार कर कहा, आगे बढ़ो ! भारत के वीर सपूतो ! शत्रु की अस्थियाँ चूर-चूर कर डालो।

महाराज के आदेश के साथ ही भारतीय घुड़सवार आँधी के वेग के समान पहाड़ों से नीचे उतरे। घमासान युद्ध छिड़ गया। प्रसेनजित और

सम्राट चन्द्रगुप्त श्वेत हाथियो पर चढे युद्ध का सचालन कर रहे थे।

रथो से रथ भिड गए, घुडसवारो से घुडसवार हाथियो से हाथी और पदातियो से पदाती। सिंधु तट की धूलि आकाश म उडी, जो नीचे रही वह रक्त से लाल हो गई स्वय सिंधु का जल रक्त रजित हो उठा।

मध्याह्न तक यूनानी सेना ने अपना सारा जोर लगा दिया, किन्तु भारतीय सेना को वह एक पग भी पीछे नही हटा सकी। गुप्त दुर्गो म बठे भारती सैनिक शत्रु पर तीरो की वर्षा कर रहे थे।

मध्याह्न के समय सैल्यूकस ने पुकारा मगेस्थनीज।

मैगस्थनीज न उपस्थित होकर यूनानी ढग से अभिवादन करत हुए कहा, 'शहशाह!'

मैगेस्थनीज!' सल्यूकस बोला 'हम जाल म फँस गए हैं। पीछे हटे बिना कोई चारा नही—और पीछ दरिया है।'

'हाँ शहशाह!' मगेस्थनीज ने चिन्तित मुद्रा मे कहा, अब तो यही हो सकता है कि जितने यूनानी सिपाही बच सकें, उन्ह बचाया जाए। हमारे पास कुछ नावें हैं। उन पर सिपाहियो को बिठा बिठा कर वापस भेजिए। बाकी फौज दुश्मन का मुकाबला करती रहेगी।'

यही ठीक रहेगा!' सल्यूकस न कहा, हुक्म दो, एसा ही हो!'

कुछ देर क बाद कितने ही यूनानी सैनिक नावो म बठ कर सिंधु क उस पार जाने लग गए।

सम्राट चन्द्रगुप्त ने प्रसेनजित के पास अपना हाथी ल जाकर कहा 'यह तो बुरा हुआ, प्रसेनजित! यूनानी सनिक सिंधु को पार करक दूसरी ओर भागने का प्रयास कर रहे हैं। यदि वे इसमे सफल हो गए, तो यूनानी सना की पराजय नहीं होगी, उन्हें रोकना चाहिए।'

'महाराज! उन्हें रोकने का हमारे पास कोई साधन नही है।' प्रसेनजित न कहा, यूनानी सेना हमारा माग रोके खडी है। वह पागलो की तरह लड रही है।

सुन कर सम्राट चन्द्रगुप्त निराश हो गए। उनके मुख स निकल गया, काश! गुरुदेव यहाँ होते।'

उसी समय प्रसेनजित न पुकार कर कहा देखिए, महाराज! भारत

की पताका फहरायी हुई कितनी ही नौकाएँ पता नहीं कहाँ से सिंधु मे आ गई हैं। उनम बैठे हुए भारतीय यूनानियो पर वाणो की बौछार कर रहे हैं।'

सम्राट चन्द्रगुप्त ने चिल्ला कर कहा, 'किंतु ये तो शिखा सूत्रधारी ब्राह्मण हैं, प्रसेनजित ! वह देखो, सबसे अगली नौका म स्वय गुरुदेव !'

प्रसेनजित के साथ ही साथ भारतीय सैनिको ने चिल्ला कर कहा, महामात्य चाणक्य की जय ! भारत की जय !'

इसी समय एक अति सुदर युवती यूनानी शहशाह सैल्यूकस के शिविर से बाहर निकली। घोडे पर चढ़कर सैल्यूकस के पास पहुँच कर बोली, 'अब्बा हुजूर !'

सल्यूकस न आश्चय के साथ कहा, मेरी बटी हलेन ! तुम यहाँ जगे मदान मे। यहा से हट जाओ, वरना दुश्मन का तीर तुम्हे जख्मी कर जायेगा।'

'इसीलिए तो यहाँ आई हूँ, अब्बा हुजूर !' हेलेन ने आगे बढ कर कहा, यह फिजूल की मारा मारी मुझसे नही देखी जाती। आप अच्छी तरह जानते है, यूनानी सिपाहियो के बच निकलने की अब कोई उम्मीद नही है। हम सब तरफ से बुरी तरह घिर गए है। अब न तो जीतने की कोई उम्मीद रह गई है और न बचने की।'

'तुम सच कहती हो, हेलेन !' सैल्यूकस ने ग्लानि भरे स्वर म कहा 'कोई उम्मीद नही।'

'तो यूनानी खून को बहने से रोकिए !' हेलेन बाली सुलह का झडा उठाइए।'

लेकिन बेटी तुम्हारा अब्बा सच्चा यूनानी है।' सैल्यूकस ग्लानिपूण स्वर मे बोला बहादुर सिकन्दर का जानशीन।'

हेलेन ने शहशाह सैल्यूकस के कधे पर हाथ रखत हुए कहा सिपाही का काम लडना है अब्बा हुजूर ! हार और जीत जुपीटर के बस मे है। हम काफी लड चुके। अब सुलह का झडा उठाइए।'

हेलेन ! सैल्यूकस का क्षीण स्वर निकला।

हेलेन ने स्वय ही श्वेत ध्वज ऊपर उठाते हुए कहा, 'लडाई

'हम सुलह करेंगे ।'

यूनान के शहशाह सैल्यूकस ने अब हेलेन को रोका नहीं ।

पास ही खडे मैगेस्थनीज ने उस श्वेत ध्वज को हेलेन के हाथ से लेकर ऊपर उठा दिया और मस्तक झुका लिया ।

साठ

सिंधु के तट पर वह विशाल मैदान ! मैदान के पास पहाडियों की वह शृंखला, जिस पर प्रसेनजित के गुप्त दुर्ग बने थे । अब इन दुर्गों के द्वार खुले थे । उन पर मौर्य साम्राज्य के मयूरांकित ध्वज लहरा रहे थे । नीचे मैदान में निःशस्त्र यूनानी सैनिक अपने शिविरों में पडे थे । उन्हें भारतीय सैनिकों ने घेर रखा था ।

एक गुप्त दुर्ग के द्वार पर सम्राट चन्द्रगुप्त प्रसेनजित के साथ खडे थे । भीतर से महामात्य चाणक्य अपनी चादर को कंधे पर डालते हुए बाहर निकले तो सम्राट् चन्द्रगुप्त ने उनके चरणों का स्पर्श कर कहा, 'गुरुदेव की जय हुई । हमारी बधाई स्वीकार करें ।'

महामात्य चाणक्य ने सामने मैदान की ओर देख कर मुस्कराते हुए कहा, 'अभी नीति की विजय शेष है चपल ! युद्ध की विजय पूर्ण विजय का केवल एक अंश है ।

'गुरुदेव ! नीति में आपसे विजय पाने वाला विश्व में अभी तक नहीं जन्मा है ।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने कहा 'किन्तु कल आपने स्वयं को जिस भय में डाल दिया था उसका ध्यान आते ही अब भी मेरा हृदय कांपता है । यदि किसी यूनानी का बाण लग जाता तो ।'

महामात्य चाणक्य मुस्कराये । 'नहीं, चपल ! यूनानियों पर उस ... आक्रमण की ... कर रहा हूं । वह तो मेरा कर्तव्य था, महामात्य ... रूप में नहीं अपितु एक भारतीय के नाते । देश के शत्रु को कुचलना

चन्द्रगुप्त क्षत्रिय का जितना कर्तव्य है, ब्राह्मण चाणक्य का भी उतना ही है।'

इसी समय एक सैनिक ने पास आकर कहा, 'भारत सम्राट् की जय हो ! यूनानी शहंशाह सैल्यूकस ने अपने दूत मैगेस्थनीज़ को सुलह की शर्तें मालूम करने के लिए भेजा है। वहाँ, पहाड़ी के नीचे दूत खड़ा है।'

महामात्य चाणक्य ने कुछ सोच कर कहा, 'मैगेस्थनीज़ को सम्मान के साथ ऊपर भेज दो, जाओ !' फिर सम्राट् चन्द्रगुप्त की ओर देख कर बोले, 'वृषल ! अब आया है ब्राह्मण चाणक्य की नीति का समय। मैगेस्थनीज़ के यहाँ पहुँचने से पहले दो एक बातें सुन लो। संधि का निर्णय यहाँ नहीं, पाटलिपुत्र में होगा। मैं मैगेस्थनीज़ को लेकर आज ही पाटलिपुत्र चला जाऊँगा।'

प्रसेनजित ने आश्चर्यचकित स्वर में कहा, 'पाटलिपुत्र में !'

महामात्य चाणक्य बोले, 'सम्राट् चन्द्रगुप्त आज का दिन और रात यहीं रहेंगे। आज रात्रि को यूनानी सैनिकों को एक भोज देना होगा। भारत के स्वादिष्ट पदार्थ उन्हें खिलाये जाएँगे। सम्राट् स्वयं सैल्यूकस के पास बैठेंगे। उन्हें अपना मित्र बनायेंगे। हेलेन से बातें करेंगे। और फिर कल यहाँ से पाटलिपुत्र के लिए प्रस्थान करेंगे।'

सम्राट चन्द्रगुप्त चुपचाप गुरुदेव का सदेश सुनते रहे। महामात्य चाणक्य ने फिर कहा, 'और सम्राट के चले जाने के बाद, जब तक मेरी और कोई आज्ञा न मिले, प्रसेनजित सेना को लेकर यहीं रहेंगे। सैल्यूकस और हेलन के लिए तक्षशिला के प्रासाद में प्रबंध होगा। दिन और रात उनके आमोद प्रमोद में एक पल के लिए भी कोई अन्तर नहीं आने दिया जाएगा।

तभी एक भारतीय सैनिक ने आगे बढ़ कर कहा, 'यूनानी राजदूत मैगेस्थनीज़ !'

महामात्य चाणक्य ने आगे बढ़ कर मैगेस्थनीज़ का हाथ थाम लिया और सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य की ओर संकेत करते हुए कहा 'भारत सम्राट् राजाधिराज ! चक्रवर्ती महान् मौर्याधिपति प्रजावत्सल महाराज चन्द्रगुप्त !

मैगेस्थनीज ने यूनानी ढंग से अभिवादन करने के बाद कहा 'भारत सम्राट् की जय हो। यूनान का मैगेस्थनीज उनके पावों की खाक अपने माथे पर लगाता है।'

सम्राट् चन्द्रगुप्त गम्भीर स्वर में बोले, 'यूनानी शहशाह सैल्यूकस के राजदूत की बात सुन कर हम प्रसन्न हुए। बाकी बातें हमारे महामात्य चाणक्य करेंगे।

राजदूत मैगेस्थनीज ने ध्यान से उस व्यक्ति की ओर देखा, जो नंगे सिर, केवल एक धोती, चादर और यज्ञोपवीत पहने खड़ा था, जिसे भारत सम्राट् ने अपना महामात्य कहा था और जो अब तक उसका हाथ पकड़े हुए था। मगेस्थनीज ने परिचय पाने के बाद उन्हें भी यूनानी ढंग से अभिवादन किया।

राजदूत मैगेस्थनीज !' महामात्य चाणक्य ने कहा, तुम सुलह की शर्तें पूछने के लिए यहाँ आए हो, किन्तु सुलह तो हो नहीं सकती।'

'नहीं हो सकती, वजीरे आजम !' मैगेस्थनीज ने चौंक कर पूछा।

सुलह होती है जीते हुए और हारे हुए में।' महामात्य चाणक्य ने गम्भीर स्वर में कहा, 'तुम हारे नहीं हो। तुम हमारे मेहमान हो। मैं भारत और यूनान को एक दूसरे का मित्र बनाना चाहता हूँ और उसके लिए तुम्हारी सहायता का प्रार्थी हूँ।'

मगेस्थनीज आश्चर्यपूर्ण मुस्कान के साथ बोला, हिन्दुस्तानी इतने बड़े दिल के होते हैं, यह मैं नहीं जानता था। वजीरे आजम, यूनान हिन्दुस्तान का दोस्त बनने में फख्र महसूस करेगा।'

महामात्य चाणक्य गंभीरता से बोले किन्तु मैत्री कैसे होगी ! इसका निर्णय युद्ध-स्थल पर नहीं हो सकता, मैगेस्थनीज ! इसके लिए मैं और तुम पाटलिपुत्र चलेंगे वहां शांति से बैठ कर सोचेंगे। तब तक यूनानी सेना भारतीय सेनापति प्रसेनजित की मेहमान रहेगी और यूनान का शहंशाह सैल्यूकस और उसकी बेटी कुमारी हेलन तक्षशिला के प्रासाद की।

मैगेस्थनीज ने खुशी के साथ पुकारा 'वजीरे आजम !'

आश्चर्य की कोई बात नहीं मैगस्थनीज !' महामात्य चाणक्य उसी गंभीरता के साथ बोले, भारत सिर्फ यूनान के साथ मैत्री चाहता है।

अब आप शहशाह सैल्यूकस के पास जाइए। उनसे मैत्री करने का पूर्ण अधिकार ले आइए और मेरे साथ पाटलिपुत्र चलने की तयारी कीजिए।'

राजदूत मैगेस्थनीज़ पहाडी से नीचे उतर गया।

उसके जाने के बाद महामात्य चाणक्य प्रसेनजित को सम्बोधित करते हुए बोले 'प्रसेनजित ! मेरा एक सेवक क्षपणक तुम्हारे आगार मे पड़ा है। उसे जाकर कहो, यहा से लेकर पाटलिपुत्र तक जिस मार्ग से मैं और मैगेस्थनीज़ जाएँ वहा भारत का वैभव भारत की शक्ति और भारत की सभ्यता अपने विशिष्ट रूप मे दिखाई दे। मैं इन यूनानियों की आँखो मे चकाचौंध पैदा करना चाहता हूँ।'

आदेश का पालन हुआ।

महामात्य चाणक्य और मैगेस्थनीज़ ने पाटलिपुत्र की ओर प्रस्थान किया।

पाटलिपुत्र मे मैगेस्थनीज़ को विशेष सम्मान मिला। उसने सोचा कि यह कितना विशाल देश है कितना वैभव है यहा पर कितने सभ्य हैं यहाँ के लोग, और यह ब्राह्मण चाणक्य, सादगी का अवतार कितना दूरदर्शी है ? इसकी बुद्धि की कोई थाह नही ।

तभी एक भारतीय सैनिक ने कक्ष मे प्रवेश करके कहा, 'महामात्य चाणक्य आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं अपनी कुटिया मे !

मैगस्थनीज चलने की तैयारी करता हुआ बोला, इतना बडा शहर, इतनी बडी सल्तनत का वज़ीरे आज़म एक झोपडी म ! अचम्भा ! घोर अचम्भा !!'

दोनो के बीच काफी बातचीत हुई। इस सधि का महत्त्वपूर्ण सूत्र सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य की इच्छा से सम्बंधित था। इसलिए महामात्य चाणक्य स्वय उनसे भेंट करने के लिए उनके प्रासाद मे पहुँच गए।

महाराज ने यथोचित सम्मान के बाद कहा, 'आज्ञा, गुरुदेव !'

'वृषल ! एक और विवाह हेलेन के साथ ! महामात्य चाणक्य ने गम्भीर होकर कहा।

गुरुदेव ! ऐसी आज्ञा न दीजिए।' सम्राट चन्द्रगुप्त ने विनम्र स्वर मे कहा।

महामात्य चाणक्य अपने आसन से उठते हुए बोले, 'वृपल ! यूनानी राजदूत के साथ यही निर्णय हुआ है। गांधार, हिरात, तक्षखण्ड और पारस के देश हमारे अधिकार मे रहेंगे। शहंशाह सैल्यूकस की पुत्री कुमारी हेलेन आपके साथ विवाह करेगी। इसके बाद यूनान और भारत सदा के लिए मैत्री के सूत्र मे बंध जायेंगे।'

'किन्तु छाया !' सम्राट चन्द्रगुप्त बोले, 'गुरुदेव ! छाया का क्या होगा ?'

'छाया !' महामात्य चाणक्य ने दुहराया 'उसका विवाह आपके साथ नही होगा।'

सम्राट चन्द्रगुप्त द्रवित हो उठे। बोले, 'गुरुदेव ! छाया रो रो कर प्राण दे देगी और आपका वृपल भी ।'

इतना कहते ही सम्राट् चन्द्रगुप्त के नेत्रो से अश्रु बहने लग गए।

महामात्य चाणक्य ने स्नेह भरा हाथ सम्राट चन्द्रगुप्त के कंधे पर रखा और गम्भीर स्वर मे बोले, 'वृपल ! युग-युग जिओ ! आप प्राणांत नही करोगे। और छाया भी नही मरेगी। इसके साथ ही एक बात याद रखो ! आप भारत सम्राट हैं साधारण मनुष्य नही। साधारण मनुष्य को अधिकार है कि वह जहा चाहे प्यार करे, जिससे चाहे विवाह करे, राजा को यह अधिकार नही, उसका जीना मरना प्रेम और विवाह करना, सब देश और प्रजा की भलाई के लिए होना चाहिए। आपके देश और आप की भलाई इस बात मे है कि आप हेलेन के साथ विवाह करें, छाया के साथ नही !'

सम्राट चन्द्रगुप्त आँसुओ को पीते हुए बोले, 'गुरुदेव मेरी छाया ।'

महामात्य चाणक्य ने सम्राट् चन्द्रगुप्त को आश्वस्त करते हुए कहा, 'वृपल ! धीरज रखो ! मैं छाया को लेकर आता हूँ।

इसके साथ ही महामात्य चाणक्य शीघ्रता से छाया के प्रासाद की ओर बढ़ गए। उस प्रासाद के द्वार पर उन्हे जीवसिद्धि मिला। आचार्य चाणक्य को देखते ही उसने कहा 'महामात्य की जय हो ! कुमार मलयकेतु अभी अभी साधु बनकर नगर से बाहर चले गए। वे हिमालय पर जायेंगे। शेष जीवन वही काटेंगे।'

'जीवसिद्ध ! इसके लिए तुम बधाई के पात्र हो।' महामात्य चाणक्य ने कहा, 'राजकुमारी छाया कहाँ है?'

'कक्ष में, अपनी वीणा के साथ!' जीवसिद्धि ने उत्तर दिया।

महामात्य चाणक्य ने प्रवेश करके देखा कि छाया की कोमल उँगलियाँ वीणा के तारों से खेल रही हैं। उसका चेहरा उतरा हुआ है।

कुछ क्षण तक उसकी अवस्था को निहारने के बाद उन्होंने पुकारा, 'छाया!'

वीणा के तार झंकृत होकर रुक गए। छाया ने चौंक कर महामात्य चाणक्य की ओर देखा। उठ कर उन्हें प्रणाम किया। नतमस्तक होकर विनम्र स्वर में बोली, 'पाटलिपुत्र के महामात्य यहाँ!'

आचार्य चाणक्य धीरे से उसकी ओर बढ़ते हुए बोले, 'हाँ, छाया! आज तुम्हारे सामने महामात्य नहीं, एक भिक्षुक आया है। उसको भिक्षा दोगी छाया! चन्द्रगुप्त को मेरी झोली में डाल दो, बेटी! उसे देश और प्रजा के लिए दान कर दो।'

छाया का चेहरा तमतमा उठा। वह क्रुद्ध सिंहनी की तरह गरजती हुई बोली, महामात्य!'

महामात्य चाणक्य वैसे ही स्थिर बने रहे। वे कुछ क्षणों के बाद शांति के स्वर में बोले, 'छाया! मैं जानता हूँ कि तुम चपल को प्यार करती हो। इतना प्यार, जितना आज तक किसी ने नहीं किया। आज उसी प्यार की याद दिलाने आया है, यह ब्राह्मण!'

'उस प्यार की याद दिलाना आवश्यक नहीं, महामात्य!' छाया ने गम्भीर होकर कहा, 'वह प्यार मेरा जुग जुग का साथी है। मेरे प्राणों का प्राण।'

'हाँ, जितने भी लोग प्यार करते हैं, वे यही समझते हैं।' महामात्य चाणक्य बोले, 'किंतु प्यार से किसी को नीचे गिरा देना और बात है। ऊपर उठा देना दूसरी बात।'

'आपको किसने कहा है कि मौर्य के लिए मेरे हृदय में जो प्यार है, वह उन्हें नीचे गिरा देगा?'

महामात्य चाणक्य एक चौकी पर बैठते हुए बोले, प्रभु करे, ऐसा

न हो ! किन्तु छाया जिससे हम प्यार करते हैं, उसे ऊपर उठाने और अमर बनाने का ही हम प्रयास करना चाहिए ।'

'महामात्य !' छाया ने आचार्य चाणक्य की ओर देखते हुए कहा, 'मैं आपका आशय नहीं समझी ।'

'छाया ! प्यार साधारण बात नहीं है । महामात्य चाणक्य ने कहा, 'किन्तु बहुत बडी बात भी नही है । यह मायावी जगत पुरुष और स्त्रियां प्यार से ही तो पैदा हुए हैं । हर युवा व्यक्ति और हर युवती प्यार करते हैं ।'

'आपका आशय ? छाया ने पूछा ।

ये लोग कीडो के समान पैदा होते हैं और वैसे ही मर जाते हैं ।' आचार्य चाणक्य ने गम्भीर होकर कहा, 'प्यार और विवाह उन्हें अमरत्व प्रदान नही करते छाया ! कर्तव्यपरायणता ही उन्हें ऊपर उठाती है । नाशवान को अमर बना देती है ।'

'प्यार में जो अमृत है, उसे आपने कभी अनुभव नही किया महामात्य !' छाया बोली ।

क्या है छाया ?' महामात्य चाणक्य बोले, 'इस मायावी जगत में जितने भी बडे आदमी हुए हैं । जिन्हें हम पूजा और श्रद्धा से स्मरण करते है, उनके प्यार और विवाह ने ही क्या उन्हें बडा बनाया है ? पुरुषोत्तम राम प्रातः स्मरणीय हैं, किन्तु इसलिए नही कि वे जनक नन्दनी से प्यार करते थे । योगीराज कृष्ण के लिए हम सबके हृदय मे श्रद्धा है किन्तु इसलिए नही कि उन्होंने रुक्मणी के साथ विवाह किया । धनुर्धारी अर्जुन की हम सभी प्रशंसा करते हैं किन्तु सुभद्रा का पति होने के कारण नहीं ।'

आपकी इन उक्तियों का मेरे पास कोई उत्तर नही, महामात्य ! छाया कह उठी आखिर आप चाहते क्या हैं ?'

छाया ! तुम्हारे लिए मेरे हृदय मे जो श्रद्धा है, वह कभी कम नहीं होगी । महामात्य चाणक्य ने कहा, मैं कुछ भी तुमसे छिपाऊँगा नहीं । हमारा राज्य नया है । विश्व भर में इसकी धाक बिठाने के लिए मैं चाहता हूँ कि यूनान की राजकुमारी हेलेन चपल के चरणों की दासी बन

जाए। यूनान का शहंशाह सेल्यूकस इसके लिए राजी हो गया है। राजकुमारी हेलेन ने भी अपनी स्वीकृति दे दी है। केवल वृपल नहीं मानते। वे केवल तुम्हारा नाम जप रहे हैं छाया! छाया! पुकारते उनकी जिह्वा नहीं थक रही है।'

इतना सुनते ही छाया शय्या पर पछाड खाकर गिर पडी। तकिए मे मुह छिपा कर सिसकती हुई बोली, 'महामात्य!'

आचार्य चाणक्य रुँधे स्वर में बोले यह रोने का समय नहीं है छाया! यह वह समय है जो मानव के जीवन में केवल एक ही बार आता है। यह तुम्हारे प्यार की परीक्षा का समय है। निर्णय करो तुम्हारा प्यार वृपल को कर्तव्य की राह से डिगा कर एक साधारण मानव बना देगा अथवा उन्हें दृढ करके एक महामानव। अब इसका निर्णय तुम्हारे हाथ में है वत्स!' इतना कहकर महामात्य चाणक्य खडे हो गए पुन बोले स्मरण रखो, तुम्हारा वृपल आज एक साधारण मानव नहीं है। वह भारत का हृदय है। उसके राष्ट्र का, उसकी प्रजा का उस पर अधिकार है। प्रजा को यह मत विचारने दो कि उसका राजा भी उसकी ही तरह एक साधारण मानव है। प्यार करता है और प्यार के उन्माद मे अपने होश खो देता है।'

छाया ने तकिए से सिर उठाया। उसकी आँखें सजल थी। अश्रु मिश्रित स्वर मे उसने कहा, महामात्य! अपने वृपल से जाकर कहिए कि छाया विवाह करने के लिए तैयार नहीं है।

बेटी!' आचार्य चाणक्य ने हाथ जोड कर कहा इस ब्राह्मण का सिर आज तक किसी के आगे नहीं झुका है, किन्तु आज यह तुम्हारे सामने झुकता है। यह आदर्श प्यार, यह आदर्श बलिदान, विश्व मे और कहाँ मिलेगा? मैं ब्राह्मण होकर तुम्हारे चरणो मे प्रणाम करता हूँ।'

इतना कह कर वे उसी स्थिति में नीचे झुक गए। फिर कुछ क्षणो के बाद उठकर बोले, मेरी बलिदानी बेटी! यदि यह बात मैं वृपल को कहूँगा, तो वे मानेंगे नहीं। तुम्हे अपना निर्णय स्वय ही उन्हें सुनाना होगा। आज वे तुम्हारे सिवा किसी की बात नहीं सुनेंगे। तुम्हारे प्यार मे वे पागल हो चुके हैं।'

छाया ने दोनो हाथो से चेहरे को छिपा कर रोते हुए कहा, 'हाय आय ।' और फिर हाथ उठा कर अश्रुपूण मुख से बोली, 'उन्हे यहां भेज दीजिए, महामात्य ! मेरे मन के चन्द्र को यहा भेज दीजिए । मैं ही उन्हें समझाऊंगी ।'

आचाय चाणक्य ने दोनो हाथ उठाकर आशीर्वाद देते हुए कहा, 'सुखी रहो बेटी ! आज से चन्द्रगुप्त के साथ साथ तुम्हारा नाम भी अमर होगा । भारत तुम पर गव करेगा । इस देश का ब्राह्मण तुम्हें आशीर्वाद देता है ।'

इसके साथ ही महामात्य चाणक्य कक्ष से बाहर निकल गए ।

उनके जाने के बाद छाया ने मुह धाया । फिर गम्भीर होकर सम्राट चन्द्रगुप्त की प्रतीक्षा म बैठ गई ।

कुछ ही दर मे सम्राट चन्द्रगप्त ने छाया के कक्ष मे प्रवेश किया, कहा, 'छाया ! गुरुदेव ।'

वे यहां आए थे ?' छाया गम्भीर होकर बोली, उन्होने कहा ही कहा है कि मैं आपके साथ विवाह नही करूंगी ।

इतना कह कर छाया ने मुह फेर लिया ।

'छाया !' सम्राट चन्द्रगुप्त क्रोध से चिल्ला उठे ।

मेरा निणय अटल है, मौय कुमार !' छाया ने दूसरी ओर मुह किए हुए ही कहा 'मैं आपके साथ विवाह नही करूगी । मुझ खुश दखना चाहते हैं, तो कुमारी हेलेन से विवाह कर लें ।'

चन्द्रगुप्त मौय न छाया के चेहरे को अपनी ओर करते हुए कहा, यह क्या छाया ? तुम तो रो रही हो ?'

दुःख होता है मौय कुमार !' छाया मद्धम स्वर मे बोली, राष्ट्र का हित जिस बात मे है प्रजा का कल्याण जिसम है हम वही करेंगे । मैं केवल एक स्त्री हू और आप केवल एक पुरुष । ऐसे करोड़ो स्त्री पुरुष इस राष्ट्र मे हैं । उन्हें स्वतन्त्रता के साथ प्रेम करने का अधिकार मिले । उनकी सतानो को गव के साथ भारतीय कहने का हक मिले, इसके लिए हम दोनो बलिदान देंगे ।

सम्राट चन्द्रगुप्त छाया के हाथों को अपने हाथों मे लेते हुए बोले,

'छाया।'

'मैं एक अबला होकर जो कुछ कर सकती हूँ, आप पुरुष होकर नहीं कर सकते?' छाया ने शांत होकर कहा, 'हमें बलिदान करना होगा।'

'यह बलिदान नहीं, छाया!' सम्राट् चन्द्रगुप्त ने उत्तर दिया, यह आत्महत्या है।'

'कायर बलिदान को इसी नाम से पुकारते हैं।' छाया ने सिर ऊंचा करके कहा, 'मुझे विश्वास है कि मेरा मौर्य कुमार कायर नहीं है। अब आप जाइये।'

सम्राट् चन्द्रगुप्त सिर झुका कर कक्ष से चले गए। छाया पछाड़ खाकर फर्श पर गिर पड़ी।

और उसी सन्ध्या को कुमारी हेलेन का सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के साथ विवाह हो गया।

पाटलिपुत्र नई दुल्हन की तरह सज उठी।

यूनान का शहंशाह सेल्यूकस मैगेस्थनीज को अपने राजदूत के रूप में पाटलिपुत्र में छोड़ कर, सेना के साथ यूनान लौट गया।

इकसठ

एक सन्ध्या को महामात्य चाणक्य अपनी कुटिया में बैठे थे। उनके सामने प्यारा शिष्य जीवसिद्धि बैठा हुआ था। कुटिया का द्वार था। वहां से कल-कल करता हुआ बहता जल देखा जा सकता था।

कुछ देर तक जल का मधुर गान सुनने के बाद महामात्य चाणक्य बोले, 'जीवसिद्धि! आज मेरा काम पूर्ण हुआ। आज भारत पूर्ण रूप से सुरक्षित है, सुसंगठित है, एक है और अब उसे यूनान का कोई भय नहीं है। यह शक्तिशाली राष्ट्र भी इसके चरणों पर आ गिरा है।'

'हाँ, गुरुदेव!' जीवसिद्धि बोला, 'आज सम्पूर्ण विश्व भारत की

नीतिज्ञता का सिक्का मान गया है और भारत की नीतिज्ञता गुरुदेव की नीतिज्ञता है।'

'वत्स ! तुम्हारे गुरु के हृदय मे जो दु ख है, उसे क्या कभी कोई समझ सकेगा ?' महामात्य चाणक्य ने दु खी मन से कहा, 'इतने वर्ष बीत गए, जीवसिद्धि ! माया की खोज के लिए क्या कुछ नही किया ? फिर भी मेरी माया का पता नही लग पाया। पता नही क्यो आज जब और कोई काम नही रहा, मुझे बारम्बार उस अबोध बालिका की याद आ रही है। वह बिन मा की बच्ची, पता नही कहाँ है। है भी या नही !'

इतना कहते ही उनकी आँखें नीर बहाने लग गई।

गुरुदेव !' जीवसिद्धि ने तत्काल उनके पास जाकर कहा। तभी बाहर किसी का मधुर कंठ फूट पडा — मेरा कहा गया घर बार—।'

महामात्य चाणक्य दु खी मन से सुनते रहे, फिर बोले, 'जीवसिद्धि ! तनिक देख तो सही कौन गा रहा है यह गीत ? इसने न जाने क्यों मेरे हृदय को उद्वेलित कर दिया है।'

अभी लीजिए गुरुदेव ! इतना कहकर जीवसिद्धि उठ गया।

गीत का स्वर अब भी महामात्य चाणक्य के कानो मे पड रहा था।

जीवसिद्धि ने बाहर से लौटकर कहा, एक भिखारिन बालिका है, गुरुदेव ! नाम है सुनेत्रा ! उसके साथ एक वृद्ध भिक्षुक दारुक है। आपको गीत सुनना हो तो उन्हे यहाँ ले आऊँ !'

'हाँ यहाँ ले आओ।' महामात्य चाणक्य के मुख से निकला।

जीवसिद्धि उस भिखारिन बालिका को बुलाने के लिए चला गया।

और जब भिखारिन बालिका सुनेत्रा कुटिया म आई, तो महामात्य चाणक्य न ध्यान से उसकी ओर देखा विशेषकर उसके दायें कपोल के दो काले तिलो को और चौंक कर खडे हो गए। शीघ्रता से बोले, 'तुम ! तुम कौन हो ?

भिखारिन बालिका भयभीत हो उठी। उसके मुख से कंपित स्वर मे निकला 'मेरा नाम सुनेत्रा है अन्नदाता !'

वृद्ध दारुक भी डरे हुए स्वर मे बोला 'यह मेरी बेटी है, अन्नदाता ! हम दोनो भिक्षा द्वारा पेट भरते हैं।'

महामात्य चाणक्य ने उस वृद्ध भिक्षुक की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। वे सुनेत्रा की ओर गौर से देखते हुए बोले, 'तुम्हारा और नाम भी है क्या ?'

भिखारिन बालिका ने कम्पित स्वर में कहा, मेरा, और नाम! और नाम क्या ?'

इसी समय कुटिया के बाहर कोलाहल सा हुआ। एक युवक ने भीतर प्रवेश करते हुए कहा, सुनेत्रा खतरे में है। मैं उसे बचाऊँगा तुम मुझे रोक नहीं सकते मैं उसे बचाऊँगा।'

महामात्य चाणक्य ने उस युवक की ओर देखकर कहा, 'शांत युवक!'

'सुनेत्रा को यहाँ कोई खतरा नहीं है! तुम क्या चाहते हो ?'

युवक ने आचार्य चाणक्य को गौर से देखा। चौंककर दो पग पीछे हट गया। फिर हाथ जोड़कर बोला 'आप, महामात्य! मैं नहीं जानता था कि यह आप की कुटिया है।'

महामात्य चाणक्य सुनकर कुछ नहीं बोले।

यह शांत देख उस युवक ने नतमस्तक होकर कहा महामात्य के चरणों में सेनाधिकारी बंधु का प्रणाम! यह बूढ़ा दारुक इस सुनेत्रा पर बहुत अत्याचार करता है। उससे भिक्षा मँगवाता है। सड़कों पर नचवाता है। और कोई अच्छा सा ग्राहक देखकर इसे बेच देना चाहता है।'

महामात्य चाणक्य बोले ओह! समझा! दारुक तो यह तुम्हारी बेटी नहीं है ?'

बूढ़ भिक्षुक दारुक ने भयभीत स्वर में कहा, 'आप आप चाणक्य हैं। आप यहाँ के महामात्य हैं। मैं आपके आगे झूठ नहीं बोलूँगा। सुनेत्रा मेरी बेटी नहीं है।'

आचार्य चाणक्य अब भी सुनेत्रा के दायें कपोल पर बने दो तिलों को देख रहे थे। सहसा गरज कर बोले, चुप नराधम! यह तुम्हारी बेटी नहीं है। चाणक्य के सामने झूठ बोलने का परिणाम क्या होता है, जानते हो ?'

बूढ़े दारुक ने हाथ जोड़ कर कहा, 'अन्नदाता!'

आचार्य चाणक्य बहुत शीघ्रता से सांस ले रहे थे। बोले, 'जीवसिद्धि

जाओ! महाराज को बुलाकर लाओ! मैं आज न्याय चाहता हूँ। मौर्य सम्राट के राज्य मे मुझे याय चाहिए!'

जीवसिद्धि तत्काल चला गया।

उसके जाने के बाद महामात्य चाणक्य गरज कर बोले, 'दारुक! अब भी समय है। सच सच बोल दो।'

बूढा दारुक गर्दन झुकाए चुपचाप खडा रहा।

और फिर महामात्य चाणक्य सुनेत्रा की ओर देखकर बोले, 'अब भी बोलो, बेटी! क्या कभी तुम्हारा नाम माया नही था! दिमाग पर जोर दो ।'

सुनेना ने महामात्य चाणक्य की आँखो मे देखते हुए कहा 'माया माया! ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह नाम मैने कही सपने म सुना है, अन्नदाता! किसी ने बडे प्यार से कहा था, माया!'

महामात्य चाणक्य ने उठ कर वृद्ध भिक्षुक दारुक के केश पकड लिए। उनकी बडी-बडी आखें शोले बरसाने लगी। वे गुस्से से चिल्लाकर बोल, 'बोल कमीने, यह लडकी कौन है?'

वृद्ध भिक्षुक दारुक का चेहरा भय से पीला पड गया था। हाथ जोड कर बोला 'क्षमा ! क्षमा करें अन्नदाता!'

महामात्य चाणक्य उसके केश छोड कर, धक्का देते हुए बोल, 'तब बोल बोल यह लडकी कौन है?

बूढे भिक्षुक दारुक ने सिर झुका कर कपित स्वर मे कहा, 'बहुत देर की बात है, महामात्य! स्वर्गीय महाराज पवतक के राज्य मे हरिपुर के पास एक पहाडी पर एक ब्राह्मण रहता था। यह सुनेत्रा उसी की बेटी है अन्नदाता!'

सुनकर आचाय चाणक्य पागल हो उठे। दोनो हाथो से चेहरे का ढकते हुए बोले, 'ओह दारुक! वह अभागा ब्राह्मण म हूँ, विष्णु गुप्त चाणक्य!

सुनेत्रा दौड कर आचाय चाणक्य से चिपक गई। रोती हुई बोली, 'पिताजी!'

आचाय चाणक्य की आखो से नीर बहने लग गया। सुनेत्रा को

अपनी छाती के साथ लगा कर, पागलो की तरह उसका सिर, हाथ और माथा चूमते हुए उन्होने कहा, 'बेटी मेरी बटी माया !' फिर छत की ओर देख कर बोले 'देवी ! तुम्हारी माया मिल गई। तुम्हारी लाडली मिल गई।' फिर सुनेत्रा को छाती से चिपटाते हुए बोले, 'मेरी भोली भाली माया ! तुम्हे कितना कष्ट हुआ ? तुमन कितने दु ख झेले ? मेरी बेटी हाकर तू गलिया बाजारो मे भीख मागती फिरी। इस विशाल साम्राज्य के महामात्य की बेटी को चौराहो पर अग प्रदशन करना पडा ।'

इसी समय सम्राट चन्द्रगुप्त ने शीघ्रता से कुटिया मे प्रवेश किया। बोले, गुरुदेव !'

आचाय चाणक्य पागलो की भाति जोश से बोले, 'मेरी बेटी माया मिल गई, वृपल !'

सम्राट च द्रगुप्त न एक बार सुनेत्रा की ओर देखा, फिर उसके चरणो मे गिरकर बोले, 'मेरी बहन !'

महामात्य चाणक्य ने सम्राट च द्रगुप्त को उठाते हुए कहा, 'उठो, वृपल ! इस अभागे व्यक्ति को देखो जिसने मेरी बेटी का हरण किया था !'

सम्राट च द्रगुप्त ने वृद्ध भिक्षुक दारूक की ओर देखा। वह फश पर गिरा पडा था। उसका चेहरा बिलकुल पीला पड गया था।

जीवसिद्धि ! सनिको को बुलाओ !' सम्राट च द्रगुप्त ने आदेश दिया, इसकी खाल को शिकारी कुत्तो से नुचवा दो।'

कि तु इससे पूव कि सैनिक भीतर प्रवेश करें, सुनेत्रा ने आचाय चाणक्य के पास जाकर कहा, 'पिताजी ! दारूक को क्षमा दान दे दीजिए। इसने अब तक मुझे पाला है।'

आचाय चाणक्य बटी के भोलेपन पर मुस्कराते हुए बोले, 'माया ! तुम्हारे पिता ने आज तक किसी को क्षमा नही किया, कि तु आज वह अपने सब से बडे विरोधी को क्षमा करेगा। जाओ, दारूक ! फौरन चले जाओ यहाँ से !

फिर सम्राट चद्रगुप्त की ओर देखकर बाले, 'वृपल ! अब मुझे छुट्टी दीजिए। मैं वापस जाऊँगा।'

सम्राट चन्द्रगुप्त असमंजस मे फँस कर बोले, 'गुरुदेव ! क्या कह रहे हैं आप ? छुट्टी... वापस ! हम समझे नही । आप कहा जाएँगे ?'

महामात्य चाणक्य बोले, 'वृषल ! स्नेहवश ऐसा कह रहे हो। मेरे रहने के लिए सारा देश पडा है । फिर ब्राह्मण का काम राज्य को बनाना है, उसे भोगना नही । देश को अब कोई भय नही रहा । सम्पूर्ण राज्य व्यवस्थित है । अब मै अपनी बेटी को लेकर जाऊंगा और इस बधु को भी... । इसके साथ माया का विवाह होगा ।'

सम्राट चन्द्रगुप्त विक्षिप्त मन से बोले, 'और हम, हम क्या करेंगे आपके बिना ? महर्षि कात्यायन और सुनन्दा वन मे वास कर रहे हैं । आप आज्ञा दें तो हम भी... ।'

'वृषल ! इस संसार से विरक्त न हो । बच्चो का ठीक प्रकार लालन पालन करो ।' आचार्य चाणक्य ने कहा, 'फिर भी कुछ जानना हो तो इस ग्रन्थ से जान लेना । मेरी अनुपस्थिति मे यह पुस्तक ही आपकी गुरु होगी ।'

इतना कह कर उन्होने एक चौकी पर रखे बडे ग्रंथ से कपडा हटा दिया । ग्रन्थ पर मोटे अक्षरो मे लिखा था— कौटिल्य अर्थशास्त्र ।

सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने श्रद्धा के साथ उसे उठाया । मस्तक से लगाने के बाद गुरुदेव के चरणो मे झुक गए ।

आचार्य चाणक्य उन्हें आशीर्वाद देने के बाद बोले, 'आओ बेटी ! आओ बधु ! अब हम प्रस्थान करेंगे ।'

इससे पहले कि सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य कुछ कहें आचार्य चाणक्य माया और बधु को लेकर कुटिया से निकल गए । उनका एक हाथ माया के कंधे पर था और दूसरा बधु के कंधे पर ।

कुटिया के बाहर अपार जन-समूह था । आचार्य चाणक्य किसी से बोले नही । वे गंगा तट की ओर बढते चले गए ।

सूर्य की अन्तिम किरणें गंगा जल पर पड रही थी । आचार्य चाणक्य उन दोनो के साथ बढते जा रहे थे ।

सम्राट चन्द्रगुप्त कुटिया के बाहर खडे खडे गुरुदेव को जाते हुए देख

रहे थे। फिर कुछ क्षण बाद, दोनो हाथ जोड़कर उस दिशा की ओर प्रणाम किया, जिधर आचार्य चाणक्य जा रहे थे। फिर कुटिया के आँगन की रज को उठाकर मस्तक से लगा लिया। अन्य उपस्थित जनों ने भी महाराज का अनुकरण किया।

और इसके बाद ही आचार्य चाणक्य माया और वधु के साथ आंखो से ओझल हो गए।

सम्राट चन्द्रगुप्त दुःखी मन से पाटलिपुत्र नगरी को लौट गए।

